प्रसिद्ध व्यापारिक

भारतीय लकड़ियाँ

और

उनके उपयोग

अर्थात्

"दी कॉमन कमर्शियल टिम्बर्स ऑव इण्डिया एण्ड देअर यूज़ेज़"

लेखक

एच० ट्रॉटर, आइ० एफ़० एस०

अनुवादक

एम० ए० रहमान, एम० एस-सी०, ए० आर० आइ० सी०

फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून
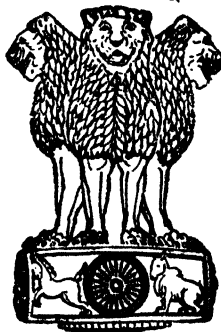
प्रकाशक

दी मैनेजर ऑव पब्लिकेशन्स, देहली

मुद्रक

श्री मुन्नूलाल श्रीवास्तव

(राजा) रामकुमार प्रेस

उत्तराधिकारी—नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ.

१९५५] **[मूल्य ४ रु० या ६ शि० ६ पेंस**

अशुद्धि सूची

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१६	सागून	सागोन
४	४	की	का
५	५	सागून	सागोन
७	१७,१९	सागून	सागोन
८	१	असावधानता	असावधानी
८	४,६,१०,१४	सागून	सागोन
१०	१६	प्रतिकूल	अनुकूल
१४	१९	क्लोरोजाइलन स्वेटोनिया	क्लोरोग्जिलन स्विटोनिया
१८	१४	Malaina	Gmelina
१९	६	नीम	बकायन
१९	६	Neem	Bakain
१९	१६	इल्पटिका	इलिप्टिका
२१	१	प्रतिकूल	अनुकूल
२१	११	एबीज पिन्ड्री	एबीज पिन्ड्रो
२२	२३	Terameles	Tetrameles
२३	१०	क्लिन	किल्न
२४	१,४,९,११, १३,१४,१७, १८,२०,२४	क्लिन	किल्न
२५	१२	५००	५०००
५३	९	ठीक	टीक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७६	१५	मौसम्र	मौसम
८५	५	चिटगाँव	चटगाँव
१०७	१२	Sisoo	Sissoo
१२१	१७	पौकिंग	पैकिंग
१२२	१८	पौकिंग	पैकिंग
१२३	४	Dyroxylum	Dysoxylum
१३६	२६	घुमे	घूमे
१३७	१२	(Heritiera fomes)	(Heritiera fomes or Heritiera minor)
१५१	२६	प्राप्य	प्राप्ति
१६०	६	लकड़ी मुख्य	लकड़ी की मुख्य
१६८	२१	परिवातत	परिवर्तित
१७६	५	वहूत	बहुत
१७६	२७	स्प्रस	स्प्रूस
१६२	२४	पपाता	पपीता
२१४	१३	घुमे	घूमे
२१८	१८	स्प्रस	स्प्रूस
२२२	१५	लेर्जस्ट्रोमिया	लेजरस्ट्रोमिया
२३३	१५	परिमाण	परिमित
२५२	२	स्प्रस	स्प्रूस
२५२	७	भेलिया	मेलिया
२५६	१०	वह	बृह
२५६	१०	अच्छा	अच्छी

भूमिका

लेखक की ओर से

गत वर्षों में भारत की विशाल वन सम्पत्ति के विषय में बहुत कुछ लिखा जा चुका है, किन्तु वास्तव में सागोन और ब्रह्मा, मद्रास तथा अंडमान की कतिपय लकड़ियों के अतिरिक्त देश से लकड़ियों का निर्यात प्राय नगण्य है। इसी प्रकार भारतीय व्यापारियों का भी ध्यान साल, सागोन और देवदार आदि कुछ प्रसिद्ध लकड़ियों पर ही केन्द्रित रहता है, जब कि स्थानीय कारीगरों का झुकाव भी सस्ती से सस्ती लकड़ी को उपयोग में लाने का होता है चाहे वह उस कार्य के उपयुक्त हो या न हो, जिसके लिये वह सोची गई है ।

प्रसिद्ध लकड़ियों के मूल्य दिन-प्रतिदिन बढ़ते जाने के कारण खरीदार असमंजस में पड़ गए, चूँकि सागोन का मूल्य इतना अधिक हो गया था जिसका कि १५ वर्ष पहले अनुमान भी नहीं हो सकता था। यहाँ तक कि लकड़ी के बड़े-बड़े प्रयोगकर्ता, रेलवे विभाग, सार्वजनिक निर्माण विभाग तथा ऑर्डनेन्स विभाग भी इस स्थिति से चिन्तातुर हुए। इस चिन्ताजनक स्थिति के कारण रेलवे बोर्ड ने सन् १९२४ में इस बात का अन्वेषण आरम्भ किया कि रेल गाड़ियों के लिए सागोन के स्थान पर कोई और लकड़ी उपयुक्त हो सकती है या नहीं। इसका परिणाम श्री एच० जी० नारमन ह्वाइट की रिपोर्ट से लगाया जा सकता है जो अवध रुहेलखण्ड (सम्प्रति ईस्ट इण्डियन रेलवे) प्रेस लखनऊ द्वारा फरवरी सन् १९२५ में प्रकाशित हुई।

यह रिपोर्ट रेलवे बोर्ड का निजी प्रकाशन होने के कारण उसकी प्रति साधारणतया जनता को प्रायः प्राप्य नहीं थी । अतएव विचार किया

गया कि फ़ॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट की ओर से वैसी ही एक पुस्तिका प्रकाशित की जाये जिसमें केवल रेलवे में काम आनेवाली लकड़ियों का ही नहीं किन्तु उन लकड़ियों का भी जो कि व्यापारियों के छोटे बड़े सब कामों के लिये उपयुक्त हैं वर्णन भी हो।

यही इस पुस्तक के लिखने का लक्ष्य है।

इस के साथ २ यह भी अनुभव किया गया कि काष्ठ सम्बन्धी वैज्ञानिक साहित्य जो समय समय पर फ़ॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट से प्रकाशित हुआ है सर्व साधारण को कदाचित ही आकर्षित करता है और लकड़ी के व्यापारियों द्वारा भी बहुत कम पढ़ा जाता है। इस लिये प्रस्तुत पुस्तक को यथोचित सरल बनाने का सर्वथा प्रयत्न किया गया है। आशा है कि इससे सभी व्यापारिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो सकेगी।

इस सम्बंध में यह भी प्रकट कर देना उचित है कि सन् १९२२ में श्री आर० एस० पियर्सन तात्कालिक वन अर्थ शास्त्री ने भी इसी प्रकार "ए कमर्शियल गाइड टू दी फॉरेस्ट एकोनोमिक प्रॉडक्टस् आव इन्डिया" नाम की एक छोटी सी पुस्तक प्रकाशित की थी जो व्यापारिक क्षेत्रों में तो अधिक प्रसिद्धि पा ही गई साथ ही उन सज्जनों के लिये भी लाभदायक सिद्ध हुई जो इस विषय से थोड़ा बहुत परिचित थे। तब से लेकर अब तक कई वर्ष व्यतीत हो चुके हैं और इस समय तक जो भी खोज की जा चुकी है वह इस पुस्तक के रूप में जनता के सामने रखी जा रही है।

इस पुस्तक के पठन से पहले यह सूचित कर देना आवश्यक है कि भारत की अप्रसिद्ध लकड़ियों के प्रयोग में जो कठिनाइयाँ आई हैं वे केवल अशुष्क लकड़ी प्रयोग करने के कारण थीं और लकड़ियों के उपयोग से पहले उनको सुखा लेना महत्त्वपूर्ण है।

इस पुस्तक में एक अलग अध्याय लकड़ी के भली प्रकार हवा में सुखाने के विषय में लिखा गया है। यदि लकड़ी को पुराने ढंग से सुखाये जाने

के तरीकों को हटा देने और नया, सरल और सस्ता ढंग अपनाने की समझ जनता में आ गयी तो मैं समझूँगा कि इस पुस्तक के लिखने में जो परिश्रम मैंने उठाया है, वह सफल रहा।

अंत में जनता का ध्यान इस ओर आकर्षित कराया जाता है कि बन अनुसंधानशाला, देहरादून की संस्था संसार भर की किसी ऐसी संस्था से कम नहीं है। हर प्रकार की जानकारी के लिये इस संस्था को लिखिए!

एच० ट्रॉटर
युटिलाइजेशन अफसर

देहरादून

भूमिका

अनुवादक की ओर से

वन अनुसंधानशाला में प्रवेश के समय (१९३१) से ही मेरा यह विचार रहा है कि कम से कम उन पुस्तकों का, जिनका सम्बंध जनसाधारण से है, अपने देश की भाषा में अनुवाद किया जाय। परन्तु वर्षों तक मुझे अपने इस विचार को कार्यान्वित करने का अवसर प्राप्त न हो सका। द्वितीय महायुद्ध के समय में कारखानों के प्रबन्धकर्ता अधिकारी एवं अध्यक्ष प्रायः मेरे पास आये, जिनमें से बहुधा अंग्रेज़ी भाषा से अनभिज्ञ थे। परन्तु जब मैंने उन सज्जनों को उनकी आवश्यकता के अनुसार देशी भाषा में समझाया तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। अतएव द्वितीय महायुद्ध के समाप्त होते ही १९४६ में, मैंने "दी कॉमन कमर्शियल टिम्बर्स ऑव इण्डिया एण्ड देअर यूज़ेज़" का उर्दू और हिन्दी भाषा में अनुवाद करने का निश्चय किया। पहले मैंने उर्दू भाषा में अनुवाद किया जो छपकर पूर्ण हो गया तत्पश्चात् हिन्दी में भी इसका अनुवाद किया गया, किन्तु इसी बीच राष्ट्रभाषा हिन्दी हो जाने के कारण उस हिन्दी अनुवाद में संशोधन करना आवश्यक हो गया। इस कार्य में श्री नत्थूलाल पाली प्रूफ रीडर, पब्लिसिटी ब्रान्च और उड सीज़निंग ब्रान्च के उन कर्मचारियों का, जिनसे इसमें सहायता मिली, मैं बहुत आभारी हूँ।

आशा है कि यह पुस्तक जनसाधारण में और विशेषकर काष्ठ-व्यापारियों में लोकप्रिय सिद्ध होगी।

मैं उन सज्जनों का बहुत आभारी हूँगा, जो इस पुस्तक को पढ़कर अपने उचित विचार और उत्तम सम्मति द्वारा इसकी उपयोगिता बढ़ाने में सहायता प्रदान करेंगे।

देहरादून
जनवरी, १९५२

एम० ए० रहमान
अफसर इंचार्ज
उड सीज़निंग ब्रान्च

सूचना

फ़ॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट के कार्यालय में बहुधा अंग्रेज़ी भाषा में लिखे हुए अशुद्ध पत्र प्राप्त होते हैं, जिससे लिखनेवालों की अंग्रेज़ी भाषा के सम्बन्ध में अज्ञानता तथा विवशता का पता चलता है।

ऐसे मनुष्यों की संख्या भी अधिक है जो बहुत समय से लकड़ी के उद्योगी कार्यों में लगे हुए हैं, परन्तु अंग्रेज़ी भाषा न जानने के कारण ये फ़ॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून के लाभदायक साहित्य से लाभ नहीं उठा सकते। अतः उन मनुष्यों से प्रार्थना की जाती है कि यदि वे अंग्रेज़ी में पत्र-व्यवहार करने में असमर्थ हैं तो विना किसी संकोच के हिन्दी-भाषा में ही निम्न-लिखित पते पर जो सूचना प्राप्त करना चाहें, कर सकते हैं।

सीज़निंग ब्रांच, फ़ॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट,

न्यू फ़ॉरेस्ट, देहरादून

(प्रेज़ीडेन्ट एफ़. आर. आई. देहरादून की आज्ञा से)

विषय-सूची

पृष्ठ-संख्या

पहला अध्याय

दूसरा अध्याय

तीसरा अध्याय

चौथा अध्याय

पाँचवाँ अध्याय

पृष्ठ-संख्या

पृष्ठ-संख्या

पृष्ठ-संख्या

पृष्ठ-संख्या

पृष्ठ-संख्या

छठा अध्याय

विभिन्न कार्यों के लिए उपयुक्त लकड़ियाँ

पृष्ठ-संख्या

चित्रों की सूची

स्पष्टीकरण

इस किताब में लकड़ी के सम्बन्ध में अँगरेज़ी नामों के नीचे दिये हुए अनुवाद किये गये हैं:—

Scientific Name—(वैज्ञानिक नाम) जो लकड़ियों के वर्णन में सबसे ऊपर लिखा गया है।

Trade Name—(तिजारती नाम) जो लकड़ी के कारबार करनेवाले लोगों में इस्तेमाल होता है।

Vernacular Name—(देसी नाम) जिस नाम से लकड़ी को वहाँ के लोग जानते हैं।

Weight—(वज़न) याने हवा में सुखाये जाने के बाद लगभग १२ प्रतिशत नमी के साथ जो कुछ वज़न लकड़ी का हो।

Heartwood—अन्दरूनी पक्की लकड़ी।

Sapwood—कच्ची लकड़ी।

Sapstains or fungus—कच्ची लकड़ी के धब्बे या कुकुरमुत्ता।

Annual rings—लकड़ी के बढ़ोतरी के जो सालाना निशान तने में पड़ जाते हैं।

Interlocked fibres—गुथे हुए रेशे।

Conversion—लकड़ी की चिराई-कटाई।

Wood Preservation—मसालों द्वारा लकड़ी की सुरक्षा।

Durability—पायदारी या टिकाऊपन।

Uses—प्रयोग (इस्तेमाल)।

Strength—मज़बूती।

Furniture—फ़र्नीचर।

Sources of supply—मिलने का स्थान।

Working qualities—लकड़ी की औज़ारों से अनुकूलता।

Packing box—(पैकिंग बक्स) सामान भरने की पेटियाँ।

Plywood—(प्लाईउड) लकड़ी को बारीक तहों में छालकर और एक दूसरे से चिपकाकर लकड़ी बनाना।

Supply—मिलना या हासिल होना।

नोटः—इस किताब में विभिन्न लकड़ियों की क़ीमतों का जो तख़मीना (सूची) दिया गया है वह सब लड़ाई से पहले की क़ीमतें हैं। आजकल भाव चढ़ा हुआ है।

Graveyard-Test—'क़ब्रिस्तानी प्रयोग'—अर्थात् लकड़ियों को ज़मीन में गाड़कर उसकी पायदारी की परीक्षा करना।

———
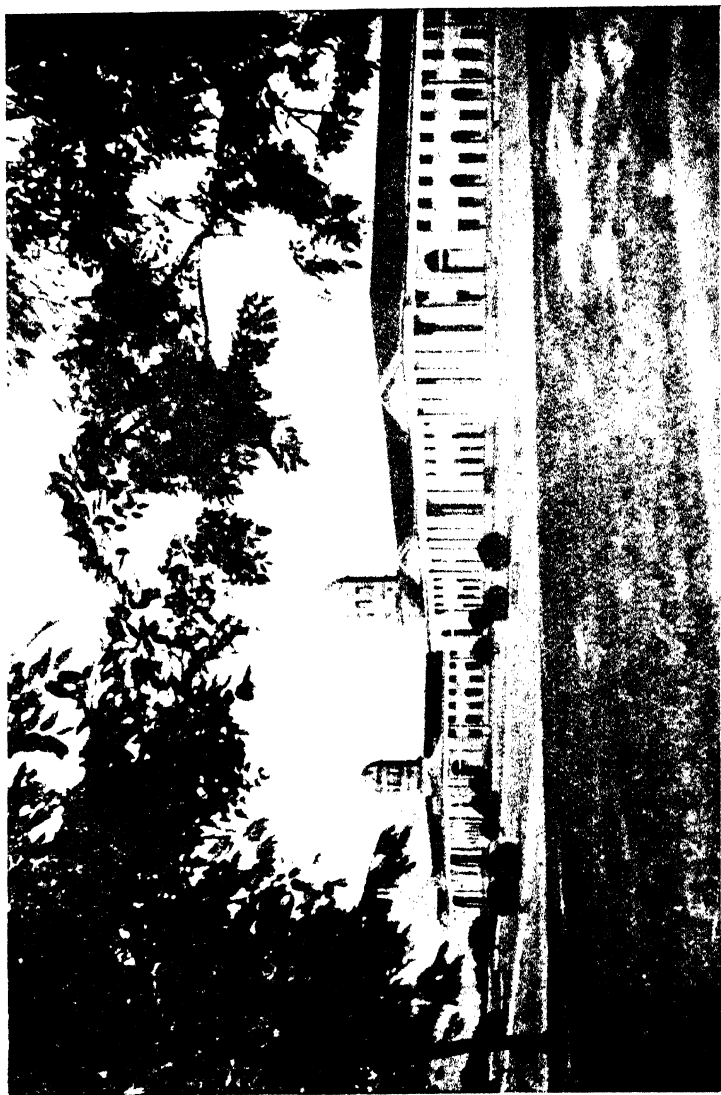
फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट देहरादून

पहला अध्याय

लट्ठों का रख-रखाव और उनकी प्रारम्भिक सुखाई

लकड़ी का कारबार करनेवाले लोग लकड़ी को बहुधा लट्ठों की हालत में खरीदते हैं इसलिये आवश्यक है कि लट्ठों के चिराई से पहले रख-रखाव और सुरक्षा के बारे में कुछ बातें बताई जायँ। लोग ऐसा समझते रहे हैं कि लकड़ी लट्ठों की दशा में भी उतनी जल्दी और सरलता से सुखाई जा सकती है जैसी कि तख़्तों और वर्गों की सूरत में, ऐसा नहीं है। लकड़ी तख़्तों और वर्गों की सूरत में हमेशा जल्दी सूखती है और खराबी व नुक़सान से बचती है, क्योंकि लट्ठों की हालत में बाहर की लकड़ी अधिक सूख जाने और अन्दर की गीली रह जाने से लट्ठे बाहर से फट जाते हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें कीड़े और घुन लगने का भय भी अधिक होता है। लट्ठों की शक्ल में सुखाई धीरे-धीरे होती है और अनुभव से मालूम हुआ है कि कुछ लकड़ियों के लट्ठे ८-१० वर्ष बाद भी अन्दर से उतने ही गीले निकले जितने कि वे पेड़ के कटने के समय थे। यद्यपि वे बाहर से इतने सूख चुके थे कि लकड़ी में जगह-जगह से फटकर दरज़ पैदा हो गई थी। लट्ठों की हालत में यह खराबियाँ सागून और दो एक ऐसी ही लकड़ियों को छोड़कर क़रीब-क़रीब सबमें पैदा होती है। लेकिन लकड़ी के व्यापारी इस बात को नहीं समझते और जब वे उन लट्ठों को, जिन्हें वे कई-कई वर्ष बाद अपने विचार से बिलकुल सूखा समझते हैं, चिरवाते हैं तो उनके तख़्तों को बाद में फटते और ऐंठते हुए देखकर दंग रह जाते हैं और जब उन्हें यह बताया जाय कि इन खराबियों का कारण यह था कि तुम्हारे लट्ठे

अन्दर से बिलकुल गीले थे तो उन्हें और भी आश्चर्य होता है।

फिर भी यह सम्भव है कि अगर लट्ठों को इस प्रकार रखा जाय कि वे बाहर से जल्दी सूखने न पायें तो ये खराबियाँ बहुत कुछ रोकी जा सकती हैं और इस तरह रोकने से उनकी चिराई में बहुत आसानी होती है। इसलिये सबसे अच्छा कौन-सा तरीक़ा लट्ठों का रोकने का हो सकता है, जिसके द्वारा वह बाहर से एकदम सूखने न पाये और इस तरह रोकने का फ़ायदा भी उन्हें हो सके। सबसे अच्छा तरीक़ा यह है कि उन्हें पानी के अन्दर डुबा के रखा जाय। पानी में रहने से लट्ठे बाहर से तर रहते हैं और सूखने, तड़कने नहीं पाते। यह भी फ़ायदा पहुँचता है कि पानी में लकड़ी की वह वस्तुएँ (गोंद और शकर वग़ैरह), जो चिराई में कठिनाई पैदा करती हैं, धीरे-धीरे घुल जाती हैं। इसके अतिरिक्त पानी में लकड़ी को कीड़े इत्यादि का भय भी नहीं होता। परन्तु लट्ठों को पानी में पूरी तरह डुबाकर रखना चाहिये। अगर उनका कोई भाग पानी के बाहर निकला रहेगा तो उतना भाग जल्दी सूखकर जगह-जगह से फटने लगेगा। पानी का भी ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये कि या तो बहता हुआ पानी हो और अगर रुका हुआ पानी हो तो उसे जल्दी जल्दी बदलने का प्रबन्ध रखना चाहिये जिससे पानी ताज़ा रहे और लकड़ी से निकले हुए गोंद, शकर और रंगवाली वस्तुओं के साथ मिलकर सड़ न जाय, जिससे लकड़ी को कीड़ा लगने का डर हो। खारी समुद्र के पानी में भी लकड़ी को अधिक समय तक रखने से समुद्री कीड़ा लगने का भय होता है। यह बात दिलचस्पी से रहित न होगी कि फारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट के टैंक (तालाब) में बीस वर्ष से अधिक अवधि के अनुभवों में हज़ारों लट्ठों में से कोई एक भी गलने-सड़ने या खराब होने नहीं पाया। यद्यपि कुछ लट्ठों को पूरे दस-बारह वर्ष तक पानी में रहना पड़ा।

चित्र—1
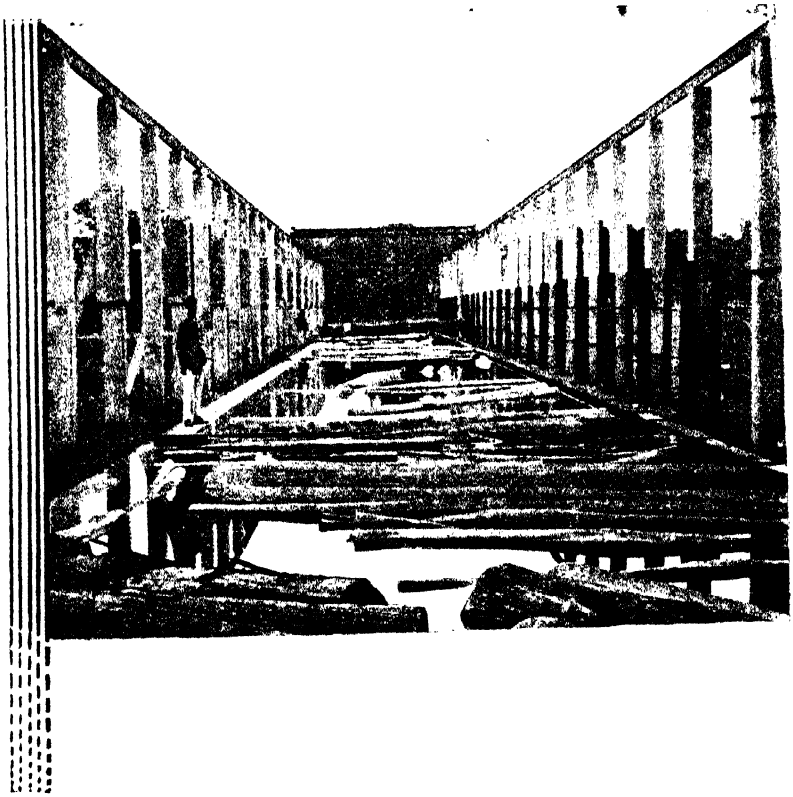
काष्ठताल, फ़ॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट

इसलिये लट्ठों को जमा रखने के लिये एक अच्छा तालाब बनवा लेना आवश्यक है और कुछ खास तरह की लकड़ियों के लिये तो उनके लट्ठों को चिराई से पहले पानी में डुबाकर रखना ही उनको सुरक्षित रखने का ठीक तरीक़ा है। जैसे टर्मिनालियाँ टोमेन्टोसा (लारेल) और इस प्रकार की दूसरी लकड़ियाँ अगर कुछ हफ़्ते भी धूप में छोड़ दी जायँ तो फटकर बेकार हो जाती हैं। पानी में रखने से इनके लट्ठे चिराई के समय तक बिलकुल ठीक और अच्छे रहते हैं और सुरक्षित दशा में कारखानों तक पहुँचाये जा सकते हैं। इसलिये जिन लोगों को सख्त क़िस्म की लकड़ियों के लट्ठों को बहुत दिनों तक रोकना हो तो उन्हें चाहिये कि उनको ख़राबी से बचाने के लिये एक अच्छा तालाब अवश्य बनवाएँ जिसकी बनवाई का ख़र्च यद्यपि उन्हें उस समय बुरा लगेगा परन्तु उससे जितना लाभ उनको पहुँचेगा उसे देखकर वे खुश हो जायँगे और उन्हें ख़र्चे से अधिक लाभ होगा।

लेकिन अगर किसी कारण तालाब बनवाने का प्रबन्ध न हो सके तो कम-से-कम लट्ठों को घनी छाया ही में रखने का बन्दोबस्त कर दिया जाय और घास-फूस के छप्पर के नीचे उन्हें जमा करा दिया जाय या पेड़ के पत्तों और घास इत्यादि से उन्हें अच्छी तरह ढक दिया जाय जिससे वे तेज़ धूप और सूर्य की सीधी किरणों से बच सकें, और जब वहाँ लट्ठों को बहुत दिन तक रखना हो तो आवश्यक है कि उन्हें ज़मीन से कुछ ऊँचा रखा जाय नहीं तो दीमक इत्यादि के लगने का भय होगा। इसके अतिरिक्त केवल उन लकड़ियों के जो अधिक फटनेवाली हों, लट्ठों की छाल भी उतार देनी चाहिये। इस बात को समझ लेना चाहिये कि यद्यपि छाल से लट्ठों का गर्मी और खुश्की से कुछ बचाव ज़रूर होता है मगर इसके साथ ही साथ छाल के कारण लकड़ी को कीड़ा जल्दी लगता है।

इसके अतिरिक्त यह कि लट्ठों को सिरों पर फटने से रोकने के

लिये उनके सिरों को कोई मसाला या पेन्ट लगा देना अच्छा है जो वहाँ से नमी को जल्दी न निकलने दे। इस बात के लिये सबसे अच्छा मसाला हार्डेन्ड ग्लास आयल* (Hardened Gloss Oil) है। लेकिन सीसे को पेन्ट याना (White Lead Paint) जिसे सफ़ेदा भी कहते हैं और कोलतार इत्यादि भी इस काम के लिये उपयुक्त हैं। जब कोई चीज़ भी सम्भव न हो तो केवल गोबर और मिट्टी से सिरों को लीप देना भी बहुत कुछ रक्षा करता है। इस प्रकार अगर लट्ठों के सिरों पर से फटने की रोकथाम कर ली जाय तो चिराई के समय बहुत सी लकड़ी बरबाद होने से बच जाती है।

लट्ठों की चिराई में जल्दी

ऊपर बताई हुई हिदायतें उस समय के लिये हैं जब लट्ठों को अधिक दिनों तक रखना आवश्यक हो, नहीं तो ध्यान रखना चाहिये कि लट्ठों को जल्दी चिरवाना ही अच्छा होता है। क्योंकि हिन्दुस्थान के विभिन्न भागों में जो अनुभव लकड़ी को हवा में सुखाये जाने के संबंध में किये गये, उनसे यही साबित हुआ है कि लट्ठों को जल्दी चिरवा देने से लकड़ी सरलता से और बिना किसी हानि के सूखती है। कठोर क़िस्म की लकड़ियों को बरसात यानी तर मौसम में कटवाना और चिरवाना अच्छा है। इस समय हवा में नमी होती है और गर्म व ख़ुश्क मौसम आने से पहले लकड़ी को धीरे-धीरे सूखने के लिये जाड़े के कई महीने मिल जाते हैं। इस प्रकार लकड़ी फटने और ख़राब होने से बच जाती है।

नर्म प्रकार की कमज़ोर लकड़ियों को बरसात के बीतने पर चिरवाना अच्छा होता है जिससे चिराई के बाद लकड़ी जल्दी सूख जाय।

---

* यह मसाला शालीमार पेन्ट कलकत्ता से मिल सकता है।
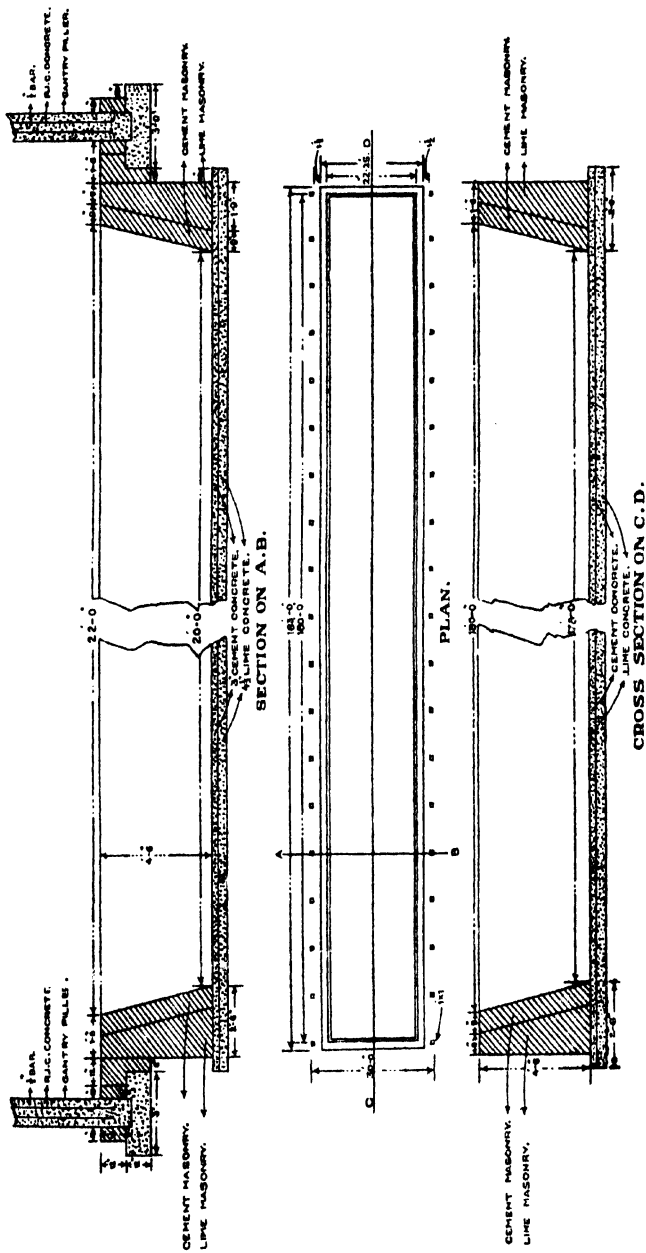
F. R. I. Debra Dun.

Detail drawing of a log pond found suitable for Indian conditions.

No. 889

DRAWN BY.

भारत की जलवायु के अनुकूल काष्ठताल का एक मानचित्र

गर्डलिंग

(या पेड़ की जड़ के समीप तने पर गोल घेरा काटना)

पेड़ की जड़ के समीप ज़मीन से डेढ़ या दो फ़ीट की ऊँचाई पर तने के चारों ओर ६ इंच चौड़ा २ इंच गहरा एक घेरा काटते हैं, जिससे छाल और कच्ची लकड़ी द्वारा पेड़ को जो भोजन ज़मीन से मिलता है, उसका क्रम टूट जाता है। इस प्रकार भोजन न मिलने से पेड़ धीरे-धीरे सूखने और मरने लगता है। बर्मा के सागून के जंगलों में यह तरीक़ा आम तौर से काम में लाया जाता है। ऐसा करने से दो तीन साल के अन्दर पेड़ की लकड़ी हल्की होकर इस योग्य हो जाती है कि उसके लट्ठे नदियों में बहाकर बन्दरगाहों तक लाये जा सकें।

परन्तु यह तरीक़ा हर प्रकार की लकड़ी के लिये काम में नहीं लाया जा सकता। क्योंकि कुछ लकड़ियाँ ऐसा करने से सूख-साखकर इतनी कमज़ोर हो जाती हैं कि पेड़ को जब ज़मीन पर गिराया जाता है तो उसके टुकड़े उड़ जाते हैं। कुछ पेड़ों पर यह प्रयोग करने से कीड़ा लग जाने का भी डर रहता है, फिर भी उन कठोर किस्म की लकड़ियों के लिये यह तरीक़ा अच्छा है जिनको जंगल से निकलने के बाद जल्दी काम में लाया जाता हो और जो अधिकतर शहतीरों और मोटे वर्गों के साइज़ में काम आती हों जैसे रेलवे स्लीपर इत्यादि।

इस बात की पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिये कि किन लकड़ियों के लिये गर्डलिंग उपयुक्त है और किनके लिये नहीं फारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट देहरादून को लिखना चाहिये।

वर्गों की शक्ल में सुखाई

अनुभवों से यह पता चला है कि अधिक कठोर किस्म की

लकड़ियों को जो फटने-तड़कने और ऐंठनेवाली हों, चिराई से पहले कुछ समय तक मोटे वर्गों की सूरत में सुखा लेना चाहिये। उसके बाद पतले साइज़ में कटवाकर सुखाना अच्छा होगा। ऐसा करने से उनकी बुराइयाँ बहुत हद तक दूर हो जाती हैं। नीचे लिखी हुई लकड़ियों पर इस प्रकार सफलता प्राप्त हुई है:—

(१) शीमा वालीशाई needle wood (Schima Wallichii)

(२) क्विरकस लीनएटा Indian oak (Quercus Lineata)

(३) क्विरकस लेमेलोसा Indian oak (Quercus Lamellosa)

(४) एनोगाइसिस लेटीफोलिया Bakli, Dhaura, (Anogeissus Latifolia)

इस प्रकार सुखाने में समय अवश्य कुछ अधिक लगता है परन्तु इससे जो लाभ होता है वह इस देरी की तुलना में कहीं अधिक है।

लकड़ी को नमक लगाना

कुछ अधिक कठोर क़िस्म की लकड़ियों को चिराई के बाद नमक के पानी में डुबाकर सूखने के लिए रखना लाभदायक है। ऐसा करने से लकड़ी में बाहर की तरफ़ सब जगह नमक सोख जाता है। नमक के होने से लकड़ी की बाहरी सतहों में नमी बनी रहती है। इस तरह लकड़ी धीरे-धीरे सूखती और फटने-ऐंठने गढ़े पड़ने से बची रहती है।

इस ओर जो अनुभव यहाँ प्राप्त किये गये हैं उनसे साबित हुआ है कि अगर लकड़ी को नमक के पानी में खूब पकाकर १२ से १८ घंटे तक उसी पानी में ठण्ढा होने दिया जाय और फिर निकाल कर सूखने के लिये रख दें तो यह और भी अच्छा है।

चूँकि इस दशा में नमक अधिक मात्रा में सोखा जा सकता है इसलिये परिणाम और अधिक अच्छा होता है।

इस तरीक़े से कठोर क़िस्म की लकड़ियों के बड़े-बड़े कुन्दे बहुत अच्छी तरह सुखाये जा सकते हैं, और साल, बबूल व शीशम इत्यादि को जब बड़े कामों में इस्तेमाल करना हो तो लकड़ी को फटने और चिटकने से रोका जा सकता है।

इस अभिप्राय के लिए साधारण नमक के अतिरिक्त और भी कई नमक काम में लाए जाते हैं।

दूसरा अध्याय

लकड़ी को हवा में सुखाना या लकड़ी की प्राकृतिक सुखाई

यह जानना चाहिये कि लकड़ी के संबंध में सबसे आवश्यक बात उसको उचित रूप से सुखाना है। दुर्भाग्य से हमारे देश में इसी आवश्यक बात पर ध्यान नहीं दिया गया है, जिसका फल यह हुआ है कि हिन्दुस्तान की बहुत-सी उत्तम लकड़ियाँ भी ग़लत तौर से फटने-तड़कने और ऐंठनेवाली प्रसिद्ध हो गई हैं, और केवल बर्मा की सागून लकड़ी को ही अच्छा समझा जाता है। इसकी असलियत यह है कि जैसा पिछले अध्याय में बताया जा चुका है, सागून की लकड़ी बर्मा से एक दो साल की गर्डलिंग के बाद चलती है और हिन्दुस्तान पहुँचते-पहुँचते और काम में लाये जाने तक वह खूब सूख जाती है। यदि दूसरी लकड़ियाँ भी इतनी ही देर से काम में लाई जायँ तो वे भी बहुत अंश तक इस्तेमाल के योग्य हो सकती हैं। लेकिन दूसरी लकड़ियों पर न तो गर्डलिंग की जाती है और न किसी दूसरे प्रकार से उनकी रक्षा

की जाती है। उनके लट्ठे जंगल से आते ही असावधानता के साथ चिराई के लिये भेज दिये जाते हैं। उस समय वे बिलकुल गीले ही होते हैं जिस कारण सूर्य की गरमी और गर्म हवा के लगते ही उनका फटना और चिटकना साधारण सी बात है। यदि सागून की लकड़ी के साथ भी इतनी ही असावधानता बर्ती जाय तो उसका भी यही हाल हो। सागून में एक यह विशेषता अवश्य है कि वह सिकुड़ती और फैलती कम है और उस पर मौसम का बहुत कम असर पड़ता है। इसी कारण वह विशेष रूप से पसन्द की जाती है। लकड़ी का सिकुड़ना और फैलना उसके वज़न के घटने बढ़ने से भी प्रकट होता है। सागून अपना एक सा वज़न रखने के लिये प्रसिद्ध है। उसकी प्राकृतिक चिकनाहट से उसमें नमी का गहरा असर नहीं होता। इसी कारण उस पर तर मौसम का असर दूसरी लकड़ियों की अपेक्षा बहुत कम होता है। इसके अतिरिक्त सागून और कई दूसरी उत्तम लकड़ियाँ (साल को छोड़कर) सरलता से हवा में सूख जानेवाली हैं। परन्तु दूसरी लकड़ियाँ आसानी से नहीं सूखतीं। यही कारण है कि अब तक वे उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकीं। फिर भी इतना अधिक दोष लकड़ी पर नहीं रखा जा सकता। यदि उसे काम में लाने से पहले अच्छी तरह सुखा लिया जाय तो यह दोष मिट सकता है। इस अध्याय में हम यही बतायेंगे कि लकड़ियों को नियमानुसार कैसे सुखाया जाय, जिससे बहुत सी वे लकड़ियाँ भी साधारण और घटिया क़िस्म की समझी जाती हैं, बहुत से अच्छे कामों में कुछ अच्छी क़िस्म की लकड़ियों से अच्छी साबित हों, और उन पर खर्चा भी कम आये।

लकड़ी को हवा में सुखाने के बारे में सबसे पहले दो बातों पर ध्यान देना चाहिए:—

चित्र—२
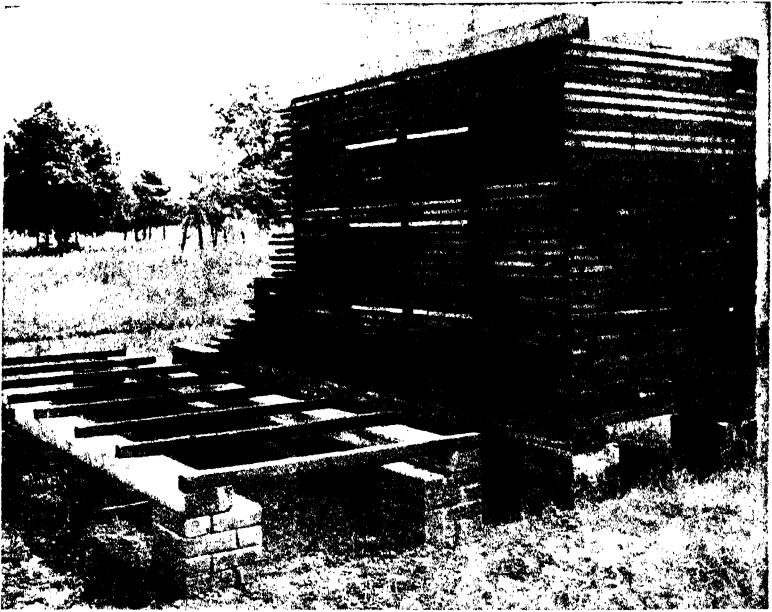
हवा में सुखाने के लिये उचित रीति से लगे हुए लकड़ी के चट्टे

(क) चट्टे को नियमानुसार लगाना।

(ख) चट्टे को गरम हवाओं, लू, वर्षा और नमी से रक्षा करना।

(क) नियमानुसार चट्टा लगाना

(१) सबसे पहले चट्टे की बुनियाद पर ध्यान देना चाहिये, जिस पर लकड़ी को रखना है। इस काम में छोटे शहतीर, स्लीपर या बर्गे लगाये जाते हैं। परन्तु पहले उन्हें कोई सुरक्षित रखने-वाला मसाला या तेल दे देना चाहिये, नहीं तो ज़मीन के समीप होने के कारण उनके गलने, सड़ने और दीमक लगने का भय होगा जिससे यही बुराइयाँ चट्टे की लकड़ी में भी फैल जाती हैं। इस विचार से चट्टे की बुनियादें अगर कंक्रीट या ईंट की बनाई जायँ तो अधिक अच्छा है। यदि एक स्क्वायर फ़ुट के चौरस पाये ज़मीन से लगभग एक फ़ुट ऊँचे और एक दूसरे से लगभग ४-५ फ़ीट के अन्तर पर स्थापित कर लिये जायँ तो अच्छा है। ये चट्टे की ज़मीन से काफ़ी रक्षा करेंगे। फिर भी वे दीमक इत्यादि को रोकने के लिये यथेष्ट नहीं। इसलिये अगर पायों के सिरों पर जस्ते की चादर मढ़वा ली जाय तो फिर उनको दीमक नहीं खा सकती।

इसके बाद पायों के ऊपर ठीक नाप के चौकोर बर्गे लम्बी तरह से बिछा देने चाहिये, जिसके लिये अगर लोहे के पुराने गर्डर या रेल की पटरियाँ काम में लाई जायँ तो और अधिक अच्छा है। चूँकि इस तरह चट्टे के नीचे केवल एक मामूली फ़्रेम सा रहता है इसलिये हवा के आने-जाने में कोई रुकावट नहीं होती। फिर उन बर्गों या पटरियों पर दो-तीन इंची चौकोर कटी हुई लकड़ियाँ चौड़ाई में बिछाई जायँ, ताकि उन पर चट्टे के बीच बत्तों की धार रहे।

अगर चट्टा शेड या गोदाम के अन्दर लगाया जाय तो सतह को हमवार रखते हैं नहीं तो शेड इत्यादि न होने की दशा में चट्टे को चौड़ाई में एक तरफ़ थोड़ा ढालू लगाते हैं जिससे अगर पानी बरसे तो उसके ऊपर से आसानी से बह जाय। चट्टे की बुनियाद रखते समय उसकी दिशा का भी ध्यान रखना चाहिये। कठोर लकड़ियों को सुखाने के लिये साधारणतया चट्टे को इस दशा में लगाना चाहिये कि लकड़ियों के सिरे गर्म हवाओं की ओर हों और चट्टे की लम्बाई हवा के झोकों की ओर हो। इस प्रकार खुश्क हवाओं की टक्कर अधिक तौर से बत्तों पर रहती है और सूखनेवाली लकड़ी सुरक्षित रहती है।

इसके विपरीत मुलायम क़िस्म की लकड़ियाँ, जैसे सेमल और पपीता इत्यादि को सुखाने के वास्ते चट्टे को इस प्रकार लगाना चाहिये कि लकड़ियाँ लम्बाई की दिशा में हवा की टक्कर पर रहें और बत्ते हवा के अनुकूल हों जिससे लकड़ी जल्दी सुखाई जा सके।

(२) ऊपर बताये गये नियमों के प्रतिकूल चट्टे को बनाने के बाद दूसरी चीज़ सुखाई जानेवाली लकड़ियों को नियमित रूप से चुनना है। जहाँ तक हो सके एक चट्टे में एक ही लम्बाई और साइज़ की लकड़ियों को लगाना चाहिये। परन्तु यदि लकड़ियाँ अलग-अलग लम्बाई की हों तो समान लम्बाई की लकड़ियों को छाँटकर अलग कर लिया जाय और उनमें से सबसे लम्बी लकड़ियों को सबसे पहले अर्थात् नीचे लगाया जाय। उनसे ऊपर कम लम्बी लकड़ियों को चिना जाय, और फिर उससे कम, यहाँ तक कि चट्टे के ऊपर सबसे कम लम्बी लकड़ियों को जगह दी जाय। इस प्रकार ठीक चट्टा बन जायगा और सब लकड़ियाँ नियमानुसार रख दी जायँगी। परन्तु ऐसा न करने से लकड़ियों

चित्र—४
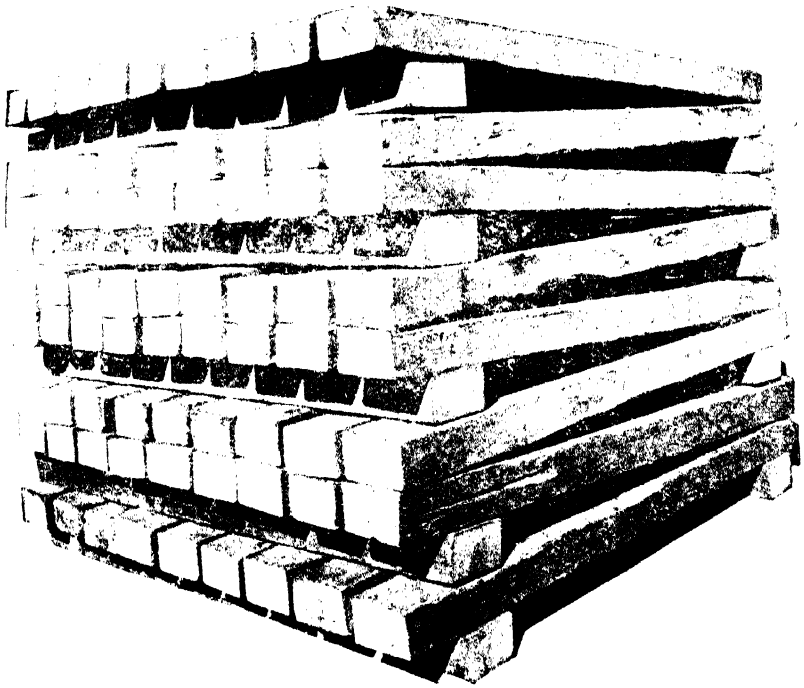
हवा में सुखाने के लिए रेलवे स्लीपरों का "एक और नौ" के हिसाब से लगाया हुआ चट्टा

के लिये कहीं-कहीं बाहर निकले रह जाने से सूखने की हालत में उनके ऐंटने और कुबड़ा हो जाने का डर रहेगा। अगर घटनावश कोई ज़्यादा लम्बाई का तख़्ता ऊपर ही लगाना हो तो उसके बढ़े हुए सिरे को नीचे से सहारा देकर रखना चाहिये (देखो तस्वीर बढ़े हुए तख़्तों की)। चट्टे के निचले हिस्से में भी तख़्तों के सिरों को जहाँ तक हो सके, ठीक बुनियादी पाँव की हद में रहना चाहिये. और एक या दो इंच से ज़्यादा इधर-उधर न निकलने दिया जाय।

चट्टे की चौड़ाई आम तौर पर ५ फ़ीट से अधिक नहीं रखी जाती और यदि अधिक रखनी हो तो चट्टे के बीच में सरासर ८ से १० इंच चौड़ी जगह ख़ाली छोड़ देनी चाहिये। इस प्रकार हवा चट्टे से खूब आती जाती है और सुखाई सब जगह समान रूप से होती है। दो चट्टों की एक दूसरे से दूरी भी १½ या २ फ़ीट होनी चाहिये, जिससे हवा अच्छी प्रकार आ-जा सके।

(३) लकड़ियों को चट्टे में लगाने से पहले यह देखना भी आवश्यक है कि बत्ते यथेष्ट संख्या में हैं जो पूरे चट्टे के लिये काफ़ी हो सकें। जो लोग लकड़ी के सुखाने के सिद्धान्तों को अच्छी तरह नहीं समझते, उन्हें बताया जाता है कि बत्ते चट्टे के लिये बहुत आवश्यक हैं और अच्छा चट्टा तभी लगाया जा सकता है, जब बत्ते अच्छे हों। वह मोटाई में समान, सीधे, सच्चे और खूब सूखी हुई कठोर लकड़ी के हों। अच्छे बत्तों की काफ़ी तादाद रखने में कमी नहीं करनी चाहिये, क्योंकि उन्हीं के द्वारा लकड़ी के तहों को एक दूसरे से उचित रूप से अलग रखा जा सकता है। ख़राब, कुबड़े और कम या ज़्यादा मोटाई के बत्ते काम में लाने से सुखाई जानेवाली लकड़ी भी टेढ़ी और कुबड़ी हो जाती है और समान रूप से नहीं सूखती, इसलिये बत्तों को ठीक एक इंची

चौकोर या एक इंच व डेढ़ इंच के साइज़ में अच्छी सूखी लकड़ियों में से कटवाना चाहिये और उनकी लम्बाई चट्टे की चौड़ाई के बराबर होनी चाहिये। वत्तों को एक दूसरे से चार-चार फ़ीट की दूरी पर रखना चाहिये। परन्तु अधिक ऐंठने और मुड़नेवाली लकड़ियों को सुखाने में वत्तों के बीच की दूरी दो फीट रखी जाय तो अच्छा है। और एक इंच से कम मोटे तख़्तों को सुखाने में भी वत्तों को दो-दो फ़ीट से अधिक दूरी पर नहीं रखना चाहिये क्योंकि पतले तख़्ते अधिक लचकने और ऐंठनेवाले हो सकते हैं।

(४) फिर इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि वत्ते नीचे से ऊपर तक ठीक एक दूसरे की सीध में रहें, ताकि उनका बोझ अपने सबसे नीचेवाले मोटे वत्ते पर रहे।

वत्तों पर मज़बूती के विचार से कोई मसाला या तेल लगा देना ज़्यादा अच्छा है। इस प्रकार ठीक चट्टा लगाना कोई कठिन काम नहीं, और इससे लकड़ी और उसके मालिक को काफ़ी फ़ायदा होता है।

(ब) चट्टे की रक्षा और देखभाल

अब यह जानना चाहिये कि लू, धूप और वर्षा से चट्टे की किस प्रकार रक्षा की जाय। लू अर्थात् गर्म और खुश्क हवा और धूप के कारण लकड़ी तेज़ी से सूखती, फटती और तड़कती है। इसलिये चट्टे को उनसे बचाना आवश्यक है, विशेष रूप से जब लकड़ी फटने और चटकनेवाली क़िस्म की हो। अब इसका क्या उपाय होना चाहिये ? मि० सुईट भूतपूर्व सीजनिंग अफ़सर, देहरादून की राय के अनुसार चट्टों को तीन तरह के गोदामों में बाँटना चाहिये—

(१) ज़्यादा देर में सूखनेवाली कठोर लकड़ियों के लिये जो शेड चाहिये उसमें तीन बातें होनी आवश्यक हैं। पहली यह कि

चित्र -- ५
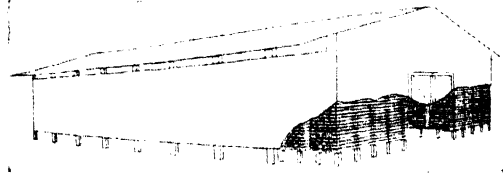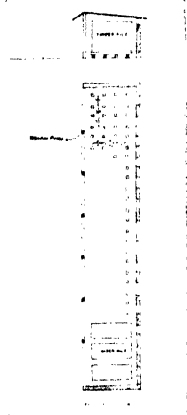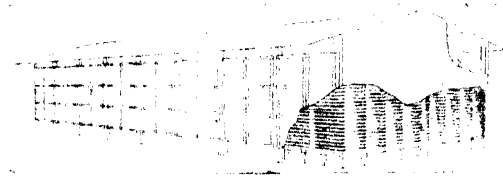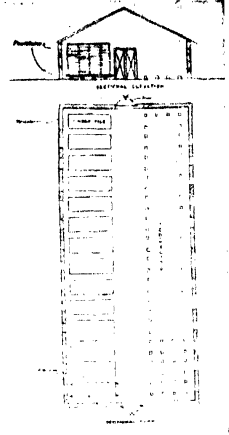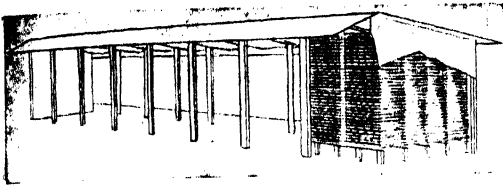
लकड़ी को हवा में सुखाने के लिये गोदाम

हलकी ऊँची छत जो वर्षा और धूप की रोक के लिये काफ़ी मज़बूत हो। दूसरे गोदाम में चारों तरफ़ से धूप व गर्म और खुश्क हवाओं की रोकथाम का प्रबन्ध हो, उसे खुला हुआ नहीं होना चाहिये। तीसरे छत में हवा के आने-जाने के लिये रोशनदान हों जिससे लकड़ी से निकली हुई नमी जल्दी बाहर निकल जाय।

ऐसे गोदाम को खूब लम्बा और चौड़ाई में कम होना चाहिये। लकड़ी के आने और जाने के वास्ते या तो गोदाम के बीच से रास्ता रखा जाय या इधर-उधर बाहर की तरफ़ से भी लकड़ी लाई और ले जाई जा सकती हो। यदि बीच ही से रास्ता रखना हो तो गोदाम की चौड़ाई ४० से ५० फ़ीट तक रखी जा सकती है और चट्टे रास्ते के दोनों तरफ़ १६-१६, १८-१८ फ़ीट की दूरी में फैलाये जा सकते हैं। दीवारें, जैसा कि ऊपर बताया गया है, बन्द होनी चाहियें जो ईंट मिट्टी लकड़ी या बाँस इत्यादि से कैसी भी बनाई जा सकती हैं मगर उनका नीचे ऊपर से कुछ खुला होना आवश्यक है अर्थात् डेढ़ से ढाई फ़ीट तक वह छत के पास खुली रहें और उतनी ही नीचे से खुली हों जिससे गोदाम के अन्दर हवा के आने-जाने का उचित प्रबन्ध रहे।

अगर रास्ता गोदाम के बीच से न रखना हो तो इस दशा में गोदाम की चौड़ाई ३०-४० फ़ीट से अधिक न होनी चाहिये और लकड़ी लाने और ले जाने के लिये दीवारों में लम्बाई की दिशा में दरवाज़े रखे जायँ या वह तख्तों की इधर-उधर खिसकनेवाली बनाई गई हो तो यह भी बहुत अच्छा है।

अब यह ध्यान रखना चाहिये कि वह कठोर तरह की कौन-कौन लकड़ियाँ हैं जिनके वास्ते ऊपर बताये हुए क़िस्म का गोदाम ठीक होगा। सीज़निंग ब्रांच फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट

देहरादून की खोज और अनुभव के बाद नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ कठोर क़िस्म की हैं:—

ईगिल मारमिलोस (बेल)	Aegle marmelos (bael).
एगलाया ओडोरेटिसिमा	Aglaia odoratissima.
अलटिंजिया एक्सेलसा (जुटिली)	Altingia excelsa (jutili).
एनोगाइसेस एक्यूमिनेटा (योन)	Anogeissus acuminata (yon).
एनोगाइसेस लेटीफ़ोलिया (एक्सेल उड)	Anogeissus latifolia (axle wood).
एनोगाइसेस पेन्डूला (करदाई)	Anogeissus pendula (kardahi).
बेसिया लेटीफ़ोलिया (महुवा)	Bassia latifolia (mahua)
बेसिया लांगीफ़ोलिया (महुवा)	Bassia longifolia (mahua)
बरसेरा सेराटा (इन्डियन रेड पियर)	Bursera serrata (Indian-red pear).
केरिया आरबोरिया (कुम्बी)	Careya arborea (kumbi).
करेलिया इन्टेगरिमा	Carallia integerrima.
करापा मोलूकेन्सिस (पुसुर)	Carapa moluccensis (pussur).
केसिया फ़िस्चूला (राजब्रिख)	Cassia fistula (rajbrikh)
क्लोरोज़ाइलन स्वेटनिया (ईस्ट इन्डियन साटिन उड)	Chloroxylon swietenia (East Indian satin-wood).
क्लाइसटेन्थस कोलिनस (गरार)	Cleistanthus collinus (garrar).

डाइस्परस मेलानोक्साइलन (तेंदू)	Diospyros melanoxylon (tendu).
ड्रिमीकारपस रेसिमोसस (तेलसर)	Drimycarpus racemosus (telsar).
यूक्लिप्टस यूजीनोआइडीज़	Eucalyptus eugenioides
यूजिनिया गार्डिनेरि (जामुन)	Eugenia gardneri (jaman).
यूजिनिया जम्बोलाना (जामुन)	Eugenia jambolana (jaman).
यूजिनिया ओपरक्यूलेटा (जामुन)	Eugenia operculata (jaman).
ग्ल्यूटा ट्रावनकोरिका (ग्ल्यूटा)	Gluta travancorica (gluta).
हार्डविकिया बिनेटा (अंजन)	Hardwickia binata (anjan).
हेरीटेरा माइनर (सुन्दरी)	Heritiera minor (sundri)
होपिया पार्वीफ्लोरा (होपिया)	Hopea parviflora (hopea)
होपिया ह्वाइटिना (होपिया)	Hopea wightiana (hopea)
लेर्जिस्ट्रोमिया लेन्सीलेटा (बेनटीक)	Lagerstroemia lanceolata (benteak).
लेर्जिस्ट्रोमियापार्वीफ्लोरा (लेन्डी)	Lagerstroemia parviflora (lendi).
औजीनिया डलबरज्याडीज़ (सांदन)	Ougeinia dalbergioides (sandan).
फ़ाइलेनथस एम्बलीका(आमला)	Phyllanthus emblica (amla).

प्लेन्चोनिया एन्डमानिका (रेड बोम्बवे)	Planchonia andamanica (red bombway).
क्वेरकस लेमेलोसा (इन्डियन ओक)	Quercus lamellosa (Indian oak).
क्वेरकस लिनएटा (इन्डियन ओक)	Quercus lineata (Indian-oak).
शोरिया रोबस्टा (साल)	Shorea robusta (sal).
स्वायमिडा फ़ेब्रीफ्यूजा (रोहिन)	Soymida febrifuga (rohin).
टरमिनेलिया पेनीकुलेटा (किन्डल)	Terminalia paniculata (kindal).
टरमिनेलिया टोमेन्टोसा (लारेल)	Terminalia tomentosa (laurel).
ज़ालिया ज़ाइलोकारपा (इरूल)	Xylia xylocarpa (irul)

(२) औसत दर्जे की कठोर लकड़ियों के लिये अर्थात् जो लकड़ियाँ न अधिक कठोर हैं और न अधिक नर्म हैं, शेड की चौड़ाई ऊपरवाले शेड से आधी रखनी चाहिये। यह गोदाम एक लम्बाई की तरफ़ बिलकुल खुला और दूसरी लम्बाई की तरफ़ बंद होना चाहिये। केवल छत के समीप और ज़मीन से मिली हुई जगह के, जो हर दशा में हवा के आने-जाने के लिए खुली होनी चाहिये, छत को ऊपर से काफ़ी बढ़ा हुआ रखना बहुत ही आवश्यक है जिससे खुली हुई जगहों से वर्षा की बौछार अन्दर न जा सके। इस क़िस्म के गोदाम को हिन्दुस्तान की मौसमी हालतों के विचार से उत्तर की ओर सामने खुला रखना उत्तम होता है। चूँकि इस प्रकार खुली हुई दिशा सूर्य की ओर नहीं रहती नहीं तो

दूसरी दशा में खुली तरफ़ छाया का कोई और प्रबन्ध करना होगा।

नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ औसत दर्जे की कठोर लकड़ियों में आती हैं जो इस नमूने के गोदाम में सुखाई जानी चाहिये।

अकेसिया अरेबिका (बबूल)	Acacia arabica (babul).
अडइना कार्डिफ़ोलिया (हल्दू)	Adinacordifolia (haldu)
एलबिज़िया लेबक (कुकू)	Albizzia lebbek (kokko)
एलबिज़िया ल्यूसिडा	Albizzia lucida.
एलबिज़िया आडोरेटिसिमा (ब्लैक सिरिस)	Albizzia odoratissima (black siris).
एलबिज़िया प्रोसेरा (ह्वाइटसिरिस)	Albizzia procera (white-siris).
एलबिज़िया स्टीपूलेटा	Albizzia stipulata.
आरटोकारपस चपलाशा (चपलाश)	Artocarpus chaplasha (chaplash).
आरटोकारपस लकूचा (लकूच)	Artocarpus lakoocha (lakooch).
आरटोकारपस हिरसूटा (ऐनी)	Artocarpus hirsuta (aini).
बोहमिरिया रूगोलोसा	Boehmeria rugulosa.
कैलोफिलम की लकड़ियाँ (पून)	Calophyllum species (poon).
कैस्टनापसिस की लकड़ियाँ (इन्डियन चेस्टनट)	Castanopsis species (Indian chestnut).
सेड्रिलातूना (तुन)	Cedrela toona (toon).
डलबरजिया लेटीफ़ोलिया (इन्डियन रोज़ उड)	Dalbergia latifolia (Indian rose wood).

डलबरजिया सिसू (सिसू)	Dalbergia sissoo (sissoo).
डिलेनिया पेन्टागाइना (अगाइ)	Dillenia pentagyna (aggai.)
डिप्टेरोकारपस की लकड़ियाँ (गुर्जन)	Dipterocarpus species (gurjan).
डाइकापसिस एलिपटीका (पाली)	Dichopsis elliptica (pali).
डाइकापसिस पोलीएन्था (ताली)	Dichopsis polyantha (tali).
डाइसाक्सीलम ग्लेन्डूलोसम (व्हाइट सिडार)	Dysoxylum glandulosum (white cedar).
फ्रेगज़ीनस फ्लोरिबन्डा (हिमालियन एश)	Fraxinus floribunda (Himalayan ash).
गेरूगापिनेटा (खरपत)	Garugapinnata (kharpat).
मलाइना आरबोरिया (गमारी)	Malaina arborea (gamari).
गिरीविया टिलीफ़ोलिया (धामन)	Grewia tiliaefolia (dhaman).
हार्डविकिया पिनेटा (पिने)	Hardwickia pinnata (piney).
होलेरहाना एन्टीडाइसेन्ट्रिका	Holarrhena antidysenterica.
होलेपटिलिया इन्टीग्रिफ़ोलिया (कांजू)	Holoptelea integrifolia (kanju).
होपिया ओडोरेटा (होपिया)	Hopea odorata (hopea).
हाइमिनोडिक्टन एक्सेलसम (कुठान)	Hymenodictyon excelsum (kuthan).

जुगलन्स रीजिया (वालनट)	Juglans regia (walnut).
लेजरस्ट्रोमिया फ्लासरेजिनी (जरूल)	Lagerstroemia flosreginae (jarul).
मेचिलस की लकड़ियाँ (कौला)	Machilus species (kawala).
मीलिया एज़ेडरख (नीम)	Melia azedarach (neem)
ओडाइना ओडेयर (झींगन)	Odina wodier (jhingan).
परोशिया जेक्वेमोन्टियाना (परोशिया)	Parrotia jacquemontiana (parrotia).
टेरोकारपस डलबरज्वाइडीज़ (पेडाक)	Pterocarpus dalbergioides (padauk).
टेरोकारपस मारसूपियम (बिजासाल)	Pterocarpus marsupium (bijasal).
टेरोस्परमम एसेरीफ़ोलियम	Pterospermum acerifolium.
सेकोपेटालम टोमेन्टासम (हूम)	Saccopetalum tomentosum hoom).
सगेरिया इलपटिका (चूई)	Sageraea elliptica (chooi).
शिमा वाली शाई (नीडिल उड)	Schima wallichii (needle wood).
शिरेबेरा सुईटेनिवो आइडीज़	Schrebera swictenioides.
स्टीफिगाइन पारवीफ़ोलिया (केम)	Stephegyne parvifolia (kaim).
स्टीरेओस्पर्मम चलोनाइडीस (पादरी)	Stereospermum chelonoides (padri).

स्टीरिओस्पर्मम सुआविओलेन्स (परारी)	Stereospermum suaveolens (parari).
स्टीरिओस्पर्मम ज़ाइलोकारपम	Stereospermum xylocarpum.
टेक्टोना ग्रान्डिस (टीक)	Tectona grandis (teak).
टरमिनेलिया अर्जुना (अर्जुन)	Terminalia arjuna (arjun).
टरमिनेलिया बिलेरिका (बहेरा)	Terminalia belerica (bahera).
टरमिनेलिया बायलाटा (ह्वाइट चुगलम)	Terminalia bialata (white chuglum).
टरमिनेलिया मनाई (ब्लेक चुगलम)	Terminalia manii (black chuglam).
टरमिनेलिया मिरीओकारपा (हालाक)	Terminalia myriocarpa (ho lock).
टरमिनेलिया प्रोसेरा (बादाम)	Terminalia procera (badam).

जल्दी सूखनेवाली नर्म लकड़ियों के लिये ऐसे गोदाम की आवश्यकता होती है जो लकड़ियों को जल्दी से जल्दी सुखा सके; क्योंकि ऐसी लकड़ियों के देर तक गीले रहने से घुन और फफूँदी लग जाती है इसलिये जो कुछ हिदायतें कठोर लकड़ियों के देर से सुखाने के बारे में बताई गई हैं नर्म लकड़ियों के लिये उसका उलटा करना चाहिये। वर्षा और बौछार से चट्टे की पूरी रक्षा और उसमें हवा के आने-जाने का पूरा प्रबन्ध होना आवश्यक है। इस काम के लिये गोदाम की छत को छोड़कर चारों तरफ़ से खुला होना चाहिये और चट्टे की लम्बाई की दिशा में हवा के

चित्र—६

न फटने वाली लकड़ियों को जल्दी सुखाने के लिये मिलाकर खड़ा करने की रीति।

प्रतिकूल लगाना चाहिये जिससे लकड़ियों को खूब हवा लग सके। इस प्रकार लकड़ी जल्दी सुखाई जा सकेगी। उसमें फफूँदी न लगेगी और उसका रंग खराब न होगा। सेमल और सलाई इत्यादि की लकड़ियों के लिये (जिनमें ये खराबियाँ बहुत जल्दी पैदा हो जाती हैं) चट्टे में लगाने से पहले एक दूसरे से मिलाकर खड़ा करना अच्छा है (देखो तस्वीर)। लेकिन अधिक दिनों तक उन्हें इस प्रकार खड़ा रखने से तख्तों के ऐंठ जाने का डर है। इसलिये कुछ दिनों के बाद जल्दी तख्तों को चट्टे में लगा देना चाहिये।

नर्म लकड़ियाँ जिन्हें ऊपर बनाए हुए गोदाम में सुखाना होगा नीचे दी हुई हैं:—

एबीज़पिन्ड्रो (हिमालियन सिल्वर फ़र)	Abies pindrow (Himalayan silver fir).
एक्रोकारपस फ्रेज़ीनीफ़ोलियस (मुनदानी)*	Acrocarpus fraxinifolius (mundani).
एलसटोनिया स्कोलरिस (शैतान वुड)*	Alstonia scholaris (shaitan wood).
एन्थोसिफ़ेलस कदम्बा (कदम्ब)*	Anthocephalus cadamba (kadam).
बम्बेक्स इनसिगनी (सेमल)*	Bombax insigne (semul)
बम्बेक्स मलाबारिकम (सेमल)*	Bombax malabaricum (semul).
बास्वेलिया सिराटा (सलाई) *	Boswellia serrata (salai).
कनारियम इयोफ़िलम (ह्वाइट धूप)	Canarium euphyllum (white dhup).
सीडरस देवदारा (देवदार)	Cedrus deodara (deodar).

कुलेनिया एक्सेल्सा (करानी)*	Cullenia excelsa (karani)
डुआबंगा सुनेरेटीआइडीज़ (लमपाती)	Duabanga sonneratioides (lampati).
फ़ाइकस एस्पेरिमा	Ficus asperrima.
लिटसिया पोलियान्था	Litsaea polyantha.
माइकेलिया चम्पका (चम्पाक)	Michelia champaca (champak).
मेनजीफ़ेरा इन्डिका (मैङ्गो)	Mangifera indica (mango).
मोरस एल्बा (मलबरी)	Morus alba (mulberry).
पेरिशिया इनसीगनिस (रेडधूप)	Parishia insignis (red dhup).
पिसिया मोरिन्डा (हिमालियन स्प्रूस)	Picea morinda (Himalayan spruce).
पाइनस एक्सेल्सा (केल)	Pinus excelsa (kail).
पाइनस लांगिफ़ोलिया (चीड़)	Pinus longifolia (chir).
सिड्राक्सीलन लांजिपिटियोलेटम (लम्बापट्टी)*	Sideroxylon longepetiolatum (lambapatti).
इस्टरक्यूलिया केम्पेन्यूलेटा (पपीता)*	Sterculia campanulata (papita).
इस्टरक्यूलिया यूरेंस (कतीरा)*	Sterculia urens (katira).
इस्टर क्यूलिया विलोसा (उदाली)*	Sterculia villosa (udali)).
टेट्रामिलसन्यूडीफ़्लोरा (मैना)*	Terameles nudiflora (maina).
ट्रीविया न्यूडीफ़्लोरा (गुटेल)*	Trewia nudiflora (gutel)

चित्र—७
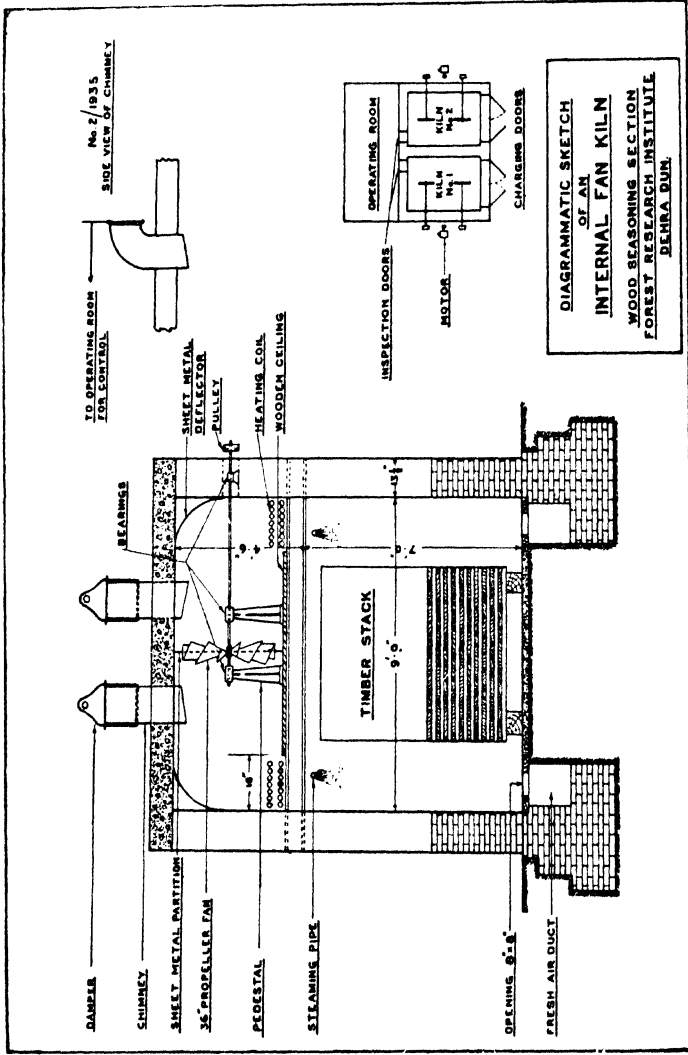
भीतरी पंखेवाली किलन का मानचित्र

वेटरिया इन्डिका (वेलापाइनी)*	Vateria indica (vella-piney).

ऊपर की तीनों सूचियों में दर्ज की हुई लकड़ियाँ वे हैं जिन्हें बहुधा सुखाकर अनुभव प्राप्त किये जा चुके हैं। जिन लोगों के पास कोई और लकड़ियाँ सुखाने को हों तो वे उनके बारे में "उड सीज़निंग अफ़सर" फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट को लिखकर सूचना प्राप्त कर सकते हैं।

तीसरा अध्याय

(लकड़ी को अप्राकृतिक रूप से गर्म रक्खे जानेवाले कमरों या क्लिन में सुखाना)

इसके बारे में भी थोड़ा-बहुत जान लेना आवश्यक है। लकड़ी जब सुखाई जाती है तो उसकी नमी हवा में निकलती रहती है। हवा जितनी खुश्क और तेज़ होगी लकड़ी उतनी ही जल्दी सूखेगी। गर्मी की ऋतु में जब खुश्की और गर्मी ज़्यादा और नमी बहुत कम हो जाती है तो सूखने का काम तेज़ी से होता है, यहाँ तक कि कठोर लकड़ियाँ उसे नहीं सहन कर सकतीं और फटने व तड़कने लगती हैं। वह उससे अपनी रक्षा चाहती हैं। इसके विपरीत जाड़े की ठंडी रातों में सुखाई नाममात्र को होती है। इसी प्रकार बरसात के मौसम में चूँकि हवा में स्वयं ही नमी बहुत ज़्यादा होती है इसलिये सुखाई का काम धीरे-धीरे होता है। इसका यह अर्थ हुआ कि सुखाई अधिकतर गर्मियों के ही महीनों में हो पाती है।

* इन लकड़ियों में सुखाये जाने की दशा में गलने, फफूँदी और रंग खराब होने का डर रहता है।

किलन में लकड़ी सुखाने से यह सुविधा होती है कि गर्मियों को छोड़कर वर्ष का जो बाक़ी भाग लकड़ियों को सुखाने में असफल रहता है वह नहीं रहता और समय बेकार नहीं जाता। किलन कुछ इस प्रकार बनाई जाती है कि उसमें गर्मी, नमी और हवा का आना-जाना अर्थात् लकड़ी को सुखानेवाली तीनों आवश्यक चीज़ें मौजूद होती हैं, और अगर हम लकड़ी की विशेषता को समझते हों तो इन बातों को आवश्यकता के अनुसार घटा-बढ़ाकर लकड़ी को बिना ख़राब किये हुए कम से कम समय में सुखा सकते हैं। किलन की अपेक्षा लकड़ी को वैसे सुखाने में बारह से बीस गुना समय अधिक लग जाता है। किलन द्वारा यह भी सम्भव होता है कि किसी लकड़ी को जिस अंश तक सुखाना चाहें सुखाएँ और जितनी नमी चाहें उसमें बाक़ी रहने दें। किलन में सूखने से लकड़ी को एक यह भी लाभ पहुँच जाता है कि किलन के तेज़ टेम्परेचर में कीड़े या फफूँदी इत्यादि के कीटाणु मर जाते हैं और लकड़ी सूखकर कीटाणुओं से रहित निकलती है।

बहुत समय तक हिन्दुस्तान में क्लिन द्वारा लकड़ी सुखाने की प्रथा बहुत कम थी विशेषतया इसलिए कि क्लिन लगवाने और चलाने का ख़र्च आम कारबारी लोगों के बस का न था। इसलिए देहरादून में इस बात का प्रयत्न किया गया कि क्लिन को अधिक से अधिक सादा और लकड़ी सुखाने के तरीक़ों को सरल से सरल बनाया जाय जिससे लकड़ी के साधारण व्यापारी और थोड़ी पूँजीवाले लोग भी उससे लाभ उठा सकें। इसी कोशिश का यह नतीजा है कि देश में अब जहाँ तहाँ लकड़ी सुखाने के कारखाने खुल गये हैं और प्रतिवर्ष उनकी संख्या बढ़ती जा रही है। जब कोई नया क्लिन लगाया जाता है या इस सम्बन्ध में कोई

चित्र—८
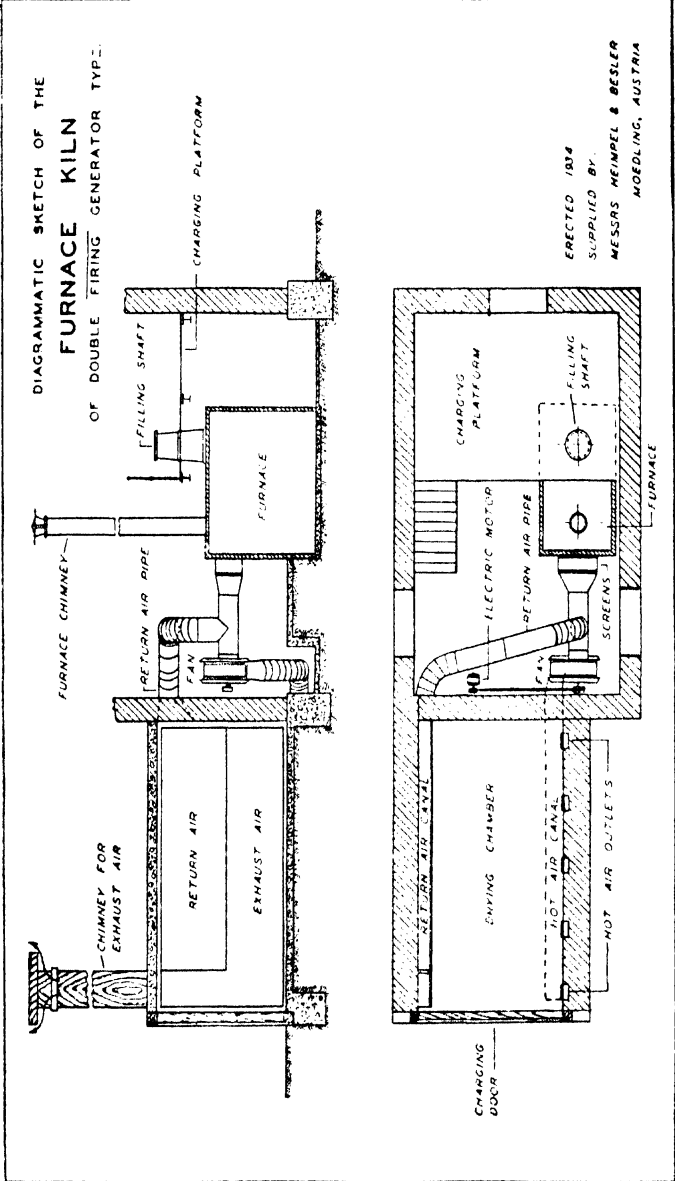
फरनेस किलन का मानचित्र

और कठिनाई पैदा होती है तो अफ़सर इनचार्ज सीज़निंग ब्रांच देहरादून उसे जाकर देख सकते हैं और उचित उपाय बता सकते हैं।

देहरादून में एक बहुत सादे नमूने की किलन बनाई गई है जो पुराने ढंग की किलन से अच्छी है। और उसका चलाना भी पहले से सरल है। इसमें बहुत कम स्टीम ख़र्च होती है और यह भी आवश्यक नहीं कि इसे दिन-रात लगातार चलाया जाय, केवल दिन के समय चला सकते हैं। उस पर ख़र्च भी कम बैठता है और लगभग २५० घनफ़ुट लकड़ी को एक समय में सुखानेवाली अच्छी ख़ासी किलन बॉयलर को छोड़ते हुए ढाई तीन हज़ार रुपये में तैयार हो सकती है जो केवल दिन ही के वक़्त में काम करके एक वर्ष में ५०० घनफ़ुट के एक इंच मोटे तख़्तों को सुखा सकती है सुखाई के ख़र्च का अन्दाज़ा कई बातों पर निर्भर रहता है। उदाहरणार्थ किलन में ईंधन और बिजली का ख़र्च, उसकी ऊपरी देखभाल और काम करनेवालों की तनख़्वाह, लकड़ी की मात्रा जो सूखकर किलन में से निकले इत्यादि इत्यादि। अन्दाज़ से यह कहा जा सकता है कि शीशम या सागौन जैसी लकड़ी के एक इंच मोटे तख़्तों को किलन में सुखाने का ख़र्च चार आने से आठ आने प्रति घनफ़ुट से अधिक न होगा। बड़े पैमाने पर काम करने से इससे भी कम ख़र्च होगा। यही कारण है कि अमेरिका में आये दिन बड़ी-बड़ी किलन लगाई जा रही हैं और यूरप के दूसरे देशों में भी उनका प्रचार बढ़ रहा है। हिन्दुस्तान में भी २-३ वर्ष ही के अन्दर लकड़ी का कारबार करनेवाली बहुत सी कम्पनियों ने पेटियों और टेनिंग बक्सों की लकड़ी को बड़ी मात्रा में सुखाने के लिए किलन लगवाई हैं। आसाम, बंगाल और बम्बई के प्रान्तों में ऐसे बहुत से कारख़ाने

हो गये हैं और दूसरे स्थानों में भी स्थापित किये जा रहे हैं। एक बड़ी किल्न में पेटियों के लिए हल्के आध इंच तख़्तों को सुखाने का खर्च दो पैसे से एक आना प्रति घनफ़ुट से अधिक नहीं हो सकता।

सामने के पृष्ठ पर एक उत्तम किल्न का मानचित्र दिया गया है जो फ़र्नीचर और पैकिंग बक्सों की लकड़ी के सुखाने के लिये बहुत उपयुक्त किल्न है। इस काम का सब सामान हिन्दुस्तान ही में किसी इंजीनियरिंग फ़र्म से मिल सकता है। इसके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिये अफ़सर इनचार्ज सीज़निंग ब्रांच फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून को लिखिये। उन जगहों में जहाँ पर स्टीम का कोई प्रबन्ध न हो और किल्न के बॉयलर का लगाना महँगा मालूम हो वहाँ एक दूसरे नमूने की किल्न लगाई जा सकती है जिसमें उसकी अपनी फ़र्नेस या भट्ठी होती है। यह दो प्रकार की बनाई जा सकती है। एक वह जिसमें धुआँ और गरमी छोटे छेदों से घुसकर सीधे लकड़ी में पहुँच जाते हैं। दूसरी वह जिसमें ये चीज़ें पाइप में होकर कमरे को गर्म करती हैं। पहिले नमूने की फ़र्नेस किल्न का मानचित्र सामने के पृष्ठ पर दिया गया है जिसमें किल्न के साथ ही एक ओर उसका खास क़िस्म का फ़र्नेस या भट्ठी भी दिखाई गई है। यह लकड़ी के रद्दी टुकड़ों और बुरादे इत्यादि से अच्छी तरह जलाई जा सकती है। धुआँ और गरमी पास ही लगे हुए पानी के एक अप्राकृतिक झरने से होकर काफ़ी नमी अपने साथ ले लेते हैं और फिर बांस के पंखे द्वारा चक्कर खाकर भीतर पहुँच जाते हैं और किल्न को गर्म करते हैं। यह किल्न देहरादून में बहुत सफल हुई है। इसमें स्टीम वाली किल्न ही के समान लकड़ी सूखती है परन्तु ऊपर से कुछ काली हो जाती है। इस प्रकार की किल्न पर

चिनाई की लागत सहित कुल ४५०० रुपया ख़र्च होता है। दूसरी प्रकार की किल्न जिसमें धुआँ और गर्मी एक पाइप से होकर गर्मी पैदा करती है इससे कम ख़र्च में तैयार हो जाती है और बनावट में भी बहुत सादी है। इसमें एक यह भी लाभ है कि धुआँ इत्यादि नलों में बंद रहता है इसलिये लकड़ी काली नहीं होने पाती। यह किल्न पंखे और बिना पंखे दोनों प्रकार से बनाई जा सकती है और बिना पंखेवाला केवल १५०० रु० में तैयार हो सकती है। पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिये वुड सीज़निंग अफ़सर फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट देहरादून को लिखिये।

सीज़निंग ब्रांच में उन उम्मीदवारों को किल्न चलाने का काम भी सिखाया जाता है जो किसी ऐसी किल्न में, जो तैयार हो जा रही हो, काम करने के अभिप्राय से ट्रेनिंग के लिये यहाँ भेजे जाते हैं। इन चीज़ों के बारे में सब पत्रव्यवहार वुड सीज़निंग अफ़सर फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट देहरादून से कीजिये।

चौथा अध्याय

(मसालों द्वारा लकड़ी की सुरक्षा)

पेड़ के बाहर की कच्ची लकड़ी बहुत जल्दी ख़राब होनेवाली होती है और थोड़े ही समय में गलने और कीड़ा लगने से बर्बाद होने लगती है। नदियों और समुद्रों के खारे पानी में भी ऐसे कीड़े होते हैं जो इन्हीं लकड़ी को खा जाते हैं। कुछ लकड़ियों का गाभ (यानी भीतर की पक्की लकड़ी) अवश्य इतनी मज़बूत होती है कि इन बुराइयों का बहुत समय तक सामना करती है, जैसे सागौन, साल, शीशम, देवदार, मेहुका, होरिया, पढ़ल, पैडाक और

रोज़वुड इत्यादि। लेकिन बहुत लकड़ियाँ ऐसी हैं जो यथार्थ में इन दुराइयों को नहीं सहन कर सकतीं और उनको ठीक रखने के लिये काम में लाये जाने से पहले उन्हें रक्षा करनेवाले मसाले और तेल इत्यादि लगा देना एक उत्तम उपाय है। इन तेलों से पेड़ की कच्ची लकड़ी पक्की लकड़ी की अपेक्षा अधिक मज़बूत हो जाती है, क्योंकि वह पोरस होने के कारण काफ़ी मात्रा में तेल को पी लेती है। इस तरह कच्ची लकड़ी, जो बहुत कमज़ोर और बर्बाद होनेवाली होती है, तेल पीकर सुरक्षित हो जाती है।

मसालों से लकड़ी की रक्षा करने के तरीक़े

इसके तीन तरीक़े हैं:—

(१) लकड़ी पर सिर्फ़ ऊपर से ब्रुश इत्यादि से मसाला लगा देना।

(२) लकड़ी को मसालों में डुबाकर निकाल लेना।

(३) लकड़ी को बड़ी मशीनों द्वारा दबाव के साथ मसाला पहुँचाना।

१—लकड़ी के ऊपर ब्रुश इत्यादि से मसाला लगाना

यह आम तरीक़ा लकड़ी की रक्षा करने का है जो जितना सरल है उतना ही कम टिकाऊ भी है और पूर्णरूप से लकड़ी को नहीं बचा सकता। केवल साधारण सावधानी के लिये इससे अवश्य लाभ उठाया जा सकता है। इसलिये यह उचित है कि जब ऐसा करना हो तो थोड़ी-थोड़ी देर बाद बार-बार लकड़ी पर मसाला फेरते रहना चाहिये और आरम्भ में भी पहला लेप सूखने के बाद दूसरा लेप और फेर देना चाहिये। परन्तु इसका ध्यान रखना चाहिये कि

चित्र—१

परिरक्षण उपचार के लिये खुले कुण्ड का भाचित्र

लकड़ी अच्छी तरह सूखी हो। गीली लकड़ी रक्षा करनेवाले मसालों को अच्छी तरह नहीं पी सकती। इसके अतिरिक्त सूखने और कहीं-कहीं पर फटने से दीमक और घुन इत्यादि का फटी हुई जगहों से अन्दर चले जाने का भय रहेगा। यह भी देख लेना चाहिये कि मसाला लगाने से पहिले लकड़ी में घुन इत्यादि का असर न हो, नहीं तो बाहर की रक्षात्मक बातें लकड़ी के भीतर भी कीटाणुओं को न रोक सकेंगी। मसाले को लकड़ी पर खूब अच्छी तरह से लगाना चाहिये जिससे लकड़ी की दरारों और जोड़ों तक अच्छी तरह मसाला पहुँच जाय और कोई स्थान खाली न रहे। पानी में तैयार किये हुए काले मसाले की अपेक्षा तेल में पके हुए मसाले जैसे क्रियोज़ोट आयल अधिक लाभदायक होते हैं और यदि उनको गर्म पकता हुआ लगाया जाय तो और भी अच्छा है। परन्तु जब थोड़े ही समय के लिये लकड़ी को बचाना हो या लकड़ी पर चिकनाहट लगाना उचित न समझा जाय (जैसा कि पैकिंग बक्सों में इसे ठीक नहीं समझा जाता) तो ऐसी दशा में पानी में घुला हुआ मसाला ही ठीक रहेगा। इसके लिए ज़ेड. एम. ए, उलमैन साल्ट और एसक्यू इत्यादि इसी प्रकार के मसाले हैं। एसक्यू को ठंडा ही काम में लाया जाता है। दूसरे यह कि बहुधा मसाले विषैली दवाओं से बनते हैं इसलिए उन बरतनों की लकड़ी को, जिनमें खाने-पीने की चीज़ें भेजनी हों, ऐसे मसालों से बचाना चाहिए।

फिर भी लकड़ी पर बाहर से मसाला लगाना लकड़ी की पूर्ण रूप से रक्षा नहीं कर सकता और केवल उसी दशा में उचित हो सकता है जब लकड़ी को मकानों से बाहर काम में लाना न हो। छत और फ़र्श से मिली हुई लकड़ियों में, जिन्हें मिट्टी से लगा रहना होता है, अधिक अच्छी तरह मसाला लगाने की आवश्यकता होती है।

२--लकड़ी को मसालों में डुबाना

यह तरीक़ा लकड़ी के उन छोटे कारखानेदार लोगों के लिये बहुत अच्छा है जो न तो लकड़ी को पकानेवाली बड़ी बड़ी मशीनें ख़रीद सकते हैं और न उन मशीनों में पकी हुई लकड़ी की ऊँची क़ीमत दे सकते हैं। एक अच्छे बड़े नाप का टब ख़रीद कर उसमें मसाला या तेल तैयार करके लकड़ी को उसमें डाल दिया जाता है। इसके लिये गर्म और ठंडा तरीक़ा मशहूर है अर्थात् टब या टैंक में मसाला और लकड़ी को डालकर उसके नीचे आग जलाते हैं और १[illegible]०° से १२०° फ़ारनहाइट टेम्परेचर में उसे २ से ४ घंटे तक अच्छी तरह पकाते हैं। उसके बाद आग को धीरे-धीरे ठंडा होने देते हैं और जब लकड़ी उसके अन्दर ख़ूब ठंडी हो जाती है तो उसे निकालकर चट्टे में लगा देते हैं।

यह आसानी से मसाला पीनेवाली लकड़ियों के लिये एक सफल तरीक़ा है। यद्यपि इस तरह भी लकड़ी में अधिक भीतर तक असर नहीं जा सकता। फिर भी यह तरीक़ा लकड़ी पर केवल ऊपरी लेप कर देने की अपेक्षा कहीं अधिक प्रभावशाली है। इस तरीक़े से तमाम कच्ची लकड़ी और बहुत कुछ पक्की भी काफ़ी मसाला पी लेती है और बड़ी पकानेवाली मशीनों के न होते हुए यही तरीक़ा उनके स्थान को कुछ अंश तक ले सकता है। कोलतार क्रियोज़ोट इत्यादि आमतौर पर इसी तरह लकड़ी को दिये जाते हैं। परन्तु एसक्यू देने में पकाना कदापि नहीं चाहिये, क्योंकि यह मसाला आँच पर ख़राब हो जाता है। इसलिये दो बड़े टब लिये जायँ, एक में केवल पानी गरम कर लिया जाय और दूसरे में ठंडा एसक्यू रखा जाय। लकड़ी को पहिले तेज़ गरम पानी में डुबाकर फिर ठंडे एसक्यू वाले टब में डाल दिया जाय। इस प्रकार लकड़ी पर एसक्यू का काफ़ी असर पड़

मोटर ट्यूब द्वारा लकड़ी के पतले खम्भों को शोधने की सरल रीति

जायगा। यह पहिले ही बताया जा चुका है कि मसाले दिये जाने से पहिले लकड़ी को खूब सुखा लेना चाहिये।

३—लकड़ी को बड़ी मशीनों द्वारा दबाव के साथ मसाला देना।

यह सबसे अधिक प्रभावशाली तरीक़ा है। लेकिन इसके लिये अधिक साज़-सामान और बड़े प्लान्ट की आवश्यकता है जो विभिन्न प्रकार के होते हैं। इनमें से प्रत्येक का वर्णन और उनको काम में लाने के तरीक़ों का यदि यहाँ पर ज़िक्र किया जाय तो एक अलग पुस्तक बन जायगी। इसलिए जिन लोगों का इससे सम्बन्ध हो वे और अधिक जानकारी ऑफ़ि रिसर्च अफ़सर, कम्पोज़िट वुड एन्ड वुड प्रीज़रवेशन ब्रांच, फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून से प्राप्त कर सकते हैं।

फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट में लगभग सब तिजारती लकड़ियों पर ये प्रयोग किये जा चुके हैं और हर प्रकार के मसालों और उनकी शक्तियों का हाल मालूम किया जा चुका है जिसके बारे में जनता को पूरी सूचना दी जा सकती है।

लकड़ी की रक्षा करनेवाले विभिन्न मसाले।

ये आजकल बहुत सी किस्मों के चल रहे हैं। कुछ किसी एक प्रयोजन के लिए अच्छे हैं, दूसरे और कामों के लिए उपयोगी हैं। परन्तु लगभग सभी में विषैली दवाएँ मिली होती हैं जिससे लकड़ी को हानि पहुँचानेवाले कीड़ों, दीमक और घुन इत्यादि को मार सकें। कोलतार क्रियोज़ोट आमतौर पर अधिक काम में लाया जाता है।

कोलतार क्रियोज़ोट (Coal-Tar-Creosote)

इसकी विशेषता यही है कि यह लकड़ी को हानि पहुँचानेवाले

कीड़ों को मारता है और क्योंकि यह तेल के समान होता है इसलिये लकड़ी को किसी अंश तक पानी को सहन करने के योग्य बनाता है। सम जलवायु और ठंडे मौसमों में यह बहुत समय तक लकड़ी में अपना प्रभाव बनाये रखता है, परन्तु हिन्दुस्तान की गर्म आबहवा में इसका प्रभाव कम हो जाता है। यूरप व अमेरिका के देशों में "कोलतार क्रियोज़ोट" एक सस्ता मसाला है मगर हिन्दुस्तान में कुछ महंगा मिलता है। साथ ही क्योंकि बड़ी प्रेशर प्लान्ट मशीन भी, जो इसको सफलता के साथ लकड़ी में पहुँचा सकती है, इस देश में बहुत कीमती है, इसलिये कोलतार क्रियोज़ोट का यहाँ उतना चलन नहीं हो सका जितना कि यूरप के देशों में। फिर भी टैंक में लकड़ी को पकाकर उसे देने के लिये यह एक अच्छा मसाला है। हिन्दुस्तान में साधारणतया कोलतार क्रियोज़ोट और फ़्यूल आयल (fuel oil) बराबर की मात्रा में मिले हुए बिकते हैं जिससे उसकी कीमत उचित हो जाती है और उसकी कीड़ों को मारनेवाली शक्ति भी बनी रहती है। परन्तु केवल फ़्यूल आयल (fuel oil) एक बढ़िया मसाला नहीं है।

वुड तार क्रियोज़ोट (Wood-Tar-Creosote)

कुछ वर्ष हुए "वुड तार क्रियोज़ोट" दक्षिणी हिन्दुस्तान में बहुत अधिक काम में लाया जाता था, परन्तु अब उसे अच्छा नहीं समझा जाता। अनुभव से साबित हुआ कि यह कोलतार क्रियोज़ोट के समान अच्छा नहीं। लकड़ी से सम्बन्धित धातु पर भी उसका असर क्रियोज़ोट से अधिक कठोर होता है।

ज़िंक क्लोराइड (Zinc-Chloride)

पानी में घोली हुई दवाओं से लकड़ी की रक्षा करने में यह दवा सबसे सस्ती है, परन्तु लकड़ी पर इसका प्रभाव देर तक नहीं

रहता और बहुत वर्षा या नम आबहवा में जल्दी ख़त्म हो जाता है। फिर भी लकड़ी को गलने से बचाने में यह अवश्य सफल हुआ है और जब लकड़ी छाया में रहे तो यह उसकी बहुत रक्षा करता है। इसे पानी में दो से पाँच प्रतिशत के अनुपात में मिला-कर काम में लाते हैं।

सोडियम फ़्लोराइड Sodium fluoride.

यह लकड़ी के कीड़े मारने के लिए एक बहुत विषैली दवा है, इसलिये इसे पानी में दो से चार प्रतिशत के हिसाब से मिलाना यथेष्ट होता है। परन्तु इसका प्रभाव भी लकड़ी पर अधिक दिनों तक नहीं रहता और प्रतिकूल मौसम में यह बहुत जल्दी अपना प्रभाव खो बैठती है।

यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि चूना 'सोडियम फ़्लोराइड" के प्रभाव को खोनेवाली चीज़ है, इसलिये घोल को तय्यार करते समय ऐसा पानी काम में न लाया जाय जिसमें कैलशियम हो।

कापर सलफ़ेट Copper sulphate

यह भी लकड़ी में पैदा होनेवाले कीड़ों का विकट शत्रु है। यद्यपि इसका प्रभाव भी अधिक समय तक नहीं रहता, दूसरे क्योंकि यह लोहे को खा जानेवाली चीज़ है, इसलिये इसको बड़े प्लान्ट के द्वारा प्रयोग करना स्वयं मशीन को हानि पहुँचाना है। चूना इसके प्रभाव को भी मिटाता है इसलिये जहाँ लकड़ी को शोरेवाली ज़मीन से मिले हुए रखना हो, तो इसका प्रभाव जाता रहेगा।

मरक्यूरिक क्लोराइड Mercuric chloride.

लकड़ी के कीड़ों के लिये यह बहुत विषैली है। आदमी और पशुओं के लिये भी उतनी ही विषैली होने के कारण

इसका अधिक काम में न लाया जा सका ; यह धातु को भी काटती है।

ज़ेड. एम. ए. Z. M. A.

(अर्थात् ज़िंक-मेटा-आरसेनाइट Zinc-meta-arsenite)

यह मिलेजुले नमकों को पानी के साथ लकड़ी में पहुँचाने के लगातार प्रयत्नों का फल है। यह यथार्थ में पानी में तो नहीं घुलता किन्तु तेज़ाबों में घुल जाता है और उड़नेवाले तेज़ाबों जैसे सिरके के साथ आसानी से लकड़ी में समा जाता है। जिसके बाद तेज़ाब उड़ जाता है और नमक लकड़ी में बाक़ी रह जाते हैं। यह सम्मिश्रण अमेरिका में बहुत प्रयुक्त होता है, परन्तु हिन्दुस्तान में इसका चलन अधिक नहीं है।

एसक्यू Ascu

इस पेटेन्ट के विभिन्न पदार्थ आरसेनिक पेन्टोक्साइड Arsenic pentoxide, कापर सलफ़ेट Copper sulphate और पोटेशियम डाइक्रोमेट Potassium dichromate हैं। यह सम्मिश्रण दीमक और घुन इत्यादि को रोकनेवाला, गलने से बचानेवाला और क़रीब-क़रीब लकड़ियों की सब बीमारियों पर प्रभाव रखनेवाला है। इसकी तीसरी दवा पोटेशियम डाइक्रोमेट Potassium dichromate में कीड़ों को मारने के अतिरिक्त एक विशेषता यह है कि यह पहली दोनों दवाओं के प्रभाव को लकड़ी में अधिक समय तक स्थिर रखती है। इस योग को मालूम किये हुए अभी दस ही वर्ष हुए हैं, परन्तु इतने ही समय में यह अच्छी तरह सिद्ध हो गया कि यह इस प्रयोजन के लिये सबसे अच्छी दवा है। इसमें एक यह भी विशेषता है कि यह सम्मिश्रण ठंडा काम में लाया जाता है और इसके लिये आग और बड़ी प्रेशरप्लान्ट (मशीनों) की बिलकुल आवश्यकता नहीं, जैसा कि क्रियोज़ोट के सम्मिश्रण के

लिये आवश्यक है। यद्यपि इस प्रकार ठंडी दशा में दिये जानेवाले मसालों के विरुद्ध यह संदेह रह जाता है कि लकड़ी में पहले से मौजूदा बीमारी के कीड़ों में से शायद कुछ बाक़ी रह जायें, जब कि आग पर पकाये जानेवाले मसालों द्वारा लकड़ी का सब बीमारियों से मुक्त हो जाना निश्चय हो जाता है।

इसके अतिरिक्त और भी कई एक पेटेन्ट कम्पाउंडों का आविष्कार हो चुका है, जिनमें सोलिगनम (Solignum) अधिक प्रसिद्ध है। यह क्रिओज़ोट के ढंग की एक चीज़ है जो छोटे कामों में पालिश के समान बहुत उपयुक्त है, चूंकि विभिन्न रंगों में मिलता है और जल्दी सूखनेवाला भी है। परन्तु यह कुछ क़ीमती होता है जिससे बड़े कामों में इसका प्रयोग अधिक ख़र्चीला हो जाता है। इसके स्थान पर एक देशी चीज़ भी तय्यार की गई है जिसका नाम क्रियोज़ान्ट creosant है। यह सेना-विभाग में छप्परवाली बारिकों के ढाँचों पर ब्रुश से लगाये जानेवाले रक्षात्मक मसाले के तौर पर स्वीकृत की जा चुकी है। फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट में भी जो प्रयोग इस पर किये गये, उनके अनुसार यह सोलिगनम का एक अच्छा बदल सिद्ध हुई है। दूसरी प्रसिद्ध वस्तु क्यूप्रीनोल (Cuprinol) है जो लकड़ी के अतिरिक्त और कामों में भी प्रयोग होती है परन्तु हिन्दुस्तान में अधिक पसन्द नहीं हुई।

इस तरह के और भी कई सम्मिश्रण हैं जिनकी परीक्षा फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट में की जा चुकी है, जैसेः—

मोर्टेन्ट-Mortant
बेलिट-Bellit
हीलीनिट-Hylinit
एन्टीसाइड-Anticide
एक्ज़ोल-Aczol
बरोल-Barol
एटलस सोल्यूशन-Atlas solution
जोडेलाइट-Jodelite
साइडरोलियम-Sideroleum
ब्रूनोलियम-Brunoleum
क्रेज़वायल-Cresoyle

वुलमेन साल्ट्स-Wolman salts
प्रीज़रवोल-Preservol
इम्प्रेगनोल-Impregnol
टेक्टाल-Tectal
क्लोरनापथेलिस-Chlornaphthalenes
एनथ्रोल-Anthrol
कनसेन्ट्रोल-Concentrol
लिगनोलाइट-Lignolite
सेलक्योर-Celcure
डोरोल-Durol

इन मसालों में से हर एक की पूरी विशेषता और गुण मालूम करने के लिये फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून को लिखना चाहिए।

कच्ची लकड़ी के धब्बे Sap-stains

लकड़ी की तेल और मसालों से रक्षा करने के संक्षिप्त वर्णन को समाप्त करने से पहले आवश्यक प्रतीत होता है कि पेड़ के बाहर की कच्ची या सफ़ेद लकड़ी के बिगड़े रंग और धब्बों के बारे में कुछ बताया जाय। ये धब्बे उन बारीक कीड़ों के होने का प्रमाण होते हैं जो रेशों के बीच महीन कोठरियों में अपना भोजन पा लेते हैं, परन्तु किसी प्रकार लकड़ी की शारीरिक बनावट को कोई हानि नहीं पहुँचाते, केवल यही कि कुछ बदरंगी और बदसूरती पैदा कर देते हैं। बहुत से लोग इस बदरंगी के कारण लकड़ी को ख़राब समझने लगते हैं, यद्यपि ऐसा नहीं है।

इस बुराई से बचाने के लिये पेड़ की चिराई और कटाई के बाद लकड़ियों को नीचे लिखे हुए लोशन में डुबा लिया जाय।

बोरेक्स (Borax)………………५ प्रतिशत
लिगनासान (Lignasan)………२ प्रतिशत
डुईसाइड (Dowicide)…………५ प्रतिशत
सेन्टाब्राइट (Santobrite)………०·८ प्रतिशत

ऐसा करने से लकड़ी इस बदरंगी और उसके साथ बहुत-सी ख़राबियों से बच जाती है।

लकड़ी को आग सहने योग्य बनाना

लकड़ी जल जानेवाली चीज़ है, फिर भी इमारती आवश्यकताओं के लिये इतनी उपयुक्त है कि कई बातों में वह लोहे और कंक्रीट से अच्छी समझी जाती है। आग में झुलसना और जल जाना एक अवगुण है, परन्तु जिन मकानों में आग लग जाती है उनमें साधारणतः यह देखा गया है कि आग का सह न सकने से लोहे के गर्डर्स तक बुरी तरह ऐंठ जाते हैं और लकड़ी जलते-जलते भी सीधी रहती है और अपने बोझ को सँभाले रहती है।

यदि लकड़ी को उचित रूप से काम में लाया जाय और उस पर बढ़िया रोग़न और पेन्ट किया जाय, तो वह बड़ी हद तक आग को सहन करने के योग्य हो सकती है। लड़ाई के समय में हवाई हमलों की अधिकता और आग लगने का भय बढ़ जाने के कारण यह वस्तु और भी महत्त्वपूर्ण हो गई है।

लकड़ी के लिये एक अच्छे आग सहन करनेवाले मसाले में नीचे लिखी हुई विशेषताएँ होनी चाहिए--

(१) वह अपना प्रभाव स्थायी रूप से लकड़ी में स्थिर रख सके।

(२) वह उन मसालों के विपरीत न हो, जो लकड़ी को गलने-सड़ने से बचाने के लिये दिये गये हों।

(३) उसको लगाने के बाद लकड़ी को वार्निश, पालिश करने में कोई कठिनाई न हो।

(४) वह लकड़ी को कमज़ोर करनेवाला या उससे सम्बन्धित धातुओं को खानेवाला न हो।

(५) वह नमी को पीनेवाला न हो।

(६) वह सस्ता और कम खर्च भी हो।

अभी तक कोई उपाय ऐसा मालूम नहीं हुआ, जिसके द्वारा लकड़ी को पूर्ण रूप से आग सहने के योग्य बनाया जा सके, फिर भी कुछ दवाएँ और पेन्ट इत्यादि ऐसे अवश्य हैं जो बहुत कुछ लकड़ी को आग पकड़ने से बचाते हैं। इन्हें दो प्रकारसे काम में लाया जा सकता है:—

पहले वह जिनमें लकड़ी को पकाते या डुबोकर निकालते हैं।

दूसरे वह जो पालिश की तरह ऊपर फेरे जाते हैं। या खास लकड़ी के पालिश ही में मिला लिये जाते हैं।

लकड़ी को डुबोकर निकाल लिये जानेवाले मसाले प्लान्ट द्वारा पकाकर दिये जानेवाले मसालों से सस्ते रहते हैं और आग से बचने के लिये मामूली तौर से यथेष्ट हैं। इस काम के लिये एलमोनियम सलफ़ेट, एमोनियम फ़ासफ़ेट, एमोनियम कारवोनेट, एमोनियम सलफ़ेट, वोरेक्स, बोरिक एसिड, मेगनेशियम क्लोराइड, मेगनेशियम सलफ़ेट, सोडियम एसीटेट और सोडियम सिलीकेट में से हरएक उपयोगी हैं। परन्तु इनके प्रयोग में अधिक सावधानी की आवश्यकता है। इसलिये इन्हें सावधानी से काम में लाये जाने के वारे में फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, देहरादून से पूरी सूचना ले लेना आवश्यक है, जिससे लकड़ी को लाभ पहुँचने के स्थान पर हानि न हो जाय।

दूसरे, बाहर से पेन्ट या रोग़न की तरह लगाये जानेवाले मसाले बनाने और प्रयोग करने में वहुत सरल हैं और आग से साधारण वचाव के लिये काफ़ी होते हैं। जव लकड़ी अन्दर काम में लाई जाय, यानी वर्षा और सूर्य से उसका सामना न पड़े, चूने का पानी या कैलसिमिन, सोडियम सिलीकेट और साधारण नमक मिलाकर लगाना भी इस काम के लिये अच्छे होते हैं। इस प्रकार का दूसरा योग जो कई वर्ष से अमेरिका में काम में लाया जा रहा है, यह है कि ½ बुशल चूने के पकते हुए पानी में मिलाया

जाय और बर्तन का मुँह बंद रखा जाय, फिर उसमें थोड़ा सा नमक मिला दिया जाय, इसके बाद तीन पौंड चावल के आटे की लेई बनाओ और इस मिश्रण में फेंटते हुए मिला दो। साथ ही ½ पौंड स्पेनिश ह्वाइटिंग Spanish Whiting और १ पौंड सरेश अलग पानी में घोलकर तैयार रखो और उसमें मिलाते जाओ। फिर इस कुल तैयार किये हुए मिश्रण को एक सप्ताह तक इसी प्रकार रहने दो। बाद में जब आवश्यकता हो तो आग पर गर्म करो और ब्रुश से लकड़ी पर फेरते जाओ।

बाहर प्रयोग किये जाने की दशा में जब लकड़ी को धूप और वर्षा का सामना करना हो तो उसके लिये आग से बचानेवाला प्रभावपूर्ण रोग़न या पेन्ट बनाना कठिन है। यद्यपि बहुत से बाज़ारी मसाले इस काम के लिये मिलते हैं, और तैयार भी किये जा सकते हैं, परन्तु ये सब नाममात्र को हैं। सच तो यह है कि अभी तक कोई ऐसा मसाला नहीं मालूम किया जा सका जो लकड़ी को बाहर प्रयोग में लाये जाने पर पूर्ण रूप से आग से बचा सके।

फिर भी इस काम के लिये जो मसाले मार्केट में हैं उनमें "सेलन" "इन्ट्राबीन", "आइटेक्स" और "पोरसिला" अधिक प्रसिद्ध हैं। और यदि थोड़े-थोड़े समय बाद उन्हें लकड़ी पर लगाते रहें तो निश्चय है कि कुछ अंश तक लकड़ी में आग सहन करने की शक्ति बाक़ी रहे। इसी प्रकार यह योग भी उपयोगी है :—

मैगनेशियम ओक्साइड .... २ भाग

लोशन मैगनेशियम क्लोराइड (घनत्व १·२) .... २ भाग

एस्बेसटोज़ (बारीक पाउडर) .... १ भाग

अंत में इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि इन मसालों से इच्छानुसार लाभ प्राप्त करने के लिये लकड़ी की मोटाई जितनी कम हो, उतना ही अच्छा है जिससे मसाला अच्छी तरह

खप जाय। बहुत मोटी लकड़ियों में मसाला ज्यादा अन्दर तक नहीं जाता।

पाँचवाँ अध्याय

(आम हिन्दुस्तानी लकड़ियों का वर्णन)

अब हम संक्षिप्त रूप से हिन्दुस्तान की साधारण लकड़ियों का वर्णन करेंगे जिसमें उनके वज़न, सूखने की दशा और उनके प्रयोग इत्यादि के बारे में वर्तमान खोजों को थोड़े से शब्दों में प्रकट किया है।

अधिक जानकारी रखनेवालों को मालूम होगा कि बहुत सी लकड़ियों के वर्णन में पुरानी पुस्तकों में जो वर्णन दिया हुआ है उससे कहीं-कहीं अन्तर हो गया है, जिसका कारण यह है कि फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट में किये हुए प्रयोगों और खोजों के अनुसार जो चीज़ें पहली पुस्तकों में गलत सिद्ध हुई उनको ठीक करके अधिक सही बातें बताने का प्रयत्न किया गया है।

लकड़ी की जो क़ीमतें लिखी गई हैं, उनके बारे में यह याद रखना चाहिए कि क़ीमतें बहुधा घटती-बढ़ती रहती हैं। इसलिये भाव को केवल अन्दाज़ के रूप में समझना चाहिए। दूसरे जहाँ क़ीमत फ़ी टन दी गई है, उसका तात्पर्य ५० घनफ़ुट लकड़ी से है।

एबीज़ पिन्ड्रो Abiespindrow

व्यापारिक नाम—फ़र, देसी नाम राई, परतल, बदर, रेवर और टास।

वज़नः—लगभग ३३ पौंड प्रति घनफ़ीट हवा में सूखने के बाद

लकड़ी का दशा—इस पेड़ की लकड़ी चिकनी सफ़ेद कुछ बादामी

रंग की होती है, कच्ची और पक्की लकड़ी के रंग में कोई अन्तर नहीं होता। बहुत नर्म, कटाई-चिराई में आसान, परन्तु गाँठदार लकड़ी है और अच्छी लम्बाई में कोई टुकड़ा भी ऐसा नहीं मिलता जिसमें गाँठें न हों। फिर भी यदि गाँठें अधिक बड़ी न हों तो कोई बुराई नहीं।

यह देखने में स्प्रूस से मिलती-जुलती है और बहुधा उसी में मिली हुई बिकती है।

सुखाई:—यह हवा में सरलता से सूखनेवाली लकड़ी है, परन्तु गीली दशा में फफूँदी जल्दी लग जाती है और कुकुरमुत्ते निकल आते हैं। इसलिए चिराई के बाद इसे सुखाने में जल्दी करनी चाहिये। इसका चट्टा गोदाम के बाहर भी लगा सकते हैं। किन्तु उसे ऊपर से अच्छी तरह ढाँक देना चाहिये जिससे वर्षा और धूप से बचा रहे और लकड़ी फटने या तड़कने न पाये। यह लकड़ी किल्न में भी बहुत अच्छी तरह सूखती है।

मज़बूती:—यह चीड़ के बराबर मज़बूत होती है और यद्यपि देवदार से कमज़ोर है, परन्तु स्प्रूस से अधिक मज़बूत है। इसकी शक्ति के बारे में पूर्ण जानकारी के लिये पुस्तक के अंत में दिये हुए चित्र को देखिये।

पायदारी:—फ़र पायदार लकड़ी नहीं है और इसको जल्दी दीमक या घुन लग जाता है, विशेषतः जब लकड़ी ज़मीन के बहुत समीप या उसमें गड़ी हो। देहरादून में क़ब्रिस्तान के ढंग पर तजुर्बे के लिये इस लकड़ी के जो टुकड़े ज़मीन में गाड़े गये, उन्हें केवल दो वर्ष के भीतर दीमक चाट गई, इसलिये जब इसे रेल के स्लीपर के ढंग पर या किसी ऐसे ही बाहर के काम में लाया जाय तो अच्छी तरह रक्षात्मक मसाला और तेल इत्यादि लगाकर प्रयोग करना चाहिये। परन्तु इसका ध्यान रहे कि फ़र कठिनता से मसाले को लेती है और उसका बहुत कम प्रभाव पड़ता है इसलिये खूब भीगनेवाला मसाला देना चाहिये।

औज़ारों से अनुकूलता:—बहुत नर्म और बहुत आसानी से कटने-चिरनेवाली लकड़ी है ।

प्रयोग:—फ़र एक बहुत उपयोगी हल्की लकड़ी है । यह पैकिंग बक्स, पार्सलों और फलों के छीपों के लिये बहुत उपयुक्त है और सफ़री हल्के सामान, कैम्प, फ़र्नीचर इत्यादि के लिये अच्छी है। अपने वज़न के अनुसार काफ़ी मज़बूत भी है। हिमालय के पहाड़ी क्षेत्रों में इसको मकानों पर खपरैल की जगह लगाते हैं और यदि कोई अच्छा तेल लगाकर प्रयोग करें तो इस प्रयोजन के लिये बहुत अच्छी लकड़ी है । यह हिन्दुस्तान की उन दो-एक लकड़ियों में से है जो हवाई जहाज़ बनाने में काम आ सकती है । पंजाब-रेलवे इसको मसाला देकर स्लीपरों में प्रयोग करती है । इसकी प्लाई की लकड़ी भी बनाई जाती है; परन्तु गाँठें अधिक होने से इस काम में बहुत कठिनाई रहती है। इससे बढ़िया क़ागज़ बनता है, परन्तु दियासलाई के लिये अधिक उपयुक्त नहीं है ।

मिलने का स्थान:—पंजाब, काश्मीर, टेहरी गढ़वाल और उत्तरी हिन्दुस्तान के दूसरे पहाड़ी जंगलों में बहुधा मिलती है, परन्तु अभी इस लकड़ी का अधिक प्रचलन नहीं है इसलिये हर जगह नहीं मिलती । परन्तु यह अनुमान किया गया है कि यह सालाना तीस हज़ार टन के लगभग प्राप्त की जा सकती है । इस लकड़ी का प्रयोग पैकिंग बक्सों में शीघ्रता से बढ़ता जा रहा है। यह आम तौर पर स्लीपरों के साइज़ में जेहलम, वज़ीराबाद, लाहौर, ढिलवान, दुराहा, हरद्वार और जगाधरी इत्यादि जगहों से मिलती है । यदि इसके प्राप्त करने में कठिनता हो तो चीफ़ कन्ज़रवेटर आफ़ फ़ारेस्ट या कन्ज़रवेटर आफ़ फ़ारेस्ट यूटिलाइ-ज़ेशन सर्किल बारामूला काश्मीर को लिखना चाहिये ।

दर:—फ़र ज़्यादातर स्लीपरों के रूप में मिलती है,

कहीं-कहीं अच्छे बड़े नाप के लट्ठे भी मिल जाते हैं, विशेषकर जेहलम (पंजाब) से क़ीमत उचित होती है और ६ आने से १२ आने प्रति घनफुट के हिसाब से मिल जाती है।

स्लीपरों की सूरत में फ़र के साथ "स्प्रूस" के स्लीपर बहुधा मिले-जुले रहते हैं।

एकेसिया अरेबिका Acacia arabica

व्यापारिक नामः—बबूल। देसी नामः—बबूल, कीकर, गोवली, बबूर, करोवेल इत्यादि।

वज़नः—हवा में सूखने के बाद लगभग ५२ पौंड प्रति घनफ़ुट।

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी भूरे रंग की कुछ सफ़ेदी लिये हुए अधिक चौड़ी होती है। पक्की गहरे बादामी या ब्राउन रंग की होती है और उसमें हल्की स्याही की सी धारियाँ पड़ जाती हैं। लकड़ी में कोई गंध या स्वाद नहीं होता है। रेशे एक दूसरे से खूब गुथे हुए और टेढ़े होते हैं। बबूल की बहुत-सी किस्में हैं। अधिक प्रसिद्ध तेलिया और कोरिया हैं। तेलिया कोरिया से अच्छी समझी जाती है।

सुखाईः—बबूल ऐसी लकड़ी है जो उचित सावधानी के साथ हवा में सरलता से सुखाई जा सकती है। बरसात के अंत में इसकी कटाई-चिराई करके सूखने के लिये चट्टा लगवा देना चाहिये। यदि आवश्यकतानुसार गर्मियों में सुखाना हो, तो अच्छे बन्द गोदाम में चट्टा लगवाना चाहिये जिससे सूखी हवाओं से लकड़ी के फट जाने का भय न हो। बबूल के दो इंची मोटे तख़्ते एक साल के अन्दर हवा में सुखाये जा सकते हैं। यह लकड़ी किलन में भी बहुत सरलता से सूखती है।

मज़बूतीः—बबूल बहुत कठोर और मज़बूत लकड़ी है। यह सागोन से दुगुनी कठोर और चोट व धक्का सहने में उससे भी

कहीं अधिक है। ब्योरे के लिये पुस्तक के अंत में दिया हुआ चित्र देखिए।

पायदारीः—कच्ची लकड़ी पायदार नहीं होती, पक्की बहुत मज़बूत होती है, परन्तु साल और सागोन से कम।

अब तक बबूल को बिना किसी रक्षात्मक मसाले के प्रयोग किया जाता था। परन्तु अनुभव से ज्ञात हुआ कि रक्षात्मक मसालों और तेल इत्यादि के साथ यह लकड़ी तमाम बुराइयों का सामना कर सकती है। इन्स्टीट्यूट के क़ब्रिस्तानी प्रयोगों में यह तीन साल चली।

औज़ारों से अनुकूलताः—बबूल गीली दशा में कटने-चिरने में सरल, परन्तु सूखने पर कठोर हो जाता है, फिर भी औज़ारों के लिये ज्यादा कठिन नहीं होता और हाथ या मशीन से दोनों तरह सरलता से कट छँट सकता है। इस पर काफ़ी सफ़ाई आती है और कुछ मेहनत के साथ पालिश भी खूब हो जाता है।

प्रयोगः—बबूल जलाने के लिये बतौर ईंधन के बहुत पसन्द किया जाता है। इसका कोयला भी अच्छा होता है और हर वर्ष बड़ी मात्रा में इस काम में लाया जाता है। गाँववालों की आवश्यकताओं में बैलगाड़ी के मुख्य भाग—ढाँचा, पहिये, धुरे, बाँक और खेती के औज़ार—हल, पाया बनाने में बहुत काम आनेवाली लकड़ी है। यह बहुधा औज़ारों के दस्ते बनाने में भी काम आती है और डेरों-तम्बुओं के लिये भी इसके खूँटे बहुत अच्छे बनते हैं। रेल के कामों में भी जहाँ कहीं कठोर लकड़ी की आवश्यकता होती है तो बबूल को काम में लाते हैं। खानों के लिये इसके खम्भे भी अच्छे बनते हैं। तात्पर्य यह है कि जब मज़बूती के साथ-साथ कठोरता की भी आवश्यकता हो, तो यह एक उत्तम लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—बबूल के छोटे ही लट्ठे मिलते हैं, किन्तु

कहीं-कहीं बड़े भी मिल जाते हैं। यह हमारे देश के खुश्क भागों में हर जगह होता है, विशेष रूप से सिन्ध के प्रान्त में बहुतायत से पाया जाता है। इसके लिये कन्ज़रवेटर आफ़ फ़ारेस्ट कराची या यूटिलाइज़ेशन अफ़सर बम्बई, मद्रास, सी. पी., यू. पी. इत्यादि को लिखना चाहिये।

दर:—बबूल के छोटे लट्ठे ही अधिकतर बिकते हैं, जिनकी गोलाई ४-६ फ़ीट होती है। कुछ स्थानों से १८ फ़ीट तक लम्बे और ८ फ़ीट तक गोल लट्ठे भी मिल जाते हैं। अच्छे लट्ठों की क़ीमत ७५ रु० प्रतिटन या कुछ अधिक होती है। परन्तु घटिया लट्ठे ३० से ४० रु० प्रतिटन तक मिल जाते हैं, और यू. पी. में बैलगाड़ी में काम आने लायक लकड़ी २० रु० प्रतिटन तक मिल जाती है।

एकेसिया कैटेचू Acacia catechu

व्यापारिक नाम:—कच। देसी नाम:—खैर, काकू, कन।

वज़न:—५५ से ६५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने पर)।

लकड़ी की दशा:—कच्ची सफ़ेद, चिकनी और अधिक चौड़ी होती है। पक्की लकड़ी मटमैली, बादामी रंग की होती है, जो हवा लगने पर गहरा रंग पकड़ लेती है। यह एक बहुत कठोर और भारी लकड़ी है। इसमें कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे सीधे और किसी अंश तक घने होते हैं। इसके रेशों के बीच एक सफ़ेद रंग की वस्तु चिपकी रहती है, जो खेरसल कहलाती है और स्पष्ट दिखाई देती है। यह विभिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न आवश्यकताओं में काम आती है। यू. पी. में इससे मुख्यतः कत्था बनाने का काम लिया जाता है। परन्तु लकड़ी के रूप में कच अधिक उपयोगी नहीं है।

सुखाई:—सूखने के लिये कच माध्यमिक श्रेणी की कठोर लकड़ियों में गिनी जाती है। इसलिये इसे चीरने में जल्दी करनी

चाहिये, क्योंकि गीली दशा में यह सरलता से चिर सकती है, सूखने पर यह बहुधा सिरों पर से फटती है। बीच में भी महीन दरारें पड़ जाती हैं, यदि इसे मोटे तख्तों और बर्गों के नाप में सुखाया जाय। इसकी चिराई बरसात के अंत में करके नर्म मौसम में सुखाना अधिक उचित है, नहीं तो गर्म और खुश्क मौसम में चट्ट को अच्छी तरह ढककर सुखाने की आवश्यकता होगी। दो इंची मोटे तख्तों को हवा में सुखाने में एक वर्ष के लगभग लग जाता है। किल्न में सुखाने में कोई कठिनता नहीं होती।

मज़बूती:—कच बहुत मज़बूत और कठोर लकड़ी है। यद्यपि देहरादून में अभी इस बात की परीक्षा नहीं की गई कि यह कितनी मज़बूत है, परन्तु जहाँ तक विचार किया जाता है यह बबूल जैसा या उससे कुछ अच्छी लकड़ी है।

पायदारी:—इसकी कच्ची लकड़ी तो मज़बूत नहीं होती, परन्तु पक्की लकड़ी की आयु अधिक होती है। पियर्सन साहब के कथनानुसार बहुत अधिक समय तक भी न तो इसमें दीमक लगती है और न बदरंगी पैदा होती है। बहुत से मन्दिरों में इसकी चीज़ें सैकड़ों वर्ष से ज्यों की त्यों पाई गई हैं और पानी के जहाज़ों में भी यह बहुधा सफल प्रमाणित हुई है। देहरादून में किये गये क़ब्रिस्तानी प्रयोगों में तीन वर्ष बाद इसकी पाँच लकड़ियों में तीन बिलकुल ठीक पाई गईं और दो को नाममात्र को दीमक लगा था।

औज़ारों से अनुकूलता:—कच औज़ारों के लिये कठोर लकड़ी है और चिराई-कटाई में बहुत मेहनत लेती है, विशेष रूप से उस समय जब लकड़ी पुरानी और सूखी हो, समीप-समीप दाँतोंवाला भारी आरा इसको चीर सकता है। इसी प्रकार दूसरे कामों के लिये भी भारी औज़ार इस पर अच्छी प्रकार चलते हैं। इसमें सफ़ाई खूब आती है और पालिश भी अच्छी चढ़ती है।

प्रयोग:—अभी तक इस लकड़ी को अधिकतर कत्था ही बनाने

के काम में लाया जाता है। परन्तु यह वैसे भी एक अच्छी लकड़ी है और जहाँ कहीं पाई जाती है बहुत जल्दी बिक जाती है। लोग इसके मकानों के खम्भे बनाते हैं। धान कूटने के मूसल, कोल्हू, हल, तम्बुओं की खूँटियाँ, पाये और नाव इत्यादि की लकड़ियाँ इसकी बहुत अच्छी रहती हैं।

मि० किन्स इसको औज़ारों के दस्तों के लिये बहुत अच्छी लकड़ी बताते हैं। क्योंकि तमाम ऐसे कामों के लिये जिसमें मज़-बूती की आवश्यकता होती है, यह लकड़ी बहुत उपयोगी सिद्ध होती है, इसलिये लोग इसे हाथोंहाथ ख़रीद लेते हैं और यह स्थानीय ख़रीदनेवालों से नहीं बचने पाती।

मिलने का स्थान:—कच हिन्दुस्तान के ख़ुश्क ज़िलों में हर जगह थोड़ी-थोड़ी मिल सकती है। इसके बड़े लट्ठे नहीं मिलते, छोटे टुकड़े जो कत्थेवालों और दूसरी साधारण आवश्यकताओं के लिये यथेष्ट हों, मिल जाते हैं। इसका पेड़ यू. पी., बंगाल, सा.पी., मद्रास, बम्बई, आसाम, बिहार, उड़ीसा और पंजाब के भी कुछ हिस्सों में पाया जाता है। विशेष जानकारी के लिये इन्हीं प्रान्तों में से किसी प्रान्त के कन्ज़रवेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दर:—कच की क़ीमत लकड़ी से अधिक उसकी इस विशेषता पर निर्भर है कि उसमें से कत्था कितना निकाला जा सकता है। इसलिये जिन टुकड़ों पर खेरसल यानी सफ़ेद रंग की वस्तु अधिक होती है तो उसकी अधिक क़ीमत होती है, यद्यपि इससे लकड़ी में कोई विशेषता नहीं पैदा होती। पिछले ४ ५ वर्षों में यू. पी. में इसकी क़ीमत ३ रु० से १२ रु० तक प्रति पेड़ रही है। (सन् १९३७) बंगाल में बक्सा डिवीज़न में २५ रु० प्रतिटन और जलपाईगुरी फ़ारेस्ट में ३-४ रु० प्रति पेड़ रहा। उड़ीसा में ४० रु० से ५० रु० प्रतिटन, सी. पी. में ५० रु० से ६० रु० प्रतिटन और बम्बई में ६० रु० प्रतिटन तक।

एडाइना कार्डिफोलिया Adina cordifolia

व्यापारिक नाम—हल्दू। देसी नाम—हल्दू, करम, हेदी।
(दक्षिणी भारत)

वज़नः—४० पौं० प्रति घनफ़ुट हवा में सूखने के बाद।

लकड़ी की दशाः—हल्दू एक पीली या मटमैली पीली रंग की महीन साफ़ और सीधे रेशोंवाली लकड़ी है, जिसके कारण यह खराद के कामों और बेलबूटे काटने, छापे बनाने में बहुत पसन्द की जाती है, यद्यपि इन कामों के लिये इसे बाक्स उड से द्वितीय श्रेणी का समझा जाता है। इसकी कच्ची लकड़ी जो आरम्भ में सफ़ेदी लिये हुए होती है, धीरे-धीरे पक्की लकड़ी के रंग पर आ जाती है। इस लकड़ी पर सफ़ाई और चिकनाहट खूब आती है। इसमें कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। अधिकतर इसके रेशे सीधे ही होते हैं। केवल कभी किसी गाँठ इत्यादि के कारण तिरछे हो जाते हैं।

सुखाईः—हल्दू के सूखने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती और यदि इसे सूरज की किरणों से बचाया जाय तो बिना किसी गोदाम इत्यादि के भी सुखाई जा सकती है और इसमें कोई विशेष खराबी नहीं होने पाती। कभी-कभी सिरों पर से फट जाती है और कहीं-कहीं सतह पर से चिटक भी जाती है। इसकी गीली लकड़ी में कीड़ा जल्दी लग जाता है इसलिये पेड़ को गिरवाने के बाद चिरवाकर लकड़ी का चट्टा जल्दी लगवा देना चाहिये और यदि लट्ठों की हालत में कुछ समय के लिये रोकना हो तो पेड़ की छाल को अलग कर देना चाहिये। इसको हवा में सुखाने का उचित प्रबन्ध कर दिया जाय तो जल्दी सूखती है। देहरादून में इसके एक इंचा मोटे तख़्तों को ५० प्रतिशत नमी से सुखाकर ६ प्रतिशत पर लाने में केवल दो महीने लगे, यह किल्न में और भी

सरलता से सूखती है, परन्तु सुखाये जाने और काम में लाने के बाद हल्दू पर मौसमी हवा का बहुत प्रभाव पड़ता है। पियर्सन साहब के कथनानुसार इसका सामान बनाते समय २½ प्रतिशत की गुंजाइश लकड़ी के बढ़ने और सिकुड़ने के लिये रखनी चाहिये जैसा कि और भी बहुत-सी हिन्दुस्तानी लकड़ियों में ऐसा करने की आवश्यकता होती है।

मज़बूती:—हल्दू काफ़ी कठोर और मज़बूत लकड़ी है। यह सागोन से १० प्रतिशत अधिक कठोर है, परन्तु शक्ल व साइज़ बनाये रखने और लचक तथा मज़बूती में उससे कम है। इसकी शक्ति के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिये अंत में दिये हुए चित्र को देखिए।

पायदारी:—हल्दू यथेष्ट पायदार लकड़ी है। रेलवे इसको रेल-गाड़ियों में लगाती है, और दरवाज़ों की चौखटों, खिड़कियों और तख़्तों में इसका बहुत प्रयोग होता है। इससे मालूम होता है कि यह पायदार लकड़ी है। यदि इस लकड़ी पर रक्षात्मक मसाले, जिन्हें यह सरलता से पी लेती है, लगाये जायँ तो अधिक उपयुक्त है। देहरादून के कब्रिस्तानी प्रयोग में यह बिना किसी मसाले के ३½ वर्ष रही।

औज़ारों से अनुकूलता:—हल्दू की लकड़ी औज़ारों से काफ़ी अनुकूलता रखती और सरलता से चिर और कट जाती है। इसमें सफ़ाई ख़ूब आती है, जिससे यह ख़राद के कामों के लिये हिन्दुस्तान की उत्तम लकड़ियों में गिनी जाती है। रंग भी इस पर ख़ूब चढ़ता है। मि० किन्स के कथनानुसार इस पर काम करने का ख़र्च सागोन की अपेक्षा केवल ६५ प्रतिशत होता है, अर्थात् सागोन से ३५ प्रतिशत कम।

प्रयोग:—हल्दू न केवल हिन्दुस्तान में बल्कि यूरप में भी यथेष्ट प्रसिद्ध हो चुकी है। क्योंकि इसका रंग अच्छा और रेशे बारीक

होते हैं, इसलिये यह ख़राद के कामों के लिये बहुत उपयुक्त है। बेलबूटे काटने और घरेलू चीज़ों में इसे बहुत काम में लाया जाता है। हिन्दुस्तान में यह बच्चों के खिलौनों, कंघियों, ब्रुश के दस्तों और लकड़ी में जाली काटने के कामों में बहुत पसन्द की जाती है। लकड़ी के फ़ुटे (पैमाने) और अनाज नापने के "नापे" भी इसके बहुत बनते हैं। बरेली की "बाबिन" फ़ैक्टरी हल्दू को मिलों की आवश्यकताओं के लिये हर प्रकार के "बाबिन" बनाने की सबसे उत्तम लकड़ी समझती है। यद्यपि इन तमाम कामों के लिये यह अधिक खुश्क और फटनेवाली होने के कारण यूरप की विख्यात लकड़ी "बीच" की तुलना नहीं कर सकती फिर भी यह गुसलख़ानों, बावर्चीख़ानों और बेकरी (तन्दूर) की आवश्यकताओं में बहुधा काम आनेवाली लकड़ी है। यूरप और बर्मा में कमरों को सजाने के साज़-सामान के लिये हल्दू बहुत पसन्द की जाती है। हिन्दुस्तान में इससे पेन्सिल भी बनाते हैं, परन्तु कुछ सख़्त रहती है, और बिना किसी मसाले से मुलायम किये हुए इस काम के लिये उपयुक्त नहीं। एक रेलवे-वर्कशाप की रिपोर्ट है कि रेल के फ़र्श, छत और बाहरी हिस्सों के लिये सागोन के बाद हल्दू ही के तख़्ते अच्छे रहते हैं।

मिलने का स्थानः—हल्दू हिन्दुस्तान के सब जंगलों में थोड़ी-थोड़ी पाई जाती है। यू० पी०, गोंडा, और बहराइच डिवीज़न से और बंगाल, आसाम, बिहार, उड़ीसा, सी० पी०, बम्बई और मद्रास के जंगलों से यह यथेष्ट मात्रा में मिलती है। इसके बड़े लट्ठे बहुधा अन्दर से खोखले होते हैं, परन्तु इससे लकड़ी में कोई दोष नहीं पैदा होता। दूसरी बातों की जानकारी के लिये समीप के किसी कन्ज़रवेटर आफ़ फ़ारेस्ट या प्रान्त के यूटिलाइज़ेशन अफ़सर को लिखिए।

दरः—जैसा कि नियम है जो लकड़ी भिन्न-भिन्न भागों में पाई

जाती है उसकी क़ीमत में भी भिन्न-भिन्न जगहों में अन्तर हो जाता है। हल्दू भी उन्हीं लकड़ियों में से है। सन् १९३७ ई० के दर यह हैं:—

आसाम—२० फ़ुट लम्बे और ४½ फ़ुट गोलाई तक के लट्ठे ३७ रु० ८ आने प्रतिटन।

बंगाल—कुरसियांग और चटगाँव डिवीज़न के लट्ठे २५ रु० से ६० रु० तक प्रतिटन।

बिहार—बालामऊ और सिंगभूमि के ज़िलों के लट्ठे २२ रु० से ३२ रु० प्रतिटन।

बम्बई—डंडेली, हुबली, डंग्ज़ इत्यादि ज़िलों के लट्ठे १५ रु० से ६५ रु० प्रतिटन।

सी० पी०—तीन से पाँच फ़ुट तक की गोलाई के लट्ठे ५० रु० से ७५ रु० प्रतिटन।

उड़ीसा—सात और आठ फ़ुट गोलाई के लट्ठे ३१ रु० से ४४ रु० प्रतिटन।

मद्रास—लकड़ी की साइज़ और अच्छाई के अनुसार ३७ रु० से ७५ रु० प्रतिटन।

यू० पी०—१५ फ़ुट से अधिक लम्बाई और ८ से ९ फ़ुट गोलाई के लट्ठे गोंडा डिवीज़न से ७ रु० से ३५ रु० प्रतिटन।

अलबिज़िया की लकड़ियाँ Albizzia spp.

(१) अलबिज़िया लेबेक—व्यापारिक नाम—"कोको"। देसी नाम—सिरस, बेज (कुर्ग)।

(२) अलबिज़िया ओडोरेटिस्मा—व्यापारिक नाम—काला सिरस। देसी नाम—काला सिरस, खोकर सिरस।

(३) अलबिज़िया प्रोसेरा—व्यापारिक नाम—सफ़ेद सिरस। देसी नाम—सफ़ेद सिरस—बिलबागाई।

(४) अलबिज़िया स्टीपूलेटा—व्यापारिक नाम—बौमेज़ा। देसी नाम—बौमेज़ा।

वज़नः—"कोको" ४० से ४२ पौंड प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखी हुई)।

"काल सिरस" ५५ पौंड प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखी हुई)।

"सफ़ेद सिरस" लगभग ३८ पौंड प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखी हुई)।

लकड़ी की दशाः—सिरस की ये तीनों प्रसिद्ध क़िस्में लकड़ा के विचार से एक ही सी होती हैं। कच्ची लकड़ी सफ़ेद और आमतौर पर अधिक चौड़ी होती है। पक्की लकड़ी गहरे भूरे रंग की बहुत सुन्दर होती है। गहरे रंग की धारियाँ, रोग़न (पालिश) होने के बाद खूब भड़कीली और सुन्दर हो जाती हैं। इस लकड़ी के चौरस प्राकृतिक छिद्र काफ़ी मोटे होते हैं जिन पर अच्छी पालिश करने के लिये उन्हें अच्छी तरह भरने का आवश्यकता होती है। रेशे सीधे और इकसार होते हैं, परन्तु कभी-कभी थोड़े घूमे हुए भी होते हैं। सिरस की अच्छी लकड़ी हिन्दुस्तान की बहुत सुन्दर लकड़ियों में समझी जाती है।

सुखाईः—सूखने के विचार से सिरस को साधारण श्रेणी की कठोर लकड़ियों में गिनना चाहिये। यह सिरों पर से फटती है और बाहरी सतह से भी कुछ-कुछ चिटक जाती है। परन्तु यदि चट्टे को सावधानी और नियमित रूप से लगाया जाय और लकड़ी को धीरे-धीरे सुखाने का प्रयत्न करें तो वह बिना हानि पहुँचे हुए भी सूख सकती है। इसके एक इंची मोटे तख़्तों को हवा में सुखाने में ६ से ९ महीने लगते हैं और इससे मोटी लकड़ियों के लिये और अधिक समय चाहिये। इसके लट्ठों और मोटे तख़्तों के सिरों पर सफ़ेदा लगा देना चाहिये जिससे शीघ्र सूखने और फटने से रक्षा होती रहे।

सिरस किल्न में अधिक सरलता से सूखती है इसलिये यदि सम्भव हो तो सिरस की लकड़ी को हमेशा किल्न ही में सुखाया जाय। एक बार अच्छी तरह सूख जाने के बाद सिरस बहुत दिनों तक ठीक दशा में रहती है।

मज़बूतीः—कोको एक मज़बूत लकड़ी है और वज़न व कठोरता के विचार से सागोन के बराबर है। शक्ति के बारे में पूरी जानकारी के लिये पुस्तक के अंत में दिया हुआ चित्र देखिये।

काला सिरस वज़न में सागोन से अधिक भारी, कठोर और मज़बूत होता है, परन्तु सफ़ेद सिरस टीक से हलका और कुछ कमज़ोर होता है। परन्तु चोट और बोझ सहन करने में यह टीक से ३० और ४० प्रतिशत अधिक रहता है।

पायदारीः—सिरस बाहर प्रयोग किये जाने में अधिक पायदार नहीं सिद्ध होता। इसकी कच्ची लकड़ी रक्षात्मक मसालों को अच्छी तरह पी लेती है, परन्तु पक्की उतनी जल्दी नहीं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में अलबिज़िया स्टीपूलेटा २४ महीने, अलबिज़िया ओडोरेटिस्मा ४१ महीने और अल-बिज़िया लेबेक व अलबिज़िया प्रोसेरा ७५ से ८० महीने तक स्थिर रहे।

औज़ारों से अनुकूलताः—सिरस के जिन टुकड़ों में रेशे अधिक घूमे हुए होते हैं उनकी चिराई और कटाई में कठिनता होती है। फिर भी थोड़ा परिश्रम करने के बाद उस पर काफ़ी सफ़ाई आ जाती है और कई बार पालिश करने के बाद जब उसके छेद अच्छी तरह भर जाते हैं तो उसमें चमक व भड़क आ जाती है।

चीरते समय कोको से एक विशेष प्रकार की दुर्गंध निकलती है जो कष्टदायक होती है। इसी कारण बढ़ई इस लकड़ी से घबराते हैं। परन्तु सिरस की बाक़ी दोनों क़िस्में इस बुराई से दूर

हैं। सिरस प्लाई की लकड़ी के लिये अधिक उपयुक्त नहीं, परन्तु इसकी सीधी कटी हुई महीन तहें (Slices) अच्छी होती हैं और दूसरी लकड़ियों पर सजावट के लिये लगाने में काम देती हैं। यह बहुत सुन्दर लकड़ी है और इस पर यदि अधिक परिश्रम किया जाय तो इसकी सुन्दरता बहुत बढ़ जाती है।

प्रयोगः—सिरस विशेष ध्यान देने योग्य लकड़ी है। यह बढ़िया क़िस्म के फ़र्नीचर और मकान के अन्दर सजावट करने के लिये बहुत उपयुक्त है। इसकी तीनों क़िस्में रंग वग़ैरह और अपनी विशेष चमक-दमक बनाये रखने के विचार से बहुत प्रसिद्ध हैं। परन्तु शर्त यह है कि लकड़ी देखभाल और छाँटकर ली गई हो और उस पर मन लगाकर काम किया गया हो। सिरस डेस्कों, मेज़ों, कुर्सियों, परदे के बोर्डों, अलमारियों, दरवाज़ों, तस्वीरों के चौखटों यानी हर प्रकार के सजावटी कामों के लिये एक अच्छी लकड़ी है।

ब्रिटेन में कोको फ़र्श, दीवारों और रेल के कामों में बहुधा लाई जाती है। हिन्दुस्तान में इसे इमारती कामों में लाते हैं। इसके लोकप्रिय न होने के केवल दो कारण हैं:—

(१) कोको की चिराई में धसका पैदा होना।

(२) सफ़ेद सिरस को कुछ भागों में मुख्यतः बंगाल और यू० पी० में धार्मिक विचार से काम में न लाना।

मिलने का स्थानः—कोको सबसे अधिक अण्डेमान के टापुओं से आती है, परन्तु कुछ बंगाल, आसाम, बम्बई, मद्रास, सी० पी०, पंजाब और यू० पी० के प्रान्तों में भी होती है। १२ से ३० इंच चौरस और ३० फ़ीट लम्बाई तक के लट्ठे अण्डेमान से मिलते हैं। काला सिरस सी० पी०, आसाम, बम्बई, यू० पी०, उड़ीसा और

बोमेज़ा, थोड़ा-थोड़ा अण्डेमान, पंजाब और यू० पी० में होता है। अधिक जानकारी के लिये सबसे समीप के कन्ज़रवेटर आफ़ फ़ारेस्ट या चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर पोर्ट बलेयर (अण्डेमान) को लिखिये।

दर:—"अण्डेमान कोको" की क़ीमतें बहुत कम घटती-बढ़ती हैं और साधारणतः ८० से १०० रु० एफ० ओ० बी० पोर्ट बलेयर अण्डेमान के समीप होती है। (सन् १९३७) हिन्दुस्तानी कोको का क़ीमत अण्डेमान से हमेशा कम रहती है और सफ़ेद और काला सिरस दोनों की कोको से कम।

अलबिज़िया अमारा Albizzia amara

बम्बई के चीफ़ कन्ज़रवेटर आफ़ फ़ारेस्ट ने इच्छा प्रकट की है कि इस लकड़ी का भी वर्णन किया जाय। बम्बई में यह लाली के नाम से प्रसिद्ध है। यह लकड़ी कोको से बढ़िया होती है। पियर्सन साहब के कथनानुसार यह फ़र्नीचर इत्यादि के लिये रंग, चमक और अपनी विशेष काली रंग की धारियों के कारण बहुत ही सुन्दर लकड़ी समझी जाती है। हवा में सुखाने के बाद इसका वज़न ५४ पौंड प्रति घनफ़ुट रहता है। यह बहुत ही पायदार लकड़ी समझी जाती है। इस पर सफ़ाई भी खूब आती है इसलिये हर विचार से यह लकड़ी ध्यान देने योग्य है। यद्यपि अभी तक देहरादून में इस पर प्रयोग नहीं हो सका, फिर भी विचार किया जाता है कि अलमारियों इत्यादि के लिये यह बहुत ही अच्छी होती है। इसकी सप्लाई के लिये चीफ़ कन्ज़रवेटर आफ़ फ़ारेस्ट बम्बई, सी० पी० और मद्रास को लिखना चाहिये या मैसूर और ट्रावनकोर के जंगलात के अफ़सरों से जानकारी प्राप्त करनी चाहिये।

एलटिन्जया एक्सेल्सा Altingia excelsa

व्यापारिक नाम—जुटीली। देसी नाम—जुटीली।

वज़नः—४५ पौंड प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद) ।

लकड़ी की दशाः—कच्ची और पक्की लकड़ी लगभग एक ही रंग की होती है और एक दूसरे से अलग नहीं मालूम होती। रंग सुर्खी लिये हुए ब्राउन, लकड़ी कठोर और रेशे घूमे हुए होते हैं।

सुखाईः—यह लकड़ी हवा में कठिनता से सूखती है। स्थान-स्थान पर तड़क जाती है। डा० कपूर की सम्मति है कि जब लकड़ी गीली हो तभी इसकी चिराई-कटाई करा ली जाय और इसके बाद तुरन्त ही इसे धीरे-धीरे सुखाने की आवश्यकता होती है। अभी तक इस बात की खोज नहीं की जा सकी है कि यह किल्न में कैसे सूखती है।

मज़बूतीः—अभी तक देहरादून में इस लकड़ी पर इसकी मज़-बूती के सम्बन्ध में प्रयोग नहीं किये जा सके हैं। क्योंकि यह कठोर और मज़बूत लकड़ी है, इसलिये शक्ति में सागोन के बराबर ज़रूर होगी।

पायदारीः—जुटीली, बाहर प्रयोग किये जाने में भी एक पायदार लकड़ी सिद्ध हुई है। रक्षात्मक मसालों के बिना यह आसाम में रेलवे स्लीपर की शक्ल में ६ साल चली और देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में ८० महीने स्थिर रही। अगर इसको रक्षात्मक मसाला देकर बाहर के कामों में लाया जाय तो और भी अच्छी लकड़ी सिद्ध होगी। परन्तु जुटीली के अन्दर की पक्की लकड़ी रक्षात्मक मसालों को कुछ कठिनता से पीती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—सूखने पर औज़ारों के लिये भी यह एक कठोर लकड़ी सिद्ध होती है और इसको कठिनता से चीरा जा सकता है। गीली लकड़ी कुछ आसानी से वश में आ जाती है। फ़िर भी फ़र्नीचर या खराद इत्यादि के लिये यह एक अच्छी लकड़ी नहीं है।

प्रयोगः—जुटीली मोटे इमारती कामों और रेल स्लीपरों के लिये उपयुक्त लकड़ी है। बर्मा व आसाम में यह इसी काम में लाई जाती है और रक्षात्मक मसालों के साथ काफ़ी अच्छी रहती है।

मिलने का स्थानः—यह केवल आसाम के प्रान्त में होती है। इसका पेड़ बहुत बड़ा होता है, परन्तु लकड़ी अधिक प्रसिद्ध नहीं है। इसके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिये कन्सरवेटर आफ़ फ़ारेस्ट, शिलांग (आसाम), को लिखिये।

दरः—आसाम में यह लकड़ी अधिक क़ीमती नहीं है, परन्तु दूर के स्थानों में मँगाये जाने पर अवश्य क़ीमत बढ़ जायगी। आसाम में २४ फ़ीट लम्बे और ५ फ़ीट तक के गोल लट्ठे ४० रु० प्रति टन और १५ इंची चौरस टुकड़े १ रु० ७ आना प्रति घन फ़ुट होते हैं (१६३७)।

एनीसोपटेरा ग्लैब्रा (Anisoptera glabra)

व्यापारिक नाम—कांगमू, देसी नाम—कांगमू (बरमा) बायलम (बंगाल)।

वज़नः—लगभग ३६ पौंड प्रति घन फ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—यह एक हलकी, परन्तु यथेष्ट मज़बूत लकड़ी है। इस पर चमक और सफ़ाई खूब आती है। रंग बादामी, कुछ पिलाई और कहीं-कहीं कुछ सुर्ख़ी लिये हुए होता है। यह गुर्जन लकड़ी से बहुत कुछ मिलती जुलती है।

सुखाईः—अभी इसकी सुखाई पर ब्योरेवार प्रयोग करने की बारी नहीं आई है। अन्दाज़ से कहा जा सकता है कि इसके सुखाने में अधिक कठिनाई न होगी।

मज़बूतीः—इसकी शक्ति के बारे में पूरे प्रयोग किये जा चुके हैं, जिनका ब्योरा अंत में दिये हुए नक़शे में है। यह सागान से कुछ हलकी और कमज़ोर लकड़ी है।

पायदारीः—कांगमू अधिक पायदार लकड़ी नहीं है, और इसको कीड़ों और कुकुरमुत्तों से सुरक्षित रखने के लिये रक्षात्मक मसाले देना आवश्यक है। देहरादून के कब्रिस्तानी प्रयोग में इसके बिना मसाला दिये हुए ६ के ६ टुकड़े तीन वर्ष के भीतर दीमक ने खा डाले।

औज़ारों से अनुकूलताः—काम करने में सरल और औज़ारों के लिये बहुत सहल और आराम देनेवाली लकड़ी है।

प्रयोगः—यह बक्सों और पेटियों (पैकिंग केस) इत्यादि के लिये एक अच्छी और हल्की लकड़ी है और सस्ते क़िस्म के फर्नीचर के लिये भी उपयुक्त है। वर्मा में इसकी प्लाई की लकड़ी भी अच्छी बनी है।

मिलने का स्थानः—कांगमू केवल बर्मा और बंगाल के जंगलों में होती है। इसके ६ से १५ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे बहुधा मिलते हैं। यह लकड़ी केवल बर्मा से १००० टन सालाना तक मिली सकत है

दर—बर्मा से इसके लट्ठे रंगून में लगभग ५० रु० प्रतिटन के हिसाब से मिल सकते हैं (सन् १९३७)।

एनोगाइसस की लकड़ियाँ (Anogeissus species)

(१) एनोगाइसस एक्यूमिनाटा (यान)

(२) एनोगाइसस लेटिफ़ोलिया (एक्सिल उड)

व्यापारिक नाम—यान व एक्सिल उड, देसी नाम—बाकली धौरा, धावा, धाऊ इत्यादि।

बर्मा में यान

बंगाल में चकुआ

कुर्ग में डिंडीगा

तामिल में वेकाली के नाम से प्रसिद्ध है।

वज़नः—यान ५० से ५५ पौंड प्रति घन .फुट हवा में सूखने पर।
एक्सिसल उड ५८ से ६२ पौंड प्रति घन .फुट हवा में सूखने पर।

लकड़ी की दशाः—दोनों की कच्ची लकड़ी कुछ हरी व पीली भूरे रंग की और कभी कुछ पीला रंग लिये हुए हल्के भूरे रंग की होती है। पक्की लकड़ी चाकलेट (लाख) के रंग की सुर्खी लिये हुए होती है और अधिक मोटी नहीं होती। यानी कच्ची लकड़ी चौड़ाई में अधिक होती है, परन्तु दोनों प्रकार की लकड़ी वज़नी, मज़बूत, कठोर और लचकदार होती है। इसके रेशे खूब बारीक और एक दूसरे में गुथे हुए होते हैं। कभी बिलकुल सीधे और कभी कुछ घूमे हुए। दोनों लकड़ियाँ बहुधा एक ही सी होती हैं।

सुखाई—यान और एक्सिसल उड दोनों कठिनता से हवा में सूखनेवाली हैं। इन्हें सूखने की दशा में ऐंठने और सतह पर से महीन-महीन दराज़ों के रूप में फटने से रोकने के लिये बड़ी साव-धानी की आवश्यकता होती है। जिसके लिये इन लकड़ियों की चिराई-कटाई बरसात में या बरसात के समाप्त होने पर तुरन्त करा देने की आवश्यकता है; क्योंकि इस समय में यथेष्ट नमी रहती है। उसके बाद लकड़ी का चट्टा लगाकर उसे धीरे धीरे सुखाने के प्रयोजन से चारों ओर से अच्छी प्रकार ढक देना चाहिये। क्योंकि ये दोनों लकड़ियाँ बहुत ऐंठनेवाली हैं इसलिये अच्छा हो कि पहले उचित साइज़ के तख़्तों के रूप में सुखाएँ और फिर आवश्यकतानुसार उनमें से औज़ारों के दस्ते इत्यादि के लिये चौरस लकड़ियाँ काट लें। एकदम स्टाक को बहुत पतला काटना उचित नहीं। इस प्रकार डा० कपूर की सम्मति के अनुसार इन लकड़ियों का ऐंठना और मुड़ना बहुत सीमा तक कम किया जा सकता है। यान और एक्सिसल उड किलन में सुखाने में अधिक कठिनाई नहीं होती।

मज़बूतीः—ये लकड़ियाँ इतनी मज़बूत और लचकदार होती हैं

कि इन्हें "विलायती-ऐश" व "हिक्री" के स्थान पर फावड़ों, कुल्हाड़ियों और हर प्रकार के औज़ारों के दस्तों में प्रयोग किया जाता है, जिसके लिये ये काफ़ी प्रसिद्ध हो चुकी हैं। यान एक्सिलवुड की अपेक्षा अधिक उत्तम है, परन्तु औज़ारों के दस्तों के विचार से दोनों समान हैं और 'ऐश' की तुलना कर सकती हैं। शक्ति के विचार से यान बहुत कुछ हिक्री के बराबर है जो सारे संसार में औज़ारों के दस्तों के लिये सबसे उत्तम लकड़ी मानी जाती है। यान और एक्सिलवुड दोनों की शक्तियों का पूरा ब्योरा पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़शे में देखिए।

पायदारीः—दोनों में से एक लकड़ी भी अधिक पायदार नहीं। यान, एक्सिलवुड की अपेक्षा अधिक आयु पाती है। देहरादून के कब्रिस्तानी प्रयोग में यान के ६ टुकड़ों में से दो ६२ महीने तक स्थिर रहे, परन्तु एक्सिलवुड के टुकड़े ३१ ही महीने चले, जैसा कि ऊपर बताया गया है। इन लकड़ियों में कच्ची लकड़ी बहुत चौड़ी होती है इसलिये आवश्यक है कि जब उन्हें बाहर के काम में लाना हो तो कोई रक्षात्मक मसाला दे दिया जाय। कच्ची लकड़ी अच्छी तरह मसाले को सोख लेती है, परन्तु पक्की लकड़ी उतनी सरलता से मसाला नहीं सोखती।

औज़ारों से अनुकूलताः—दोनों लकड़ियाँ बहुत कठोर और मेहनत से चिरने-कटनेवाली हैं। यदि औज़ार अच्छे हों तो इन पर खूब सफ़ाई आती है और खराद इत्यादि के बाद काफ़ी चिकनाहट और सफ़ाई आ जाती है। दोनों लकड़ियाँ औज़ारों के दस्तों के लिये उत्तम मानी जा चुकी हैं, परन्तु शर्त यह है कि सुखाई बहुत सावधानी से की जाय। कुछ समय पहले तक इस प्रयोजन के लिये इनका अधिक प्रयोग नहीं किया जाता था, कदाचित् इसका यह कारण हो कि इसके सुखाने में कठिनाई होती थी। फिर भी यान और एक्सिलवुड दोनों हमेशा मज़बूत लकड़ियाँ समझी

गई हैं। इनकी बल्लियाँ, बैलगाड़ी के धुरे और हल की लकड़ियाँ बहुत पहले ही से पसन्द की जाती हैं, क्योंकि अब इनको सफलता-पूर्वक सुखाने के तरीके अच्छी तरह मालूम किये जा चुके हैं, इसलिए औज़ारों के दस्तों और बहुत से बारीक कामों में इनका प्रयोग किया जा रहा है। रेल के महकमों ने भी इन्हें इस प्रयोजन के लिये स्वीकृत कर लिया है। बर्मा यान के दस्ते इतने सफल हुए हैं कि विलायती पेश व हिकी के दस्तों का हिन्दुस्तान में आना बिलकुल बंद हो गया है। अन्दाज़ा किया गया है कि प्रति-वर्ष लगभग २० लाख दस्ते हिन्दुस्तान में बाहर से मँगाये जाते थे। इस प्रकार यान व एक्सिल उड के लिये बहुत उन्नति का क्षेत्र है।

मिलने का स्थानः—इस समय यान बर्मा से अधिक मात्रा में आता है जहाँ से इसके लट्ठे भी आते हैं और औज़ारों के दस्तों के लिये भिन्न-भिन्न नाप के छोटे टुकड़े भी आते हैं। उड़ीसा के रियासती जंगलों में भी यान बहुत होता है। अधिक जानकारी के लिये कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन सर्किल पेहलोन रंगून या फ़ारेस्ट एडवाइज़र ईस्टर्न स्टेट्स सम्बलपुर को लिखना चाहिये। एक्सिल उड भारत के पतझड़ होनेवाले जंगलों में पाई जाती है, परन्तु बर्मा व अण्डमान में नहीं होती। इसके पेड़ भी अधिक मोटे लगभग ५ फ़ीट से अधिक गोलाई के नहीं होते। कुछ ज़िलों में इसका पेड़ आमतौर से पाया जाता है और कुछ में बहुत कम। अधिक जानकारी के लिये किसी समीप के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखना चाहिये कि यू० पी०, सी० पी०, बम्बई, मद्रास, बिहार और उड़ीसा में किस स्थान से इसे मँगाया जा सकता है। बंगाल और आसाम के प्रान्तों में यह बिल-कुल नहीं होती।

दरः—बर्मा यान के ५ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे रंगून में ५० रु० प्रति टन या कुछ अधिक पर बिकते हैं। कलकत्ता पहुँचते-पहुँचते

इनकी क़ीमत ७५ रु० प्रति टन हो जाती है। पेन्सिल उड हर प्रान्त में भिन्न-भिन्न क़ीमत पर बिकती है। जंगलात के समीप के डिपो पर यह लगभग ५० रु० से ७५ रु० प्रति टन पर मिलती है (सन् १९३७)।

एनोगाइसस पेन्डुला (करधाई) (Anogeissus pendula)

सी० पी० के प्रान्त का एक छोटा पेड़ है जो संयुक्त प्रान्त के झाँसी फ़ारेस्ट डिवीज़न में भी बहुधा पाया जाता है और सी० पी० में सागर इसका मुख्य स्थान है, यह बहुत ही मज़बूत लकड़ी है। परन्तु बड़े साइज़ में न मिलने के कारण केवल औज़ारों के दस्तों के लिये ही काम आ सकती है जबकि बहुत ज्यादा मज़बूत दस्तों की आवश्यकता हो।

एन्थोसिफेलस कदम्बा (Anthocephalus cadamba)

व्यापारिक नाम—कदम्ब, देसी नाम कदम्ब, रोघू

वज़न—३४ पौं० प्रति घन फ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशा:—यह एक बड़े साइज़ में मिलनेवाली सीधे रेशों और समान बनावट की लकड़ी है। पूर्वी भारत और विशेष-रूप से आसाम और बंगाल में पैदा होती है। यह एक प्रसिद्ध परन्तु सादे किस्म की साधारण लकड़ी है।

सुखाई:—यह आसानी से सूखती है और सूखने की दशा में फटने और ऐंठने नहीं पाती। परन्तु इसको सुखाने में यदि जल्दी न की जाय तो फफूँदी और धब्बे पैदा हो जाते हैं। इसलिये इसके लट्ठों को तुरन्त चिरवाकर खुला चट्टा लगवा देना चाहिये जिससे हवा आती-जाती रहे, जहाँ तक हो सके चट्टा सायबान या गोदाम के अन्दर ही लगाया जाय।

मज़बूती:—कदम्ब साधारणतया मज़बूत और मुलायम लकड़ी है। शक्ति के विचार से यह सागोन की तुलना में ६५ से ८० प्रतिशत है।

पायदारीः— कदम्ब पायदार लकड़ी नहीं, यह सरलता से गल जाती है और इसमें बहुत जल्दी फफूँदी और कुकुरमुत्ता लगने की सम्भावना रहती है। फिर भी रक्षात्मक उपायों को काम में लाकर यह काफ़ी दिनों तक रह सकती है और मसाला देकर इसे बाहर के कामों में भी प्रयोग कर सकते हैं। देहरादून के कब्रिस्तानी प्रयोग में बिना मसाला दिये हुए इसके टुकड़े २३ महीने के भीतर दीमक ने खा डाले।

औज़ारों से अनुकूलताः—कदम्ब चिराई-कटाई में बहुत आसान और आराम देनेवाली लकड़ा है। इस पर सफ़ाई भी अच्छी आ जाती है। यह प्लाई उड के लिये भी बहुत उपयुक्त है।

प्रयोगः—बंगाल व आसाम में इसका प्रयोग बहुधा छतगीरी और हल्के इमारती कामों में होता है। सस्ते किस्म के पैकिंग-बक्स और हल्के तख़्ते इसके अच्छे रहते हैं। इससे दिया-सलाई भी अच्छी बनती है। रक्षात्मक मसालों के साथ आम आवश्यकताओं के लिये यह एक उत्तम और विश्वासनीय लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—आसाम प्रान्त की रिपोर्ट है कि कदम्ब के २४ फ़ीट लम्बे और ४ फ़ीट तक के गोल लट्ठे वहाँ से ३५० टन सालाना तक भेजे जा सकते हैं। बंगाल से कुरस्याग, चटगांव और बक्सा डिवीज़न से भी इसकी कुछ सप्लाई हो सकती है और बर्मा से जहाँ यह "मऊ लिटानशी" के नाम से प्रसिद्ध है और अण्डमान से भी इसे यथेष्ट मात्रा में मँगाया जा सकता है। अधिक जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन अफ़सर बंगाल और आसाम को लिखना चाहिये।

दरः—आसाम से लट्ठों के रूप में २८ रु० प्रति टन और ६ गज़ लम्बे और १ वर्ग फ़ुट मोटे चौकोर लट्ठे १ रु० २ आ० प्रति घन फ़ुट के हिसाब से मिल सकते हैं। लट्ठों की दशा और साइज़ के

अनुसार बंगाल से १८ रु० से ३० रु० प्रति टन तक मिल सकते हैं, (सन् १९३७)

आर्टोकारपस की लकड़ियाँ (Artocarpus species)

(१) आर्टोकारपस चपलाशा—व्यापारिक नाम—चपलाश।

(२) आर्टोकारपस हिरसुटा—व्यापारिक नाम—पेनी।

(३) आर्टोकारपस इनटेग्रीफ़ोलिया—व्यापारिक नाम—जैक।

(४) आर्टोकारपस लकूचा—व्यापारिक नाम—लकूच।

देशी नामः—साम, हिवालसू, कन्थल, धाऊ, भरस (बंगाल), पिलाबू (मालावार), हलासू (कुर्ग)

वज़नः—हवा में सूखने के बाद { चपलाश—३४ पौं० प्रति घन .फुट—पेनी ३७ पौं० प्रति घन .फुट
जैक—३६ पौं० प्रति घन .फुट—लकूच ४० पौं० प्रति घन .फुट

लकड़ी की दशाः—चपलाश कुछ पीलापन लिये हुए भूरे रंग की होता है। यह एक औसत दर्जे की कठोर सजाने के कामों में आनेवाली लकड़ी है यद्यपि इसके रेशे कुछ मोटे होते हैं। पेनी के बारे में इतना कह देना यथेष्ट है कि वह सागोन के समान और अपनी विशेषताओं में भी उसके बराबर है। जैक की ताज़ी कटी हुई लकड़ी कुछ पीले रंग की होती है। परन्तु हवा लगने पर कुछ भूरे रंग में बदल जाती है। इस पेड़ की विशेषता इसके फल के कारण ज्यादा है। परन्तु इसकी लकड़ी भी अच्छी होती है यदि यह अधिक मात्रा में मिल सके। लकूच रूप-रंग में जैक से मिलती-जुलती है और यह लकड़ी काफ़ी मात्रा में मिल सकती है। तात्पर्य यह है कि आर्टोकारपस की लकड़ियाँ बहुत अच्छी होती हैं। वह अपने विशेष पीलाहट लिये हुए बादामी रंग और सजावटी कामों के लिये उपयोगी होने के कारण उन प्रदेशों में भी बहुत लोकप्रिय और प्रसिद्ध हैं जहाँ वे पैदा होता हैं।

सुखाई:—आर्टोकारपस का सब लकड़ियाँ सरलता से सूख जाती हैं। यह किल्न में भी बहुत अच्छी तरह सूखती हैं। हवा में सुखाने के लिये चट्टा ज़रा खुला हुआ और अलग-अलग लगाना चाहिये जिससे हवा सुगमता से आ-जा सके।

मज़बूती:—चपलाश खूब मज़बूत लकड़ी है और शक्ति में सागोन के मुकाबिले में ७५ से ८० प्रतिशत है। ऐनी अपने वज़न के हिसाब से सागोन के बराबर मज़बूत कही जा सकती है; क्योंकि यह सागोन से लगभग १० प्रतिशत हलकी है और ताक़त में भी उतनी ही कम है। ऐनी साइज और बनावट को स्थिर रखने में सागोन के समान ही है। जैक-जहा तक शक्ति से तात्पर्य है चपलाश के बराबर है। इनकी शक्तियों के बारे में ब्योरा-पुस्तक के अंत में दिये हुए नकशे से ज्ञात होगा। लकूच कुछ भारी लकड़ी है और इस विचार से कुछ मज़बूत भी होगी, परन्तु इसकी शक्ति के बारे में अभी जाँच-परताल नहीं की जा सकी।

पायदारी:—आर्टोकारपस की लकड़ियाँ पायदारी में ऊँचे दर्जे की लकड़ियों के बराबर गिनी जाती हैं। ये सागोन के बराबर अधिक समय तक रहनेवाली हैं। परन्तु ये लकड़ियाँ रक्षात्मक मसाले नहीं पीतीं; विशेषकर चपलाश तो इस मामले में बहुत सख़्त प्रसिद्ध है। फिर भी ऐनी और जैक बिना मसाला दिये हुए बहुत से उपयोगी कामों में आ सकती हैं। मद्रास के मि० सी. सी. विलसन के कथनानुसार पच्छिमी घाट पर ऐनी की बनी हुई नावें दो-दो सौ वर्ष पुरानी बर्तमान हैं। देहरादून के कब्रिस्तानी प्रयोग में जैक, ऐनी और लकूच की लकड़ियाँ बिना रक्षात्मक मसालों के तीन वर्ष तक भूमि के भीतर सुरक्षित पाई गईं। केवल ऐनी और लकूच के टुकड़ों पर कुछ फफूँदी पाई गई।

औज़ारों से अनुकूलता:—चपलाश की कटाई-चिराई आसान है। परन्तु इसके रेशे कहीं-कहीं घूमे हुए होते हैं। जिससे इस पर

सफ़ाई लाने में कुछ परिश्रम करना पड़ता है। इस लकड़ी के प्राकृतिक छेद भी कुछ मोटे होते हैं। इसलिये पालिश करने से पहले उन्हें अच्छी तरह भरने की आवश्यकता है। यह लकड़ी खराद की चीजों और सजावटी बेलबूटे काटने के लिये उपयुक्त है। पेनी एक बहुत अच्छी लकड़ा है जिस पर औज़ार बहुत सरलता से चलते हैं। इसकी चिराई-कटाई सागोन से भी सरल है, और खराद के कामों और पालिश करने में यह सागोन से कम मेहनत लेती है। जैक भी औज़ारों के लिये सख़्त लकड़ी नहीं है और बढ़ई इस पर सरलता से काम कर सकते हैं। लकूच अवश्य चिराई में सख़्त है लेकिन देहरादून में इसके सम्बन्ध में कोई कठिनता प्रकट नहीं हुई और बर्मा से भी यही रिपोर्ट मिली है कि लकूच पर काम करने और पालिश इत्यादि में कोई कठिनता नहीं होती।

प्रयोगः—क्योंकि चपलाश एक औसत दर्जे की भारी और मज़बूत लकड़ी है इसलिये इमारती कामों, जहाज़, फ़र्नीचर और सन्दूकों इत्यादि के लिये अच्छी है। क्योंकि यह बहुत सुन्दर और सजावट के कामों के लिये अच्छी होती है। इसलिये उत्तम प्रकार के फ़र्नीचर और प्रदर्शन की चीजों में बहुत प्रयुक्त होती है। पेनी दक्षिणी भारत के प्रदेशों में यदि सागोन से अच्छी नहीं तो उसके बराबर अवश्य मानी जाती है और इमारती जरूरतों, गाड़ियाँ बनाने और फ़र्नीचर व खराद के कामों के लिये एक उत्तम लकड़ी समझी जाती है। परन्तु जितना माँग होती है उतनी नहीं मिलती, और यह लकड़ी बहुत जल्दी बिक जाती है। छोटे चौकोर टुकड़ों के रूप में यह कमरों में फर्श लगाने के लिये बहुत अच्छे दामों पर बिकती है।

जैक की सप्लाई भी बहुत कम है, परन्तु जहाँ वह मिल सकती है, मूल्य में अधिक नहीं होती, और विशेष फर्नीचर व इमारती काम के लिये बहुत अच्छी लकड़ी है। यह लकड़ी ब्रुश के दस्तों में

बहुत काम आती है और इसकी खराद की चीज़ें भी अच्छी बनती हैं।

लकूच मकान में काम आनेवाली एक अच्छी लकड़ी है और साधारण दर्जे के भारी फ़र्नीचर के लिये भी उपयुक्त है। यह नाव बनाने के भी काम आती है। यह एक क़ीमती लकड़ी है और अण्डमान के टापुओं में बन्दरगाहों के प्लेटफ़ार्म इत्यादि बनाने के काम में आती है।

मिलने का स्थानः—चपलाश आसाम व बंगाल में काफ़ी मिलती है और आवश्यकतानुसार अण्डमान के टापुओं से भी मिल सकती है। आसाम से इसके ६ फ़ीट गोलाई तक के लट्ठे लगभग ३५० टन सालाना मिल सकते हैं और बंगाल से इससे भी कुछ अधिक। ऐनी केवल दक्षिणी भारत और बम्बई के प्रान्त से मिलती है, परन्तु इसकी माँग हमेशा इसकी सप्लाई से बढ़ी रहती है। अधिक जानकारी के लिये कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट बम्बई या यूटिलाइज़ेशन अफ़सर मद्रास को लिखना चाहिए। जैक भारत के गर्म ज़िलों में हर जगह पाई जाती है, परन्तु कम और लगाई हुई यानी प्राकृतिक रूप से जंगल में नहीं पैदा होती। फिर भी यह लकड़ी मद्रास और बम्बई के प्रान्तों से बड़ी मात्रा में मँगाई जा सकती है।

लकूच बम्बई व मद्रास के पश्चिमी प्रदेशों और आसाम व बंगाल में पाई जाता है, परन्तु यह भी कम ही होती है और अधिकतर लगाई हुई, आम जंगलों के रूप में यह भी नहीं पाई जाता।

दरः—आसाम में चपलाश के १८ फ़ीट लम्बे और ६ फ़ीट तक की गोलाई के लट्ठे ४५ रु० प्रति टन और चिरे हुए २४ फ़ीट लम्बे और १½ फ़ीट के चौरस लट्ठे १ रु० ८ आ० प्रति घन फ़ुट के हिसाब से मिलते हैं। बंगाल का भाव २५ रु० से ५० रु० प्रति टन रहता है (सन् १९३७)।

पेनी के लट्ठे मद्रास में २० रु० से ५० रु० प्रति टन और बम्बई में ४० रु० व ५० रु० प्रति टन तक मिलते हैं (सन् १९३७)।

जैक और लकूच की लकड़ियाँ स्थानीय बाज़ार में ही बिक जाती हैं और दामों में चपलाश के बराबर होती हैं।

बेटूला अल्नाइडीज़ (Betula alnoides)

व्यापारिक नाम—इंडियन बर्च या नागा बर्च—देशी नाम ह्लोसुनली—सौर-साँस (बंगाल)

वज़नः—बंगाल की लकड़ी का वज़न ४१ पौं० प्रति घन फ़ुट होता है और संयुक्त प्रान्त की लकड़ी का ३२ पौं० प्रति घन फ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह अच्छी साफ़ और सीधे रेशोंवाली सफ़ेद या कुछ भूरे रंग की लकड़ी है जो कि विशेष प्रकार का गन्ध या स्वाद नहीं र ती। यह फ़र्नीचर के भीतरा भाग बनाने और मुख्य कामों के लिये बहुत उत्तम है। हिन्दुस्तानी लकड़ियों में से यही वह सबसे अच्छी लकड़ी है जिससे विलायती की तरह उत्तम प्रकार की प्लाई उड बनाई जा सकती है। यह हिमालय पर पैदा होनेवाले बर्च, बेटूला, सिलेन्ड्रोस्टेक्स से बहुत मिलती है।

सुखाईः—अभी तक इंडियन बर्च के सूखने की हालत पर कोई नियमित रूप से खोज नहीं की जा सकी। परन्तु यह कलकत्ते की एक टिम्बर फ़र्म के उपयोग में रही है। उन्होंने इसके सूखने में तो कोई कठिनाई नहीं बताई, परन्तु इसके जोड़ों के बारे में उनका कहना है कि वे किसी अंश तक खुल जाते हैं। देहरादून में प्लाई की लकड़ी बनाने में यह आसानी से सूख गई और कोई ख़राबी नहीं हुई।

मज़बूतीः—अभी तक कई और लकड़ियों के समान इसकी शक्ति के बारे में जाँच नहीं की जा सकी, परन्तु पियर्सन साहब के कथनानुसार नैपाल की तरफ़ यह लकड़ी काफ़ी मज़बूत

समझी जाती है और देहरादून में इसकी प्लाई उड पर जो प्रयोग किये गये उनसे मालूम हुआ कि वह बाहर से आई हुई लकड़ियों की तुलना में उत्तम है। चाय के पैकिंग बक्सों की सूरत में भी इसकी प्लाई बहुत अधिक अच्छी निकली जिससे यह एक अच्छी और मज़बूत लकड़ी प्रतीत होता है।

पायदारी:—नैपाल में इसको काफ़ी पायदार लकड़ी समझा जाता है (पियर्सन) परन्तु इसके पेड़ को गिराने के बाद यदि अधिक दिनों तक भूमि पर पड़ा रहने दें तो फफूँदी और दाग़-धब्बे पैदा हो जाते हैं इसलिये इसको पायदार और दीमक इत्यादि के असर को सहन करनेवाली लकड़ी नहीं कहा जा सकता। अभी इस बात के भी प्रयोग नहीं किये जा सके हैं कि रक्षात्मक मसालों के साथ यह लकड़ी कितनी आयु पा सकती है।

औज़ारों से अनुकूलता:—यह लकड़ी औज़ारों के लिये बहुत नर्म और आसानी से वश में आनेवाली है। इसकी चिराई और कटाई सहल है। इसकी प्लाई उड बनाने और इससे ख़रादी हुई चीज़ें तैयार करने में भी सरलता रहती है। इसमें सफ़ाई भी खूब आती है। देहरादून में इसकी बहुत सी वस्तुएँ बनाई गईं। यह लकड़ी हर प्रकार से औज़ारों के अनुकूल पाई गई।

प्रयोग:—जैसा कि बताया जा चुका है कि यह प्लाई उड बनाने के लिये बहुत ही उपयुक्त और फ़र्नीचर के भीतरी भाग बनाने के लिये एक उत्तम लकड़ी है। ख़रादी चीज़ें भी इससे बहुत अच्छी बनती हैं। यह हलके औज़ारों जैसे पेचकश, आरी और रन्दों के दस्तों के लिये बहुत उपयुक्त है। यह ग्रामोफ़ोन के बाजों और रेडियो के बक्सों के लिये भी बहुत अच्छी है। परन्तु दुख है कि अभी इसकी प्राप्ति यथेष्ट नहीं है। यह कलकत्ते के बाज़ारों में छोटे साइज़ में कुछ मिल जाती है।

मिलने का स्थान:—बंगाल के उत्तरी भाग में यह सालाना

५० हज़ार घन .फुट के लगभग मिल सकती है जो ज्यादातर छोटे साइज़ के गज़ भर लम्बे लट्ठों के रूप में होती है। एक लट्ठे का वज़न डेढ़ मन से कुछ ही कम होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि जो कुछ प्राप्ति इस लकड़ी की इस समय है वह रस्सों के द्वारा है, जिससे बड़े साइज़ के लट्ठे नहीं लाये जा सकते। यह हिमालय के तमाम पहाड़ी इलाकों में पैदा होती है परन्तु यातायात की कठिनाइयों के कारण बाहर नहीं लाई जा सकती।

दरः—बंगाल में इसकी क़ीमत चिरे हुए छोटे लट्ठों के रूप में ५० से ८० रु० प्रति टन रहता है (सन् १९३७) परन्तु ख़ास कलकत्ते में इससे कुछ अधिक। अधिक सूचना के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाईज़ेशन अफ़सर अलीपुर, कलकत्ते को लिखना चाहिए।

बिशोफ़िया जवानिका (Bischofia Javanica)

व्यापारिक नाम—बिशप उड—देशी नाम उरेम (आसाम) पेनथाला, नीली (कुर्ग) चोलावेंगा (मालाबार) केन्जल (नैपाल)

वज़नः—३५ से ४८ पौं० प्रति घन .फुट, विभिन्न स्थानों की लकड़ियों का वज़न भिन्न-भिन्न होता है।

लकड़ी की दशाः—यह लकड़ी भूरे रंग की सुर्खी लिये हुए होती है। कभी गहरी लाली के साथ। इसकी रगें व रेशे सीधे और मोटे, परन्तु समान होते हैं। इसमें से सजावटी कामों के लिये भी लकड़ी निकाली जा सकती है, परन्तु साधारणतया यह मोटे इमारती कामों की ही लकड़ी है।

सुखाईः—सूखने में यह लकड़ी कुछ एंठती और तड़कती है इसलिये इसको धीरे-धीरे सुखाना चाहिये जिससे ये बुराइयाँ कम पैदा हों। किलन में इसकी सुखाई अच्छी होती है।

मज़बूतीः—बिशप उड टूटने और कठोरता में सागोन जैसी लकड़ी है, परन्तु दूसरे प्रकार की शक्तियों में यह सागोन की तुलना

में ७५ से ८० प्रतिशत है। पूर्ण ब्योरे के लिये अंत में दिये हुए नक़शे को देखिये।

पायदारी:—यह मध्यम श्रेणी की पायदार लकड़ियों में गिनी जाती है परन्तु ऐसी नहीं है कि बिना रक्षात्मक मसाले के ख़राब दशाओं का सामना कर सके। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यह साढ़े चार साल चली। इसकी कच्ची लकड़ी आसानी से मसाला पी लेती है परन्तु पक्की नहीं। इसके क्रियोज़ोट पिलाये हुए स्लीपर आसाम में १५ वर्ष तक बिछे रहे। इसकी कच्ची लकड़ी ४-५ पौं० प्रति घन फ़ुट के हिसाब से मसाला पी लेती है। परन्तु पक्की पर केवल बाहर ही बाहर मसाले का प्रभाव पड़ता है।

औज़ारों से अनुकूलता:—विशप उड औज़ारों के लिये आसान लकड़ी है। इस पर सफ़ाई भी अच्छी आती है और पालिश भी ख़ूब चढ़ती है।

प्रयोग:—यह लकड़ी आसाम में काफ़ी प्रसिद्ध है और इमारतों में इसका बहुत प्रयोग होता है। यह रेल के स्लीपरों में भी काम में लाई जाती है परन्तु इसके स्लीपर रक्षात्मक मसाले के बिना ४-५ वर्ष से अधिक नहीं चलते। इसमें से फ़र्नीचर के लिये भी लकड़ी निकाली जा सकती है परन्तु अधिकतर यह इमारतों के ही काम की लकड़ी है।

मिलने का स्थान:—यह विशेष रूप से बंगाल और आसाम ही से मिलती है। बंगाल के बक्सा डिवाज़न में यह बहुत होता है और थोड़ी बहुत दूसरे डिवीज़नों में भी मिलता है जहाँ से इसकी निकासी हो सकती है। आसाम से यह ४००-५०० टन प्रति वर्ष २५ फ़ीट लम्बे और ५ फ़ीट गोल लट्ठों के साइज़ में मिल सकती है और आवश्यकतानुसार मद्रास के जंगलों से भी कुछ मिल जाती है।

दर:—आसाम में इसके लट्ठे ३८ रु० प्रति टन और दो फ़ीट

लम्बे चौकोर टुकड़े १ रु० ४ आ० प्रति घन फ़ुट के हिसाब से मिलते हैं (सन् १९३७)। बंगाल में इसकी क़ीमत २० से ३० रुपये प्रति टन रहती है और मद्रास में २७ से ३४ रुपये प्रति टन तक (सन् १९३७)।

बाम्बेक्स की लकड़ियाँ (Bombax species)

(बाम्बेक्स मालाबारिकम और बाम्बेक्स इनसिग्नि)

व्यापारिक नामः—सेमल जो बाम्बेक्स की दोनों जातियों के लिये प्रयुक्त होता है।

देसी नामः—सेमल, बुरुगा (कुर्ग) पूला (मालाबार) दीदू इत्यादि।

वज़नः—बाम्बेक्स मालाबारिकम का वज़न २३ पौं० प्रति घन-फ़ुट और बाम्बेक्स इनसिग्नि का इससे कुछ भारा होने के कारण ३० पौं० प्रति घन फ़ुट रहता है। १२ प्रतिशत नमी रहने पर।

लकड़ी की दशाः—सेमल की लकड़ी भारत में इतनी प्रसिद्ध है कि इसके बारे में अधिक वर्णन करने की आवश्यकता नहीं। यह एक नर्म हलकी, हल्के बादामी रंग की लकड़ी है जिसके प्राकृतिक छेद काफ़ी मोटे होते हैं। यह जल्दी नष्ट हो जाने-वाली लकड़ी है। पेड़ को गिराने के बाद कटाई, चिराई होते-होते फफूँदी और कुकुरमुत्ता इस पर असर करने लगता है, फिर भी इसकी गिनती हिन्दुस्तान का उपयोगी लकड़ियों में है। यह बहुता-यत से मिलती है और साथ ही सस्ता भी है। इसके होते हुए भी इसकी माँग दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है फिर भी देश के प्रत्येक भाग में यह सरलता से मिल जाती है। सेमल भारत की ऐसी लकड़ी है जैसे कि यूरप और अमेरिका में डील उड है।

सुखाईः—क्योंकि सेमल की लकड़ी को जल्दी कीड़ा लग जाता है, विशेष रूप से गर्म और तर प्रान्तों में, इसलिये इसके सुखाने में जल्दी करनी चाहिये। इस काम के लिये चिराई के बाद लकड़ी

को किसी दीवार इत्यादि के सहारे धूप में खड़ा करना और थोड़ी थोड़ी देर बाद उसे उलटते-पलटते रहना चाहिए। लकड़ी को चट्टे में लगाने से पहले उसका नमी को निकाल देना अधिक अच्छा है या पहले किल्न में अधिक टेम्परेचर पर सुखा लेने से भी अच्छा फल निकलता है। इस प्रकार तेज़ सुखाने में तख़्तों के कुछ ऐंठ जाने या सिरों पर से फटने का डर अवश्य है। परन्तु लकड़ी से अतिरिक्त नमी निकाल देने के बाद कीड़े इत्यादि के लगने का डर दूर हो जाता है।

इस लकड़ी को सुखाने का दूसरा अच्छा उपाय यह है कि चिराई के बाद सब लकड़ियों को साफ़ पानी में डाल दिया जाय और महीने सवा महीने बाद सुखाने के लिये अच्छी तरह अलग-अलग चट्टा लगा दिया जाय जिससे लकड़ियों को खूब हवा लगती रहे। इस प्रकार यह लकड़ी बहुत अच्छी तरह सूखती है। परन्तु सबसे उत्तम यह है कि जहाँ तक हो सके सेमल को किल्न में ही सुखाया जाय। किल्न में यह बड़ी सरलता से सूखती है। जिन लोगों को इस लकड़ी का बड़े पैमाने पर कारबार करना हो उन्हें चाहिये कि साथ ही एक छोटी सी किल्न भी लगवा लें जिससे वर्ष भर सूखी हुई अच्छी लकड़ी का प्रबन्ध रहे।

मज़बूतीः—सेमल उन लकड़ियों में से नहीं है जिन्हें मज़बूती के विचार से काम में लाया जाता है। यह एक नर्म और कमज़ोर लकड़ी है। बाम्बेक्स इनसिग्नि मालाबारिकम से अवश्य किसी अंश तक भारी और कठोर होती है परन्तु अधिक मज़बूत नहीं होती। यह दोनों प्रकार के सेमल हल्के रंगीन फ़र्नीचर इत्यादि के लिये तो ठीक हैं परन्तु इमारती कामों के लिये उपयुक्त नहीं।

पायदारीः—सेमल और दीदू दोनों कमज़ोर लकड़ियाँ हैं। इनको बहुत जल्दी कीड़ा लग जाता है और वह जल्दी सड़ने और गलने

लगती है। परन्तु इसके साथ ही साथ यह रक्षात्मक मसालों को बहुत अच्छी तरह पीती है। इसके बाद इनकी आवश्यक रक्षा हो जाती है। इसलिये मसाला दिये हुए सेमल के टुकड़े देहरादून में काफ़ी दिनों तक रहे और उनमें कोई ख़राबी नहीं पैदा हुई जब कि विना मसाला दिये हुए टुकड़े को कुछ ही हफ़्तों में दीमक लगने लगी।

औज़ारों से अनुकूलता:—औज़ारों के लिये सेमल हिन्दुस्तान की सबसे मुलायम लकड़ियों में से है। इस पर सफ़ाई भी अच्छी आती है। क्योंकि इसके छेद मोटे होते हैं इसलिये यह अच्छे प्रकार की पालिश के लिये उपयुक्त नहीं। छेदों को भर देने के बाद इस पर अच्छी तरह से रंग किया जा सकता है। इसकी प्लाई उड भी खूब बनती है परन्तु दूसरी प्लाई की लकड़ियों से कमज़ोर होती है। यद्यपि इसके चाय के पैकिंग बक्स भी बनाये जाते हैं परन्तु वह दूसरी प्लाई के बक्सों के समान काफ़ी मज़बूत नहीं होते। इसलिये इसके बक्सों को हल्के ही कामों में लाना चाहिये जहाँ अधिक मज़बूती की आवश्यकता न हो।

प्रयोग:—सेमल की लकड़ी, जैसा कि बताया जा चुका है, बहुत से कामों में आती है। इससे दियासलाई भी बनती है। यद्यपि इस काम के लिये यह "पेस्पेन" के बराबर अच्छी नहीं। इसके पैकिंग-केस और बक्स भी बहुत बनाये जाते हैं। कलकत्ते की एक पैकिंग-केस बनानेवाली फ़र्म में हर महीने ३०० टन सेमल की लकड़ी ख़र्च होती है। इसके तख़्तों से छतगीरी और बहुत सी हल्की किस्म की चीज़ें बनाई जाती हैं। हिन्दुस्तान में यदि लकड़ी को रक्षात्मक मसाले देने के काम ने काफ़ी प्रसिद्धि पा ली होती तो यह लकड़ी और भी बहुत से उपयोगी कामों में लाई जा सकती थी।

मिलने का स्थान:—सेमल, पंजाब और सिंध के अतिरिक्त

हिन्दुस्तान के प्रत्येक भाग में पाया जाता है। जानकारी के लिये किसी समीप के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखना चाहिए इसके ६ फ़ीट से ८ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे मिल जाते हैं। अण्डमान के टापुओं में इसकी बहुत पैदावार होती है जहाँ से यह लगभग १००० टन सालाना मिल सकती है। आसाम व बंगाल से भी यह लकड़ी काफ़ी संख्या में मँगाई जा सकती है। दूसरे प्रान्तों में भी इसकी पैदावार काफ़ी है, परन्तु उतनी ही माँग भी है। इसलिये यह मालूम करने की आवश्यकता है कि किस स्थान से प्राप्ति में सुगमता और लाभ हो सकता है।

दर:—सेमल की क़ीमत विभिन्न स्थानों में अलग-अलग है। अण्डमान में इसके लट्ठे २२ रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी ३५ रु० से ४५ रु० प्रति टन तक बेची जाती है। (सन् १९३७)

आसाम से २८ रु० प्रति टन और १ वर्ग .फ़ुट के १२ गज़ तक लम्बे वर्ग १ रु० २ आ० प्रति घन .फ़ुट के भाव से मिलते हैं। (सन् १९३७)

बंगाल और संयुक्त प्रान्त में इसके लट्ठे २५ से ३० रु० प्रति टन बिकते हैं और शेष प्रान्तों में निम्नलिखित भाव रहता है। (सन् १९३७)

सी० पी० तीन से चार फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे ३० से ४५ रु० प्रति टन।

मद्रास में ६ से २७ रु० प्रति टन तक (लकड़ी की दशा के अनुसार)।

उड़ीसा—१९ से ४० रु० प्रति टन तक। ७–८ फ़ीट गोलाई के लट्ठे।

बम्बई—७० रु० प्रति टन तक।

बिहार—२२ से २५ रु० प्रति टन तक।

बासवेलिया सिराटा (Boswellia serrata)

व्यापारिक नामः—सलाई, देशी नाम—सलाई, कुंगली (तामिल)

वज़नः—३२ से ३६ पौं० प्रति घन फ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—इसमें कच्ची लकड़ी अधिक होती है जो सफ़ेद, मैले और भूरे रंग की होती है। पक्की लकड़ी भूरे रंग की कुछ हरापन लिये हुए और उसमें बहुधा गहरे रंग की धारियाँ पाई जाती हैं। परन्तु पक्की लकड़ी पुराने पेड़ों में निकलती है जो आमतौर पर बहुत कम होती है। इसलिये सलाई की लकड़ी से तात्पर्य कच्ची ही लकड़ी से होता है। यह लकड़ी कुकुरमुत्ते के लगने से बहुत जल्दी बदरंग हो जाती है और पायदारी के कामों के लिये उपयुक्त नहीं। शायद ही सलाई की लकड़ी का कोई टुकड़ा बदरंगी के दोष से मुक्त हो।

सुखाईः—उपरोक्त बातों के होने के कारण इस लकड़ी को हानि से बचाते हुए हवा में सुखाना बहुत कठिन है। इसकी चिराई व कटाई गर्म और खुश्क मौसम में करके लकड़ी का खूब फैला हुआ चट्टा लगाना चाहिए जिससे हवा सरलता से आती-जाती रहे और लकड़ी जल्द सूख जाय। सलाई की कच्ची लकड़ी सूखने में कुबड़ी तो अवश्य हो सकती है, परन्तु फटती नहीं। इसके विरुद्ध इसकी पक्की लकड़ी कठोर और कठिनता से सूखनेवाली होती है। इसलिये कच्ची और पक्की लकड़ी को अलग-अलग सुखाना चाहिए। कच्ची लकड़ी किलन में अच्छी प्रकार से सूखती है।

मज़बूतीः—सलाई मज़बूत लकड़ी नहीं है। और जहाँ मज़बूती की आवश्यकता हो इसे काम में न लाना चाहिए, फिर भी सेमल की तुलना में यह मज़बूत होती है और रक्षात्मक मसालों के साथ हल्के इमारती कामों में लगाई जा सकती है। शक्ति के बारे में दिये हुए पूर्ण ब्योरे को पुस्तक के अंत में देखिए।

पायदारीः—सलाई भारत की बहुत कम पायदार लकड़ियों

में से है। और जहाँ इससे केवल कुछ ही महीनों के अतिरिक्त अधिक समय तक काम लेना हो तो इसमें रक्षात्मक मसाला अवश्य लगा देना चाहिए। सलाई की अन्दर की पक्की लकड़ी काफ़ी मज़बूत और बहुत दिनों तक टिकनेवाली होती है। देहरादून के कब्रिस्तानी प्रयोग में वह ३½ वर्ष तक स्थिर रही। अच्छा रक्षात्मक मसाला सलाई की लकड़ी की मज़बूती और आयु बढ़ाने में और उसको कई एक अच्छे कामों में प्रयोग किये जाने के योग्य बना सकता है।

औज़ारों से अनुकूलताः—सलाई की चिराई-कटाई और उस पर काम करना बिलकुल सरल है। परन्तु सफ़ाई लाने और पालिश करने में यह कुछ परिश्रम चाहती है। पालिश करने से पहले छेदों को अच्छी तरह भर देने की आवश्यकता है। इसकी पक्की लकड़ी पर पालिश खूब खिलता और भला मालूम देता है।

प्रयोगः—सलाई की गणना हिन्दुस्तान में "सिन्ड्रेला उड" की सी लकड़ियों में है। क्योंकि यह जल्दी बदरंग हो जाती है और फफूँदी भी जल्दी लग जाती है इसलिये यह बात हमेशा इस लकड़ी की व्यावसायिक उन्नति में बाधा डालती रहेगी। फिर भी इसको जल्दी सुखाने का उपाय करने और रक्षात्मक मसाले लगाने से बहुत कुछ इसके दोषों को दूर किया जा सकता है। अभी इसका प्रयोग आमतौर पर सस्ते प्रकार के बक्सों, पेटियों, मामूली काम के तख़्तों और घटिया फ़र्नीचर ही में होता है। इसकी दिया-सलाई भी बनाई जाती है, परन्तु बरसात के तर महीनों में इसे काम में नहीं लाते। इसका यह कारण है कि इसमें जल्दी धब्बे पड़ जाते हैं और यह कुरूप हो जाती है। सलाई प्लाई उड बनाने में भी बहुत काम में लाई जाती है, परन्तु नमीवाले प्रान्तों में बहुत सावधानी चाहती है। सलाई के पीपे और सीमेन्ट के नलके भी अच्छे बनते हैं, और सस्ते प्रकार का कागज़ भी इससे अच्छी तरह बनाया जाता है।

मिलने का स्थानः—सलाई सी० पी०, मद्रास, बम्बई, बिहार, उड़ीसा के जंगलों और संयुक्त प्रान्त के झाँसी-डिवीज़न में बहुत अधिकता से पाई जाती है। मध्य भारत के खुश्क ज़िलों में भी इसका पेड़ आमतौर पर पाया जाता है। बहुधा इसके ६ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे मिल जाते हैं, यद्यपि अधिकतर पेड़ ५ फ़ीट से कम गोलाई ही के होते हैं। कुछ प्रदेशों में सलाई के लगातार जंगल वर्तमान हैं। आवश्यकता हो तो यह लकड़ी प्रतिवर्ष बहुत बड़ी मात्रा में मिल सकती है। सी० पी० के नीमर फ़ारेस्ट और बम्बई के पूर्वी खान्देश के जंगलों से यह ५ हज़ार टन प्रतिवर्ष से अधिक प्राप्त हो सकता है। सलाई की माँग अभी कम, परन्तु पैदावार अधिक है। यदि इसे सावधानी से सुखाया जाय और मसालों से इसकी रक्षा का प्रयत्न किया जाय तो इस लकड़ी का प्रयोग बढ़ सकता है और इससे काफ़ी लाभ भी उठाया जा सकता है।

दरः— बिहार—१६ रु० से २२ रु० प्रति टन। (सन् १६३७)
मद्रास व सी० पी०—२५ रु० से ४० रु० प्रति टन।

अधिक जानकारी के लिये उपरोक्त प्रान्तों में किसी समीप के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिए।

ब्राइडेलिया रेटूसा (Bridelia retusa.)

व्यापारिक नाम—इस लकड़ी के लिये अभी तक कोई नाम नहीं है। देशी नाम—खाजा, काशी, कासी इत्यादि हैं।

वज़नः—लगभग ४७ पौं० प्रति घन फ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—यह एक बादामी या भूरे रंग की लकड़ी है, जिसमें कभी-कभी रेशों के घुमाव के कारण हलकी धारियाँ पड़ी हुई मालूम होती हैं। मध्यम श्रेणी की वज़नी और साधारण मोटाई के रेशोंवाली लकड़ी है जैसा कि मि० एच० पी० ब्राउन के कथन से स्पष्ट है "......एक द्वितीय श्रेणी की अच्छी लकड़ी......"।

सुखाई:—यह कठिनता से सूखनेवाला और सूखते समय ख़राब होनेवाली लकड़ी है। इसकी चिराई-कटाई गीली दशा में कर लेनी चाहिए और घना चट्टा जैसा कि कठोर लकड़ियों के बारे में बताया जा चुका है, लगा देना चाहिए।

मज़बूती:—यद्यपि इस लकड़ी पर देहरादून में पूर्ण रूप से शक्ति सम्बन्धी प्रयोग अभी नहीं हुए, फिर भी जितना मालूम किया जा सका है, उससे ज्ञात होता है कि यह एक मध्यम श्रेणी की वज़नी और कठोर लकड़ी है और शक्ति में लगभग सागोन की लकड़ी के बराबर है।

पायदारी:—यह लकड़ी काफ़ी पायदार है। रौजर साहब के कथनानुसार बर्मा में मकान बनाने के लिए इसके खम्भे अधिकतर प्रयोग में लाये जाते हैं। इससे पता चलता है कि यह काफ़ी दिन रहनेवाली लकड़ी है।

औज़ारों से अनुकूलता:—इस लकड़ी में सरलता से सफ़ाई आ जाती है और इस पर औज़ारों के चलाने में भी कठिनता नहीं होती। इसके रेशे काफ़ी बारीक और घने होते हैं जिससे यह खराद के काम को अच्छी और खुदाई व नक़्क़ाशी के लिये उपयुक्त है। प्लाई उड के लिये अभी इस पर प्रयोग नहीं किये गये हैं। विचार किया जाता है कि इस काम के लिये यह कुछ कठोर होगी।

प्रयोग:—यह भारत की उन लकड़ियों में से है जो अधिकतर उन्हीं प्रान्तों में काम आ जाती है, जहाँ वह पैदा होती है और देश के दूसरे भागों के लिये तिजारती मद में नहीं आती, यह मकानों के खम्भों, कड़ी, फ़र्श की लकड़ियों और दूसरी घरेलू आवश्यकताओं की लकड़ी है। इसके अतिरिक्त काश्तकारी के औज़ारों और गाड़ियों में भी काम आती है। रक्षात्मक मसालों के लग जाने पर यह एक अच्छी इमारती लकड़ी हो सकती है।

मिलने का स्थान:—बम्बई, बिहार, उड़ीसा और बंगाल के

प्रान्तों में यह यथेष्ट मात्रा में पैदा होती है और मध्य भारत के कुछ ज़िलों में भी पाई जाती है। अधिक जानकारी के लिये इन प्रान्तों के कन्सर्वेटरों में से किसी एक को लिखिए।

दरः—बंगाल के चट गाँव के जंगलों से यह १६ रु० से ३१ रु० प्रति टन तक मिल सकती है।

बिहार प्रान्त से २२ रु० से २५ रु० प्रति टन बम्बई के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों से ६ रु० से ३५ रु० प्रति टन और उड़ीसा से १६ रु० प्रति टन लट्ठों की दशा में मिल सकती हैं, जिनकी गोलाई की औसत ५ फ़ीट है (सन् १६३७)।

बुखानेनिया लैटीफ़ोलिया (Buchanania latifolia)

व्यापारिक नामः—अभी तक निश्चित नहीं है। देसी नाम—पियाल, चरौली, चिरौंजी इत्यादि।

वज़नः—लगभग २६ पौं० प्रति घन फुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—एक बदरंग भूरी या कुछ मैलापन लिये हुए भूरे रंग की लकड़ी है जिसमें कहीं-कहीं पीले रंग के धब्बे होते हैं और स्थान-स्थान पर फफूँदी और कुकुरमुत्त के लक्षण प्रतीत होते हैं। यह एक हलका, सीधे परन्तु मोटे रेशों वाली लकड़ी है और हाथ फेरने से खुरदरी मालूम होती है।

सुखाईः—इस लकड़ी के सूखने में वैसे तो कोई कठिनता नहीं होती, परन्तु इसमें फफूँदी और कुकुरमुत्ता जल्दी लग जाता है इसलिये इसको जल्दी सुखा लेने की आवश्यकता होती है। चिराई के बाद छीदा-छीदा चट्टा लगा देना चाहिए जिससे खूब हवा आ-जा सके। इस प्रकार सावधानतापूर्वक काम लेने से लकड़ी सफलता से सुखाई जा सकती है। यह एक नर्म लकड़ी है और सरलता से सूखने के लिए प्रसिद्ध है।

मज़बूतीः—यद्यपि इस लकड़ी पर देहरादून में अभी तक शक्ति के सम्बन्ध में प्रयोग नहीं किये जा सके परन्तु विचार किया जाता

है कि यह अपने वज़न के अनुसार काफ़ी मज़बूत लकड़ी होगी। अपनी पैदावार के क्षेत्रों में यह चारपाइयों और इमारती कामों में बहुत प्रयोग की जाती है जिससे पता चलता है कि यह एक औसत दर्जे की पायदार लकड़ी है। बहुत अच्छी लकड़ियों में इसकी गिनती नहीं की जा सकती।

पायदारीः—फफूँदी और बदरंगी ले आने के कारण यह लकड़ी अधिक दिन चलनेवाली नहीं हो सकती। इसलिये बिना रक्षात्मक मसालों के यह विशेष कामों के लिये उपयुक्त नहीं। इसके प्राकृतिक छेद काफ़ी मोटे होते हैं जिससे यह रक्षात्मक मसालों को अच्छी तरह पी सकती है। अभी तक देहरादून में रक्षात्मक मसालों के सम्बन्ध में भी इस पर कोई प्रयोग नहीं किया जा सका।

औज़ारों से अनुकूलताः—इसकी चिराई-कटाई सरल है और सफ़ाई भी इस पर काफ़ी आ जाती है। प्लाई उड बनाने के लिये इस पर अभी प्रयोग नहीं किये गये हैं। एक मैच फ़ैक्टरी दियासलाई बनाने के लिये इसे ठीक बताती है।

प्रयोगः—यह उन जंगली लकड़ियों में से है जो हिन्दुस्तान में बहुत सी जगहों में पाई जाती हैं, परन्तु जो सबकी सब स्थानीय आवश्यकताओं को ही पूरा करने में खत्म हो जाती हैं और व्यापार के लिये इसको बाहर नहीं भेजा जाता।

चूँकि यह लकड़ी ऐसी है जो कुछ क्षेत्रों में काफ़ी पैदा होती है, इसलिये आवश्यकता है कि इसके प्रयोग को बढ़ाया जाय और रक्षात्मक मसालों के द्वारा इसे अधिक उपयोगी कामों में लगाया जाय। यह हिन्दुस्तान की उन लकड़ियों में से है जिसे बहुत कम काम में लाया गया है।

मिलने का स्थानः—बम्बई, मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश और मद्रास के प्रान्तों से यह प्रचुर मात्रा में मिल सकती है। फिर भी इसके अधिक मोटे लट्ठे नहीं मिल सकते। चूँकि इसका

पेड़ छोटा ही होता है, इसलिये आमतौर पर ८ फ़ीट तक लम्बे और २ से ३ फ़ीट तक की गोलाई के लट्ठे मिलते हैं। अधिक जानकारी के लिये सबसे समीप के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दरः—चूँकि यह लकड़ी बड़े नाप में नहीं मिल सकती, इसलिये शायद ही इसकी क़ीमत बढ़ सके। बम्बई में २५ रु० से ३५ रु० प्रति टन तक, उड़ीसा में १६ रु० प्रति टन तक इसकी क़ीमत है। दूसरे प्रान्तों में भी इसकी क़ीमत साधारण ही होगी (सन् १६३७)।

कैलोफ़िलम की लकड़ियाँ (Calophyllum species)

(१) कैलोफ़िलम इनोफ़िलम (वूमा)
(२) कैलोफ़िलम स्पेकटाबाइल (लालचीनी)
(३) कैलोफ़िलम टोमेनटोसम (पून), (बोबी)
(४) कैलोफ़िलम वाइटियेनम (पून)

व्यापारिक नामः—पून। देसी नामः—पांतागा, वूमा, पुनाल, लालचीनी, पोनियट (अण्डेमन) और कामदेब (बंगाल)

वज़नः—४१ से ४८ पौंड प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—हिन्दुस्तानी कैलोफ़िलम की सब लकड़ियाँ एक दूसरे से मिलती-जुलती हैं। इनका रंग पीलापन लिये हुए भूरा होता है जिसमें कहीं-कहीं सुर्खी की झलक भी होती है। टक्कर पर काटने से इसमें कुछ गहरे रंग की धारियाँ मालूम होती हैं। जब ये धारियाँ खूब पक्की हों और स्पष्ट दिखाई दें तो पून को सजावट की चीज़ें बनाने के काम में लाया जा सकता है। यह एक मज़बूत इमारती लकड़ी है। इसका पेड़ बहुत बड़ा होता है, इसलिये इसकी लकड़ी बड़े कामों में लगाई जा सकती है जब कि कई एक दूसरी अच्छी लकड़ियाँ पून की तुलना में कम प्राप्त

की होने के कारण अनुपयोगी रहती हैं। पून हिन्दुस्तान के लकड़ी के विभागों में पहले ही से एक विख्यात लकड़ी है। जिस समय लकड़ी के छोटे-छोटे जहाज़ बनाने का चलन था तो उसके बड़े भाग और ढाँचे इसी के बनाये जाते थे। फिर भी पियर्सन साहब का कहना है कि इसमें बहुत कम लकड़ी साधे रेशोंवाली मिलती है। अधिकतर रेशे घूमे हुए होते हैं।

सुखाई:—पून की लकड़ियों में से किसी के सूखने में कठिनाई नहीं होती। उचित गोदाम में अच्छे बत्तों के साथ समुचित रूप से चट्टा लगाया जाय तो ये लकड़ियाँ बिना किसी तरह की हानि के सूख सकती हैं, यद्यपि इनमें से कैलोफ़िलम वाइटियेनम औरों से कुछ कठोर है और कुछ अधिक सावधानी चाहती है जिससे सूखने में तड़कने न पाये।

पून के लट्ठों में छाल के कारण कीड़ा बहुत जल्दी लग जाता है, इसलिये लट्ठों पर से छाल को उतरवा देना चाहिए।

मज़बूती:—बम्बई से आनेवाली पून की दो क़िस्मों पर और मद्रास की एक क़िस्म पर देहरादून में शक्ति के सम्बन्ध में प्रयोग किये जा चुके हैं जिसका ब्योरा पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़शे में दिया गया है। यह कठोर और मज़बूत लकड़ी है जो शक्ति में लगभग सागोन के समान ही है। कैलोफ़िलम वाइटियेनम सागोन से १० प्रतिशत अधिक कठोर है परन्तु वज़न में सागोन के बराबर है जब कि दूसरी क़िस्में सागोन से कुछ हलकी और कठोरता में लगभग उसके बराबर हैं।

पायदारी:—पून की लकड़ियाँ काफ़ी पायदार होती हैं और अच्छी तरह सूखने पर यथेष्ट आयु तक पहुँचती हैं। भूमि के अन्दर और बाहर प्रयोग करने के लिये इनको रक्षात्मक मसाला दे देना चाहिए। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में पून की लकड़ियाँ लगभग छः

साल चलीं। इसकी कच्ची लकड़ी सरलता से मसालों को पी लेती है, परन्तु भीतर की पक्की लकड़ी मशीन के दबाव के साथ भी मसालों को नहीं पीती। इसलिये जब पून को रक्षात्मक मसालों के साथ काम में लाना हो तो जितनी ही वह कच्ची हो उतना ही अच्छा है।

औज़ारों से अनुकूलताः—पून पर औज़ार अच्छी तरह चलते हैं और चिराई-कटाई में कोई कठिनता नहीं होती। इसकी सीधे रेशों की लकड़ी पर सफ़ाई भी सरलता से आ जाती है परन्तु घूमे हुए रेशोंवाले टुकड़ों पर कुछ अधिक मेहनत और तेज़ औज़ारों की आवश्यकता होती है। सफ़ाई आने पर इस लकड़ी पर पालिश भी खूब चढ़ता है। पून प्लाई उड के लिये अच्छी लकड़ी नहीं सिद्ध हुई। बहुधा रेशों के सीधा न होने से इसे बारीक तहों में काटना और बाद में फटने से रोकना कठिन हो जाता है। परन्तु वैसे बारीक तख़्तों में चीरे जाने के लिये पून बिलकुल ठीक है और देहरादून में इसके तख़्तों के नमूने पिछले बीस वर्ष से अब तक बहुत अच्छी हालत में हैं।

प्रयोगः—इमारती कामों के लिये इसे उत्तम प्रकार की लकड़ी समझना चाहिए। यह काफ़ी बड़े नाप में मिलती है, इसलिये इंजीनियरों और कारीगरों को इस लकड़ी की ओर आकर्षित होने की आवश्यकता है। सजावट के कामों में यह लॉरेल और शीशम की तुलना तो नहीं कर सकती फिर भी पून के कोई-कोई टुकड़े, जिनमें गहरी धारियाँ हों, बहुत अंश तक खूबसूरत और अच्छे होते हैं।

मिलने का स्थानः—पून मुख्यतः दक्षिणी भारत, पश्चिमी घाट और कुर्ग के प्रान्तों से मिलती है। बंगाल में चटगाँव की ओर से भी पून काफ़ी मात्रा में आ सकती है परन्तु इसकी एक क़िस्म लालचीनी (कैलोफ़िलम स्पेक्टाबाइल) केवल अण्डेमन के

टापुओं से मिलती है और वह भी कम। अधिक जानकारी के लिये चीफ़ कन्सर्वेटर मद्रास, बम्बई या चीफ़ फ़ारेस्ट आफ़ीसर कुर्ग को लिखना चाहिए।

दरः—"बम्बई पून" की क़ीमत ४४ रुपया प्रतिटन लट्ठों की सूरत में और बंगाल व चिटगाँव में ३१ रुपयों से ४१ रुपया प्रतिटन है (सन् १९३७)।

कैनेरियम की लकड़ियाँ (Canarium species) ?

(१) कैनेरियम बेंगालेन्सी

(२) कैनेरियम स्ट्रिक्टम

(३) कैनेरियम यूफ़िलम

व्यापारिक नामः— धूप या सफ़ेद धूप। कभी-कभी इसे हिन्दुस्तानी सफ़ेद महागनी भी कहा जाता है। देसी नामः—धूप, कुन्थिरीकम (मालाबार), धूपा, गुग्गलधूप इत्यादि।

वज़नः—कैनेरियम यूफ़िलम २६ से ३० पौ० प्रति घनफ़ुट, कैनेरियम बेंगालेंसी १९ पौ० प्रति घनफ़ुट और कैनेरियम स्ट्रिक्टम ३८ पौ० प्रति घनफ़ुट।

लकड़ी की दशाः—धूप की लकड़ी आमतौर पर सफ़ेद पीलापन लिये हुए या हल्के बादामी रंग की होती है। इसकी कच्ची लकड़ी जल्दी बदरंगी और धब्बे ले आती है। व्यापारिक दृष्टिकोण से कैनेरियम की गिनती अच्छी लकड़ियों में होती है। ये काफ़ी बड़े नाप में प्रचुर मात्रा में मिलनेवाली लकड़ियाँ हैं। विशेष रूप से कैनेरियम यूफ़िलम, जिसको "अण्डेमन धूप" कहते हैं, हिन्दुस्तान की लकड़ी की बहुत बड़ी आवश्यकता को पूरा करती है। यह अपने हल्के वज़न और सफ़ेद रंग के कारण दियासलाई और पैकिंग बक्स बनाने के लिये बहुत उपयोगी लकड़ी है। दुर्भाग्य से पश्चिमी घाट, बंगाल और आसाम के क्षेत्रों में 'धूप'

बहुत कम होती है। परन्तु जहाँ वह प्रचुर मात्रा में होती है उसकी उपयोगिता और क़ीमत को अच्छी तरह समझा जा चुका है।

सुखाईः—धूप की लकड़ियाँ मुलायम और जल्दी सूखनेवाली हैं। कुछ सावधानी के साथ ये सरलता से बहुत कम खराबी आये हुए जल्दी सूख जाती हैं। फिर भी यह फफूँदी लगने और बदरंगी ले आनेवाली लकड़ियाँ हैं और गाली दशा में इनको जल्द कीड़ा लग जाता है, इसलिये इसके लट्ठों पर से छाल को जल्दी ही अलग कर देना चाहिये और चिराई-कटाई के बाद लकड़ियों को सुखाने में जल्दी करनी चाहिये। ऐसी लकड़ियाँ किल्न में बहुत अच्छी तरह सूखती हैं। यदि ऐसा सम्भव न हो तो, जैसा कि सेमल के लिये बताया गया है, इन लकड़ियों को पहले एक दूसरे से मिलाकर धूप में खड़ा करना चाहिये और कुछ सूखने पर फिर चट्टा लगाना चाहिये जिससे उनकी अतिरिक्त नमी जल्दी निकल जाय और फफूँदी और बदरंगी का भय कम हो जाय। उन जगहों में जहाँ वर्ष में अधिक समय तक मौसम तर रहता है इस क़िस्म की लकड़ियों को किल्न के बिना सफलतापूर्वक सुखाना कठिन है। यदि लकड़ी का प्रयोग अधिक हो तो इसके लिये किल्न लगवा लेना व्यापारिक दृष्टि से लाभदायक है।

मज़बूतीः—कैनेरियम स्ट्रिक्टम दूसरी दोनों क़िस्मों से अधिक कठोर और भारी लकड़ी है, इसलिये इसको दूसरी श्रेणी की मज़बूत लकड़ियों में गिन सकते हैं।

"अण्डेमन धूप" सागौन की तुलना में ५० से ६० प्रतिशत शक्ति रखती है और कठोरता में इससे भी कम है, परन्तु यह लकड़ी अपने सफ़ेद रंग और सफ़ाई के लिये बहुत पसन्द की जाती है और मिलती भी बहुत है।

कैनेरियम स्ट्रिक्टम के प्लाई उड के चाय के बक्स देहरादून में बहुत सफल सिद्ध हुए।

पायदारीः—धूप की लकड़ियाँ पायदार नहीं होतीं। इनको कीड़ा लग जाता है और इनमें फफूँदी व बदरंगी भी जल्दी पैदा हो जाती है। इन बुराइयों को रोकने के लिये आवश्यक है कि इन लकड़ियों को सुखाने में जल्दी की जाय और विशेष पायदारी के कामों में लगाये जाने के लिये इनमें रक्षात्मक मसाला लगा लेना चाहिये जिसे ये लकड़ियाँ सरलता से सोख लेती हैं और इस प्रबन्ध के बाद अधिक समय तक के लिये ये सुरक्षित हो जाती हैं।

औज़ारों से अनुकूलताः—औज़ारों के लिये धूप की लकड़ियाँ हिन्दुस्तान की सबसे मुलायम और सरलता से काम में आनेवाली लकड़ियों में से हैं जो बिना किसी कठिनाई के चीरी-काटी जा सकती हैं और साफ़-सुथरे रूप में आ जाती हैं।

कैनेरियम स्ट्रिक्टम देहरादून में प्लाई उड बनाने के लिये बहुत अच्छी लकड़ी सिद्ध हुई है जो बड़ी सरलता से लम्बी चादर की तरह छिलती चली जाती है और सूखने में भी दोषरहित रहती है। इसकी प्लाई उड बहुत साफ़-सुथरी बनती है।

प्रयोगः—"अण्डेमन धूप" कलकत्ता और उसके आसपास के स्थानों में दियासलाई बनाने के काम में आती है और अभी यह इसी काम में लाई जाती है। दक्षिणी भारत में इसे पैकिंग बक्स और फ़र्नीचर के अन्दर के भाग बनाने के काम में लाते हैं।

मिलने का स्थानः—'धूप' लगभग ४,००० टन प्रतिवर्ष अण्डेमन के टापुओं से मिलती है जो अधिकता से पैकिंग बक्स और दियासलाई बनाने में खर्च हो जाती है।

'धूप' बंगाल व आसाम से बहुत कम मिलती है। पच्छिमी घाट और कुर्ग में भी थोड़ी ही होती है। अधिक जानकारी के लिये चीफ़ फ़ारेस्ट आफ़ीसर, अण्डेमन या दूसरे सम्बन्धित प्रान्तों के कन्सर्वेटरों को लिखना चाहिये।

दरः—"अण्डेमन धूप" लट्ठों के रूप में २७ रु० प्रति टन और

चिरे हुए वर्गों की सूरत में ३६ रु० से ४० रु० प्रति टन और बड़े चौरस लट्ठों के नाप में ४० रु० से ४५ रु० प्रति टन मिलती है (सन् १९३७)। आसाम में १८ फ़ीट लम्बे और ५ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे ३७ रु० ८ आने प्रति टन और १२"×१२" चौकोर १ रु० ४ आना प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मिलते हैं।

बंगाल में बक्सा डिवीज़न के लट्ठे १८ रु० से २५ रु० प्रति टन हैं।

करापा मोलुसेंसिस (Carapa moluccensis)

व्यापारिक नामः—पुसुर। देसी नामः—पुसुर, कियाना (बर्मा)।

वज़नः—४९ पौ० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—यह एक उम्दा बारीक रेशों और सुन्दर सुर्खी लिये हुए भूरे रंग की फ़र्नीचर के काम की लकड़ी है, जो बहुधा महागना की तरह लाल रहती है बल्कि उससे भी गहरे रंग की होती है। रँदने के बाद जब इस पर ख़ूब सफ़ाई कर दी जाती है तो इसकी सतह बहुत सुन्दर और चिकनी निकल आती है। यह एक मध्यम श्रेणी की भारी लकड़ी है जो अच्छी तरह सुखा लेने के बाद अधिक समय तक अपने नाप को समान रखे रहती है। श्रीस्काट के कथनानुसार यदि बर्मा की लकड़ियों में से कोई लकड़ी महागनी के स्थान पर काम में लाई जा सकती है तो वह यही है।

सुखाईः—इसके सूखने में कोई कठिनाई नहीं, अधिक चौड़े तख़्तों के कुछ ऐंठ जाने का भय अवश्य होता है। परन्तु यदि चट्टा पूरी सावधानी से लगाया जाय तो इसमें ये दोष नहीं आने पाते। यह हवा और किलन दोनों में सरलता से सूखनेवाली लकड़ी है।

मज़बूतीः—पुसुर सागोन से १५ प्रतिशत अधिक भारी लकड़ी है। यह सागोन से कठोर भी अधिक होती है, परन्तु दूसरी विशेषताओं में उसके लगभग है। अधिक जानकारी के लिये पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़शे को देखिये।

पायदारीः—जहाँ तक ज्ञात हुआ है पुसुर काफ़ी पायदार लकड़ी है, परन्तु पूर्ण रूप से अभी इस पर प्रयोग नहीं किये जा सके हैं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसकी ६ लकड़ियों में से ५ तीन साल के बाद भी ठीक निकलीं, केवल एक को दीमक लगी थी। फ़ॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट के बोर्ड रूम में भी इसके तख़्ते फ़र्श बनाने के प्रयोग में दस वर्ष से अच्छी दशा में वर्तमान हैं और कोई दोष या कीड़े इत्यादि का प्रभाव उनमें नहीं पाया गया।

औज़ारों से अनुकूलताः—यह लकड़ी औज़ारों के लिये सुगम सिद्ध हुई है। देहरादून में इसकी चिराई-कटाई और इस पर काम करने में कोई कठिनाई नहीं हुई। चूँकि इस लकड़ी के रेशे खूब उभरे होते हैं, इसलिये इस पर सफ़ाई बहुत आती है और पालिश खूब खिलती है। परन्तु इसके लिये बहुत क़ीमती पालिश के स्थान पर मामूली मोमवाली पालिश अधिक अच्छी है। यह फ़र्नीचर की बहुत अच्छी लकड़ी है और अपने रंगों और रेशों की सुन्दरता के कारण उत्तम प्रकार की लकड़ियों में गिनी जाने योग्य है।

प्रयोगः—कुछ समय हुआ कि पुसुर हिन्दुस्तान में एक अनजान और कम काम में आनेवाली लकड़ी समझी जाती थी, यद्यपि बर्मा में वह काफ़ी प्रसिद्ध और प्रयोग में आनेवाली लकड़ी थी। परन्तु अब हिन्दुस्तान में भी पुसुर काफ़ी प्रसिद्ध हो चुकी है। वह फ़र्नीचर के लिये एक अच्छी लकड़ी समझी जाती है और कलकत्ते की एक बड़ी ग्रामोफ़ोन बनानेवाली फ़र्म इसको बाजों के बक्स बनाने की एक बहुत अच्छी लकड़ी बताती है, परन्तु

साथ ही इसमें कहीं-कहीं गाँठ, गिरह और काले धब्बों की शिकायत भी की है। बर्मावाले भी इसमें यही बुराई बताते हैं। यद्यपि देहरादून में इसकी जो लकड़ी पहुँची उसमें यह बुराई अधिक न थी।

मिलने का स्थानः—हिन्दुस्तान में यह बंगाल में मिलती है जहाँ सुन्दरवन के जंगल में यह कुछ कम पाई जाती है। लेकिन बर्मा में पुसुर बहुतायत से पाई जाती है और आवश्यकतानुसार ५०० टन सालाना तक वहाँ से बाहर भेजी जा सकती है।

दरः—बंगाल में इसके लट्ठे २५ रु० से ३० रु० प्रति टन तक बिकते हैं। बर्मा में इसके दाम कुछ ज्यादा हैं। परन्तु वहाँ के लट्ठे बंगाल के लट्ठों से बड़े अर्थात् ४-५ फ़ीट तक गोल होते हैं।

केस्टेनोपसिस हिस्ट्रिक्स (Castanopsis hystrix) ?

व्यापारिक नामः—इन्डियन चेस्टनट। देसी नामः—केटुस, किंगोरी (आसाम)।

वज़नः—लगभग ४२ पौंड प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—यह बहुत हलके भूरे रंग की लकड़ी है जो छूने में खुरदरी होती है। इसके रेशे समान नहीं होते। यह उत्तरी बंगाल में पैदा होनेवाले पहाड़ी ओक और चेस्टनट में सबसे अच्छी समझी जाती है। यदि यह किसी औद्योगिक केन्द्र के समीप पैदा होती तो इसका प्रयोग अत्यधिक होता।

सुखाईः—जिनको इस लकड़ी का अनुभव है वे इसे अधिक कठोर और फटनेवाली नहीं समझते। ग्रीशेब्बियर का कहना है कि बंगाल के पहाड़ी प्रान्तों में लोग इसे गीली दशा में भी काम में ले आते हैं। देहरादून में लाये हुए इसके २०० स्लीपरों में से केवल दो ही सूखने में कुछ फट गये जो पेड़ के बिलकुल बीच से लिये गये थे।

डा० कपूर की सम्मति से यह मध्यम श्रेणी की फटनेवाली लकड़ियों में से है जो सतह और सिरों पर थोड़ा फटती है। इसमें सबसे बड़ी बुराई यह है कि इसको जल्दी कीड़ा लग जाता है और गल भी जल्दी जाती है इसलिये इसकी चिराई गर्म और खुश्क मौसम में करनी उचित है। लकड़ी को शैड के अन्दर खुले चट्टों में सुखाना चाहिये। इसके सूखने में अधिक समय नहीं लगता। एक इंचा मोटे तख़्ते ६ महीने में अच्छी तरह सूख जाते हैं।

मज़बूती:--इन्डियन चेस्टनट मध्यम श्रेणी की मज़बूत लकड़ी है। सिबपूर सिविल इन्जीनियरिंग कालेज में जो प्रयोग किये गये हैं उनके अनुसार यह लकड़ी सागोन से २५ से ३० प्रतिशत कमज़ोर बताई गई है। देहरादून में इस पर अभी पूर्ण रूप से प्रयोग नहीं किये जा सके हैं।* यह रेलवे स्लीपरों के लिये एक उपयुक्त लकड़ी है।

पायदारी:—बंगाल में लकड़ी का कारबार करनेवाले इसको काफ़ी पायदार लकड़ी समझते हैं। परन्तु इसका कीड़ा जल्दी लगता है, इसलिये इसे रक्षात्मक मसाला देकर काम में लाना चाहिये। देहरादून में इसके स्लीपर बिना रक्षात्मक मसाले के ४ वर्ष तक रहे और क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके टुकड़े केवल ३ साल चले। यह रक्षात्मक मसालों को अच्छी तरह पी लेती है। देहरादून में बहुधा इसके स्लीपरों में १० पौंड प्रति घनफ़ुट के हिसाब से "क्रयोज़ोट" ख़र्च हुआ। इसकी कच्ची लकड़ी सरलता से मसाले को सोख लेती है और पक्की भा काफ़ी पी लेती है।

औज़ारों से अनुकूलता:—इन्डियन चेस्टनट औज़ारों के अनुकूल है और इसकी चिराई-कटाई और सफ़ाई लाने

---

* अब इसकी परीक्षा की जा चुकी है। अधिक जानकारी के लिये अन्त में दिये गये नक़्शे में देखिये।

में कोई कठिनता नहीं होती। यह बहुत कुछ ओक की लकड़ी की तरह होती है। ग्राई उड के लिये इस पर अभी प्रयोग नहीं किये गये हैं। परन्तु पियर्सन साहब का कहना है कि यह आसानी से छिलनेवाली अर्थात् ग्राई की आवश्यकतानुसार लकड़ी है और श्रीब्राउन भी इसे एक उत्तम लकड़ी बताते हैं।

प्रयोगः—बंगाल के पहाड़ी ज़िलों में यह बहुतायत से काम में लाई जाती है और यहीं की यह उपज है। इसको आवश्यकता के अनुसार छतों में खपरैलों की भाँति बहुत काम में लाया जाता है। रक्षात्मक मसालों से शोधित इसके रेल के स्लीपर अच्छे हो सकते हैं और दूसरे कामों में भी अधिक विश्वास के साथ प्रयोग में ला सकते हैं।

मिलने का स्थानः—बंगाल के दार्जिलिंग, कुरस्यांग और कैलिम्पौंग डिवीज़नों से यह प्रचुरता से मिलती है और कुछ आसाम में भी मिल सकती है। दार्जिलिंग और कैलिम्पौंग के इलाक़ों में बहुत पाई जाती है और चार-पाँच फ़ीट तक की गोलाई के लट्ठे आमतौर से मिल सकते हैं।

दरः—चिरे हुए चौरस लट्ठे बंगाल से ८० रु० प्रति टन और वरगे १ रु० प्रति वर्गफ़ुट के हिसाब से मिलते हैं। आसाम में लट्ठे ३७ रु० ८ आ० प्रति टन और १८ इंची चौकोर १ रु० ४ आ० प्रति घनफ़ुट मिलते हैं जो १८ फ़ीट तक की लम्बाई के होते हैं (सन् १९३७)।

सेडरेला की लकड़ियाँ (Cedrela species)

(१) सेडरेला माइक्रोकारपा (तुन)

(२) सेडरेला सेराटा (पहाड़ी तुन)

(३) सेडरेला तुना (तुन)

व्यापारिक नामः—तुन। सेडरेला सेराटा पहाड़ी तुन कहलाता है।

देसी नामः—तुन, तुनी, पोमा, नोगा (कुर्ग), चुकानागिल (मालाबार) और कभी रैड सीडर या मोलमीन सीडर भी कहते हैं।

वज़नः—३० से ३७ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—ताज़ी काटी हुई तुन अन्दर से लाल निकलती है, परन्तु सूखने पर हलके बादामी लाल रंग में बदल जाती है। कहीं-कहीं उसमें धुँधले रंग की धारियाँ भी पाई जाती हैं जो इसका प्लाई उड में अच्छी तरह दिखाई देती हैं। यह लकड़ी मध्यम श्रेणी की वज़नी और आमतौर पर सीधे स्पष्ट रेशोंवाली होती है और इसमें विलायती सीडर की तरह सुगंध होती है जो अधिक दिनों तक नहीं रहती।

सुखाईः—तुन का चट्टा यदि नियमित रूप से लगाया जाय तो यह सुगमता से सुखाई जा सकती है। इसकी चिराई खुश्क मौसम में और गीली हालत में करानी चाहिये। इसके बाद शैड के नीचे अच्छे बत्तों के साथ चट्टा लगा देना चाहिये। इस प्रकार तुन के दो इंची मोटे तख़्तों या तीन इंची चौकोर बरगों को एक साल के समय में अच्छी तरह सुखाया जा सकता है। फिर भी इस लकड़ी में ऐंठने और सिकुड़ने या गढ़े पड़ जाने का भय रहता है। ऐंठने का दोष तो चट्टे को नियमित रूप से लगाने से बहुत कुछ दूर किया जा सकता है और गढ़े पड़ने के दोष को भाप द्वारा दूर कर सकते हैं। १००° सेन्टीग्रेड के टेम्परेचर पर २ से ६ घंटे तक भाप का देना इस बुराई को दूर कर देता है।

तुन सूखने में बहुत सिकुड़ती है और काम में लाने के समय भी मौसम के बदलने के साथ घटती-बढ़ती रहती है। इसलिये इसके जोड़ ठोंकते समय कुछ जगह रखनी चाहिए। तुन को किल्न में सुखाना अधिक उपयुक्त है। इसके बेढंगे तौर से सिकुड़ने को सरलता से भाप द्वारा रोका जा सकता है।

मज़बूतीः—तुन साधारण श्रेणी की मज़बूत लकड़ियों में से है। यह टूटने की शक्ति में सागोन के बराबर है, दूसरी शक्तियों में यह सागोन के ६० प्रतिशत के लगभग है। पहाड़ी तुन कुछ अधिक मज़बूत होता है। ब्योरे के लिये पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़शे को देखिये।

पायदारीः—तुन की अच्छी सूखी लकड़ी पायदार होती है। यदि इसके लट्ठों को अधिक समय तक रोका जाय तो ये गलने लगते हैं। छाल अलग न की जाय तो दीमक भी लगने लगती है। परन्तु ठीक तरह से सुखा लेने के बाद तुन भीतरी कामों के लिये एक अच्छा पायदार लकड़ी है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यह चार साल तक रही। यदि इसे अधिक दिनों तक रखना हो तो इस पर रक्षात्मक मसाला लगा देना चाहिये। परन्तु यह मसाले को समान रूप से नहीं पीती।

औज़ारों से अनुकूलताः—तुन औज़ारों के लिये सरल लकड़ी है। इस पर सब औज़ार सफ़ाई से चलते हैं और इसके छेदों को भर लेने के बाद इस पर पालिश भी अच्छी आती है। इसकी प्लाई उड भी बहुत सुगमता से बनती है। यहाँ तक कि यदि लट्ठे अधिक दिनों तक रखे गये हों तो बिना पकाये हुए उसी दशा में प्लाई उड में बदले जा सकते हैं। प्लाई उड के लिये तुन एक बहुत उपयुक्त और सजावटी लकड़ी है।

प्रयोगः—तुन हिन्दुस्तान की प्रसिद्ध लकड़ियों में से है। सस्ती, हलकी, जल्दी सूखनेवाली और अधिक मेहनत न लेनेवाली लकड़ी होने के कारण यह हिन्दुस्तान के कारखानों में बहुत लोकप्रिय है। यह सच है कि इसको हिन्दुस्तान के बढ़िया फ़र्नीचर की लकड़ियों में नहीं गिना जाता। फिर भी यह मकान के अन्दर की सजावटी आवश्यकताओं चौखटे, फ्रेम, छोटे बक्स, चाय का पेटियाँ,

सिगार के डब्बे और खिलौने इत्यादि बनाने के लिये एक उत्तम लकड़ी है। किसी उचित रक्षात्मक मसाले द्वारा शोधित करके यह इमारती आवश्यकताओं में भी काम में लाई जा सकती है और जैसा कि बताया जा चुका है, प्लाई उड के लिये विशेष रूप से उपयुक्त है।

मिलने का स्थानः—तुन हिन्दुस्तान के बहुधा मैदानी भागों में और हिमालय की तराई में हर जगह पाया जाता है। इसके लगातार जंगल तो नहीं हैं, फिर भी प्राकृतिक रूप से यह बहुत उगता है। इसे सड़कों के दोनों ओर छाया देने के लिये भी लगाते हैं और बहुधा गाँव और बस्तियों के समीप भी इसके बड़े-बड़े पेड़ मिलते हैं। तुन दक्षिणी भारत की अपेक्षा उत्तरी भारत में अधिक प्रसिद्ध है। "सेडरेला माइक्रोकारपा" बंगाल के दार्जिलिंग डिवीज़न में कुछ पाया जाता है। इसी प्रकार "सेडरेला सेराटा" भी कम ही होता है और हज़ारा, जौनसार व टेहरी गढ़वाल के पहाड़ी ज़िलों में थोड़ी संख्या में मिलता है।

दरः—उत्तरप्रदेश में १५ रु० से ३५ रु० प्रति टन (बहराइच डिवीज़न), मध्यप्रदेश में ६२ रु० प्रति टन, बंगाल में ३५ रु० से ४५ रु० प्रति टन लट्ठों के रूप में मिलता है। चिरी हुई लकड़ी ५० रु० से ६० रु० प्रति टन (कुरस्योंग, बक्सा, कैलिम्पौंग व चटगाँव के इलाक़ों से मिलती है), आसाम में लट्ठों के रूप में ४५ रु० प्रति टन, चिरान की हुई १२ इंची चौकोर लकड़ी १८ फ़ीट की लम्बाई तक १ रु० ८ आ० प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मिलती है (सन् १९३७)।

सीडरस देवदारा (Cedrus Deodara) ?

व्यापारिक नामः—देवदार। कभी-कभी "इण्डियन सीडर" या "हिमालियन सीडर" भी कहते हैं।

देसी नामः—पालूदार, दियार, देवीदार इत्यादि।

वज़नः—लगभग ३५ पौंड प्रति घनफ़ुट होता है (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—देवदार के बारे में हिन्दुस्तान में बहुत कम बताने की आवश्यकता है। लकड़ी का कारबार करनेवाले इसे इसके विशेष रंग और सुगन्ध से बड़ी सरलता से पहचान लेते हैं। विशेष तौर से उत्तरी भारत में यह बहुत कुछ जानी-पहचानी और आमतौर पर काम में लाई जानेवाली लकड़ी है। यह साधारण श्रेणी की वज़नी यथेष्ट पायदार और बहुत मात्रा में मिलनेवाली लकड़ी है। पंजाब में इसका प्रयोग बहुत ज्यादा होता है। इसके रेशे सीधे और समान होते हैं। परन्तु इसमें छोटी-बड़ी गाँठें काफ़ी होती हैं जिनके कारण देवदार फ़र्नीचर के लिये अधिक उपयुक्त नहीं समझी जाती।

सुखाईः—देवदार बड़ी सरलता से हवा में सुखाई जा सकती है परन्तु बहुत जल्दी सुखाने में यह सिरों पर से फटती और तड़कती है। फिर भी गोदाम के भीतर सावधानी से सुखाने में कोई खराबी नहीं पैदा होती। यह किलन में बहुत अच्छी तरह से सूखती है। इसमें लकड़ी के वज़न की अपेक्षा ३ से १० प्रतिशत तक एक उड़ जानेवाला तेल होता है, जिसको अक्सर लोग लकड़ी की नमी समझते हैं। उदाहरण के रूप में लकड़ी के किसी टुकड़े के सूखने पर उसमें १८ प्रतिशत नमी का होना पाया गया तो सम्भव है कि इस १८ प्रतिशत में १० प्रतिशत केवल पानी हो और शेष ८ प्रतिशत तेल हो।

मज़बूतीः—देवदार हिन्दुस्तान के सनोबर और चीड़ की क़िस्म के पेड़ों में सबसे मज़बूत लकड़ी है। यह वज़न और शक्ति में सागोन से २० प्रतिशत और कठोरता में ३० प्रतिशत कम है। इस प्रकार अपने वज़न के विचार से यह सागोन की अपेक्षा

काफ़ी मज़बूत लकड़ी है। पूरी जानकारी के लिये पुस्तक के अन्त में दिये हुए नक़्शे में देखिये।

पायदारीः--देवदार के भीतर की पकी लकड़ी अच्छी तरह सूखी हुई अधिक टिकाऊ होती है परन्तु बहुधा इसमें दीमक लग जाती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसकी ६ लकड़ियाँ ६ वर्ष के अन्दर दीमक ने खा डालीं और इसकी कच्ची लकड़ी तो बहुत कम टिकाऊ होती है। इसी विचार से नार्थ वेस्टर्न रेलवे देवदार के स्लीपरों को चाहे उनमें कच्ची लकड़ी हो या न हो, बिना रक्षात्मक मसालों के नहीं लगाती। यद्यपि देवदार ही की लकड़ी एक ऐसा उदाहरण है जो रक्षात्मक मसाले को अच्छी तरह नहीं पीती। फिर भी जितना मसाला सोख जाय, लकड़ी को बाहरी प्रयोग में बहुत कुछ सहायता पहुँचाता है।

औज़ारों से अनुकूलताः—देवदार की लकड़ी औज़ारों के लिए सरल है और बढ़ई से बहुत कम मेहनत लेती है। इस पर सफ़ाई ख़ूब आती है परन्तु इसमें जो एक प्रकार का तेल होता है वह अच्छी तरह पालिश नहीं होने देता। विशेष रूप से गाँठों के पास पालिश हमेशा धुँधली और भद्दी हो जाती है।

इसको प्लाई-उड के लिये प्रयोग में लाया गया, परन्तु बड़ी-बड़ी गाँठों के कारण बेकार सिद्ध हुई। क्योंकि इस लकड़ी में गाँठें बहुत होती हैं।

प्रयोगः--इस लकड़ी का वर्तमान काल में अधिकतर प्रयोग रेलगाड़ियों और रेल के स्लीपरों में होता है। इसलिये अधिकतर यह स्लीपरों ही के रूप में जंगलों से लाई जाती है। जो स्लीपर रेल की आवश्यकताओं से बाक़ी बचते हैं वह बाज़ार में बिकने आ जाते हैं जो इमारती कामों और फ़र्नीचर इत्यादि में काम आते हैं।

काश्मीर और चम्बा स्टेट से देवदार के बड़े लट्ठे भी मिलते हैं

यह सारे पंजाब और उत्तरी भारत की एक प्रसिद्ध व्यापारिक लकड़ी है जिसके तख़्ते, वर्गे, किवाड़, दरवाज़े, फ़र्श, खम्भे, खपरैलें और हलकी मेज़ें, अलमारियाँ आदि बहुत बड़ी संख्या में बनाई जाती हैं। सेना के सप्लाई-विभाग में देवदार की लकड़ी पेटियाँ बनाने के काम में लाई जाती है। पेन्सिलें बनाने के लिये यह लकड़ी काफ़ी नरम नहीं है, नहीं तो इसकी पेन्सिलें खूब बनाई जातीं। यह छोटे-छोटे इमारती नमूने (माडल) बनाने की एक उत्तम लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—पंजाब में लकड़ी की तमाम व्यापारिक मंडियों, जैसे झेलम* वजीराबाद* लाहौर* ढिलवान, दोराहा और जगाधरी इत्यादि में देवदार के १० फ़ीट लम्बे, १० इञ्च चौड़े और ५ इञ्च मोटे स्लीपर अधिक पाये जाते हैं। यह नौशहरा (उत्तर-पच्छिमी सीमा प्रान्त*) में भी सिंध नदी व काबुल नदी द्वारा बहाकर लाये जाते हैं और कुछ स्थानों में इसके छोटे-बड़े सब नाप के लट्ठे और वर्गे मिल जाते हैं। यह लकड़ी लगभग ५ लाख घनफ़ुट प्रति वर्ष बाहर भेजी जाती है।

दरः—देवदार की क़ीमत रेलवे की माँग के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। पंजाब में यह १ रु० २ आ० ६ पा० से १ रु० ७ आ० प्रति घनफ़ुट तक बिकती है, परन्तु हर दशा में बाज़ार के तात्कालिक भाव से परिचित होने के लिए चीफ़ कन्सर्वेटर ऑफ़ फ़ॉरेस्ट पंजाब या उत्तरप्रदेश को लिखना चाहिये।

चुकरासिया टेबुलेरिस (Chukrasia tabularis)

व्यापारिक नामः—चिकरासी (बर्मा में इसे सुनहरी महागनी भी कहते हैं)

देसी नामः—चिकरासी, बोगापोमा (आसाम) करादी (कुर्ग)

वज़नः—४० से ४२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

---

* जो अब पाकिस्तान में हैं।

लकड़ी की दशाः—ताज़ी कटी हुई चिकरासी पीले रंग क होती है, परन्तु हवा लगने पर तुरन्त ही भूरे रंग में बदल जाती है जिसमें कहीं-कहीं कुछ लाली भा वर्तमान होती है। यह एक मध्यम श्रेणी की भारी आर चमकीली लकड़ी होती है जिसके रेशे बहुधा सजावटी रूप लिये हुए होते हैं। यह फ़र्नीचर के लिये एक उत्तम प्रकार की लकड़ी है।

सुखाईः—यह हवा में सरलता से सूखनेवाली लकड़ी है और नर्म क़िस्म की लकड़ियों में गिनी जाती है। इसके लट्ठों को गीला ही चिरवा कर तुरन्त लकड़ी को शेड के अन्दर खुले चट्टे के रूप में लगा देना चाहिये। इस प्रकार इसकी दो इञ्ची मोटी लकड़ियों को लगभग ६ महीने में सुखाया जा सकता है।

चिकरासी किल्न में बहुत अच्छी तरह सूखती है परन्तु इस लकड़ी के बारे में बर्मा की रिपोर्ट है कि अधिक तापमान पर सुखाने से लकड़ी समान रूप से नहीं सूखती।

मज़बूतीः—चिकरासी वज़न में लगभग सागौन के बराबर और कठोरता व फटने में उससे कुछ अधिक मज़बूत है, परन्तु दूसरी शक्तियों में यह सागौन से २० प्रतिशत कम है। इस लकड़ी पर पूर्ण रूप से प्रयोग किये जा चुके हैं। ब्योरे के लिए पुस्तक के अन्त में दिये हुए नक़शे को देखिये।

पायदारीः—चिकरासी ज़मीन से मिली रहने पर या बाहर के कामों में अधिक टिकाऊ नहीं सिद्ध होती, यद्यपि भीतरी कामों के लिये यह लकड़ी अवश्य मध्यम श्रेणी की आयु पाती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसकी ६ लकड़ियों में से तीन ४½ वर्ष के अन्दर नष्ट हो गई। इमारती कामों में चिकरासी को रक्षात्मक मसाला देकर लगाना चाहिये। यह अधिकतर फ़र्नीचर ही के काम की लकड़ी है जो कि बिना मसाले के अधिक दिन रहनेवाली सिद्ध हुई है। इलाहाबाद बैंक देहरादून में इसकी प्लाई-उड बिना

किसी प्रकार के मसाले के बहुत समय तक चली और बहुत सफल रही।

औज़ारों से अनुकूलताः—इस लकड़ी की चिराई-कटाई सरल है और इस पर कुल औज़ार सरलता से चलते हैं। नक्काशी के काम के लिये भी चिकरासी एक उत्तम लकड़ी है और खरादी चीज़ों के लिये भी उपयुक्त है। इस पर पालिश खूब खिलती है और इसकी प्लाईउड भी अच्छी बनती है।

प्रयोगः—फ़र्नीचर के अतिरिक्त चिकरासी की प्लाईउड भी अच्छी बनती है जिसमें प्रायः सुन्दर नक्काशी का काम बना होता है। यह लकड़ी उत्तम प्रकार के फ़र्नीचर और सजावटी चीज़ों के लिये विशेषरूप से पसन्द की जाती है। देहरादून में चिकरासी के दो-एक लट्ठे तो ऐसे आये कि उनकी प्लाईउड सुन्दरता में संसार की अच्छी से अच्छी प्लाईउड की तुलना कर सकती है।

इसके लट्ठों को ध्यान से देख लेना चाहिये जिनमें गहरे रंग की धारियाँ हों। उन्हें आम फ़र्नीचर के काम में न लाना चाहिये क्योंकि उससे उत्तम प्रकार के सजावटी फ़र्नीचर और मुख्य-मुख्य चीज़ों के बनाने से अच्छे दाम मिलेंगे।

बंगाल व आसाम से आनेवाली चिकरासी की तुलना में बर्मा की चिकरासी के लट्ठों में बहुधा सुन्दर गहरी धारियाँ पाई जाती हैं। उन क्षेत्रों में जहाँ यह पैदा होती है वहाँ फ़र्नीचर और दूसरी घरेलू आवश्यकताओं में अधिकतर काम में लाई जाती हैं। यह लकड़ी जब एक बार भली प्रकार सूख जाती है तो फिर बहुत समय तक इसमें कोई दोष नहीं पैदा होता और खूब मज़बूत रहती है।

मिलने का स्थानः—बंगाल में कुरस्योंग, बक्सा और चटगाँव के डिवीज़नों से यह बहुतायत से निकलती है और बर्मा व आसाम

में भी मिलती है। जानकारी के लिए यूटिलाइज़ेशन अफ़सर बंगाल व आसाम को लिखना चाहिये।

दर:—बंगाल में २५ रु० से ३५ रु० प्रति टन लट्ठों के रूप में। आसाम में ४५ रु० प्रति टन २४ फ़ीट लम्बे और ५ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठों के रूप में। १५ इञ्ची चौरस शहतीरों के रूप में १ रु० ८ आ० प्रति घनफ़ट (सन् १६३७)

सिनेमोमम सेसीडोडेफ़नि और सिनेमोमम ग्लेंड्यूलीफ़ेरम

(Cinnamomum Cecidodaphne and Cinnamomum Glanduliferum)

व्यापारिक नामः—सिनेमन। देसी नामः—राह्, गौन्धोरी, माला गिरी (नैपाल)।

वज़नः—लगभग ३६ पौ० प्रति घनफ़ुट (सूखने पर)।

लकड़ी की दशाः—यह एक हलके भूरे रंग की मध्यम श्रेणी की भारी और घने रेशोंवाली लकड़ी है। ताज़ा कटी हुई लकड़ी से तीव्र कपूर की सी सुगन्ध आती है जो बहुत दिनों तक रहती है।

पियर्सन "सिनेमन" की लकड़ी के एक टुकड़े में ४० वर्ष बीतने पर भी इस सुगन्ध का वर्तमान रहना बताते हैं। यह एक मज़बूत उत्तम प्रकार की लकड़ी है, यदि देखने में कुछ सुन्दर नहीं प्रतीत होती, फिर भी कुछ टुकड़े ऐसे अवश्य मिलते हैं जिनमें कुछ गहरे रंग के फूल, छल्ले या धारियाँ होती हैं। यह अति प्रसिद्ध लकड़ी है जो उन क्षेत्रों में बहुतायत से काम में आती रही है, जहाँ यह पैदा होती है। इसी कारण यह कम मिलती है। परन्तु अब इसे जंगलों में लगाया जा रहा है जिससे यह थोड़ी बहुत मात्रा में मिल जाया करेगी।

सुखाईः—यह बहुत सरलता से सूखनेवाली लकड़ियों में गिनी जाती है, यद्यपि अभी तक देहरादून में इसको सुखाने के सम्बन्ध

में प्रयोग नहीं किये जा सके हैं। इसका एक दो फ़ीट चौड़ा तख़्ता १२-१५ वर्ष से बिना किसी दोष के अब तक वर्तमान है।

मज़बूतीः—इसकी शक्ति के बारे में देहरादून में सरकारी तौर पर अभी प्रयोग नहीं किये गये।

पियर्सन साहब का कहना है कि कठोरता व मज़बूती के विचार से इसे मध्यम श्रेणी की लकड़ियों में गिनना चाहिये।

३० वर्ष से अधिक समय हुआ कि बंगाल में इस लकड़ी का एक बँगला बनाया गया था जो बहुत सफल रहा। इसके अतिरिक्त जहाँ यह पैदा होती है उन क्षेत्रों में यह बड़े इमारती कामों में प्रयोग की जाती है जिससे पता चलता है कि इसको यथेष्ट मज़बूत लकड़ी समझा जाता है।

आसाम-बंगाल रेलवे ने इसका प्रयोग रेलगाड़ियाँ बनाने में किया है। यह भी इस बात का प्रमाण है कि यह एक उत्तम लकड़ी है।

पायदारीः—यह लकड़ी बहुत टिकाऊ है और बाहर के काम में लाये जाने में भी अधिक समय तक रहती है। तीव्र सुगन्धित तेल के कारण इस लकड़ी में कीड़ा नहीं लगता। ऊपर बताये हुए लकड़ी के बँगले को, जो ३० वर्ष से अधिक समय से स्थिर है, अभी तक कोई हानि नहीं पहुँची। यह "सिनेमोमम सेसीडोडेफ़नि" के एक पायदार लकड़ी होने का प्रमाण है, यद्यपि देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में ४ वर्ष के भीतर इसकी लकड़ियों को दीमक लग गई। यह बात किसी अंश तक निराशाजनक है, फिर भी यह रक्षात्मक मसालों को सरलता से सोख लेती है और इस प्रकार इसकी पायदारी को बढ़ाया जा सकता है।

औज़ारों से अनुकूलताः—इस पर काम करना और इसकी चिराई-कटाई सरल है। इस पर पालिश भी खूब चढ़ती है और नक़्क़ाशी का काम करने और खरादी हुई चीज़ें बनाने के योग्य है।

यह बंगाल की फ़र्नीचर इत्यादि की सबसे अच्छी लकड़ियों में से है। इसकी कपड़े रखने की अलमारियाँ और पेटियाँ इत्यादि बहुत अच्छी बनती हैं। इसकी कपूरी गंध से कीड़ा नहीं लगने पाता। हर विचार से यह एक अच्छी लकड़ी है। अभी प्लाईउड बनाने में इसकी परीक्षा नहीं की गई है परन्तु विचार किया जाता है कि इसके लिये भी यह उपयुक्त होगी।

प्रयोगः—स्थानीय रूप से इस लकड़ी को आम फ़र्नीचर के अतिरिक्त इमारती आवश्यकताओं और फ़र्श इत्यादि बनाने में भी काम में लाया जाता है जो बहुत अनुचित है। जब कि यह लकड़ी अपनी सुन्दरता और कपूरी गंध के कारण अच्छे कामों में प्रयुक्त की जा सकती है। यह जापान की कपूरी लकड़ी के समान है जिससे कि जापानी उत्तम प्रकार के बेलबूटे खुदे हुए बक्स इत्यादि बनाते हैं।

मिलने का स्थानः—जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है इस लकड़ी का प्रयोग इसकी पैदावार के क्षेत्रों में बहुत होता है इसलिये यह बाहर वालों को कम मिलती है। फिर भी यह आसाम से साधारण लट्ठों के रूप में कुछ मिल जाती है और बंगाल के बक्सा डिवीज़न, कैलिम्पोंग और चटगाँव डिवीज़न से भी कुछ मिल सकती है। जानकारी के लिये इन दोनों प्रान्तों के यूटिलाइज़ेशन अफ़सरों को लिखिये।

दरः—आसाम से इसके लट्ठे ४५ रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी १५ इञ्ची चौरस और २४ फ़ीट तक लम्बी १ रु० ८ आ० प्रति घनफ़ुट मिलती है। बंगाल के लट्ठों का मूल्य २५ रु० से ३५ रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी ७५ रु० से १०० रु० प्रति टन तक मिलती है (सन् १९३७)।

क्यूप्रेसस टोरुलोसा (Cupressus torulosa)

व्यापारिक नामः—साइप्रेस। देसी नामः—सुराइ, देवीदार, ल्यूरी इत्यादि।

वज़नः--३० से ३२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह लकड़ी भारत की नर्म सनोबरी लकड़ियों में देवदार के समान अच्छी है और रूप में भी देवदार ही के समान है परन्तु इसमें सुगन्ध नहीं होती और गाँठें भी कुछ कम होती हैं । यह बिलकुल सीधे और समान रेशोंवाली अच्छी लकड़ी है ।

सुखाईः--साइप्रेस के सुखाने में कोई कठिनाई नहीं। इसके स्लीपरों या चीरी हुई लकड़ी को सरलता से शेड के अन्दर खुला चट्टा लगाकर सुखाया जा सकता है और सूखने की दशा में इस लकड़ी में कोई दोष नहीं पैदा होता।

मज़बूतीः--साइप्रेस और देवदार वज़न में लगभग बराबर ही होती हैं परन्तु साइप्रेस की लकड़ी कुछ हलकी होती है। मज़बूती में भी यह देवदार से १० प्रतिशत कम है।ब्योरे के लिये पुस्तक में दिये हुए नक़्शे को देखिये।

पायदारीः--गैम्बल साहब ने जो विभिन्न प्रकार की स्लीपरों की पायदारी के सम्बन्ध में प्रयोग किये हैं उनमें साइप्रेस सबसे उत्तम निकली। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह एक पायदार लकड़ी है और रेलवे स्लीपरों के रूप में १४ से १५ साल तक चलती है। यदि अन्दर के कामों में प्रयोग की जाय तो और भी अधिक आयु पा सकती है।

औज़ारों से अनुकूलताः--साइप्रेस एक नर्म लकड़ी है जिस पर औज़ार अच्छी तरह चलते हैं। इस पर सफ़ाई भी खूब आती है और यह बहुत समय तक अपना स्थायी रूप बनाये रखती है। यह बढ़ई के काम की बहुत ही अच्छी लकड़ी है। यह योरुप व अमेरिका की तमाम सनोबरी क़िस्म की लकड़ियों का सामना करती है। देवदार से यह लकड़ी इस विचार से अच्छी समझी जाती है कि इसमें देवदार के समान तेल नहीं होता इसलिये

इस पर देवदार से अच्छा पालिश और रंग चढ़ता है।

प्रयोगः—साइप्रेस अपनी पैदावार के क्षेत्रों में बहुत पसन्द की जाती है। वहाँ इसको पुलों, इमारतों और फ़र्नीचर बनाने में बहुतायत से काम में लाया जाता है। मैदानी ज़िलों में यह स्लीपरों के रूप में लाई जाती है और जिस प्रकार देवदार को काम में लाते हैं लगभग उन्हीं कामों में इसको भी लाते हैं। अधिकतर इसके और देवदार के स्लीपर मिले-जुले होते हैं। यह हवाई जहाज़ बनाने में भी काम आती है क्योंकि इसमें गाँठें नहीं होतीं और इसके रेशे सीधे और समान होते हैं।

मिलने का स्थानः—अब तक साइप्रेस की गिनती व्यापारिक लकड़ियों में नहीं होती थी। क्योंकि इसकी उपज बहुत कम थी और अधिकतर यह स्थानीय आवश्यकताओं में ही समाप्त हो जाती थी। परन्तु हाल ही में उत्तरप्रदेश की रिपोर्ट से पता चलता है कि कमायूँ डिवीज़न से साइप्रेस ५०,००० घनफ़ीट के लगभग प्रतिवर्ष मिल सकती है। पंजाब के पहाड़ी ज़िलों से भी इसकी कुछ प्राप्ति सम्भव हो सकती है। उत्तरप्रदेश में चकरौता और टिहरी गढ़वाल के डिवीज़नों से भी कुछ मिल सकती है।

दरः—उत्तरप्रदेश से १२ फ़ीट लम्बे १० इंच चौड़े और ६ इंच मोटे स्लीपरों के रूप में ४५ रु० से ६० रु० प्रतिटन तक मिल सकती है। दूसरी जगहों पर स्लीपरों का मूल्य १ रु० २ आ० प्रति घनफ़ुट होता है (सन् १९३७)

साइनोमेट्रा पोलियान्ड्रा (Cynometra polyandra)

व्यापारिक नामः—पिंग। देसी नामः—पिंग।

वज़नः—लगभग ५६ पौ० प्रति घनफ़ुट।

लकड़ी की दशाः—यह आसाम के जंगलों की एक भारी, कठोर और मज़बूत लकड़ी है। रंग भूरा और कुछ अंश तक लाल

होता है, बहुधा इसमें गहरे चिह्न भी होते हैं। यह अधिकतर मोटे इमारती काम की लकड़ी है। फ़र्नीचर या दूसरे सजावटी कामों के लिये कुछ अधिक उपयुक्त नहीं। पियर्सन साहब का कहना है कि उन्होंने कलकत्ते में इस लकड़ी की प्लाईउड का एक सुन्दर बोर्ड देखा है।

सुखाईः—यह सूखने में कठिन और फटनेवाली लकड़ी समझी जाती है। परन्तु अभी तक सरकारी तौर पर इस लकड़ी के सुखाने का ब्योरेवार प्रयोग नहीं किया जा सका है।

मज़बूतीः—यह बहुत कठोर और मज़बूत लकड़ी है। सागौन से दुगुनी कठोर और हर प्रकार से उससे मज़बूत होती है। ब्योरे के लिये अंत में दिये हुए नक़शे को देखिये।

पायदारीः—बाहर के कामों के लिये पिंग कुछ अधिक पायदार लकड़ी नहीं है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यह तीन वर्ष से भी कम ठहरी, परन्तु रक्षात्मक मसालों से इसकी पायदारी अवश्य बढ़ जाती है। यह दबाव की मशीन द्वारा लगभग ७ पौं० प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मसाले को सोख लेती है।

औज़ारों से अनुकूलनाः—पिंग काम करने और चिराई-कटाई में अवश्य बहुत कठोर और मेहनत लेनेवाली लकड़ी है, परन्तु इस परिश्रम के बाद इस पर अच्छी सफ़ाई आती है। पियर्सन साहब के कथनानुसार सम्भव है कि इसकी प्लाईउड भी बनती हो। परन्तु यह समझा जाता है कि इसकी कठोरता और कड़ापन इसे प्लाईउड के लिये एक अच्छी लकड़ी न सिद्ध होने देगी।

प्रयोगः—यह लकड़ी अपनी कठोरता के कारण बहुत कम पसन्द की जाती है। इसके अतिरिक्त यह रक्षात्मक मसाले के बिना कम आयु पाती है। मसाला देने पर यह अवश्य रेलवे स्लीपर या भारी इमारती कामों के लिये एक उत्तम लकड़ी सिद्ध हो सकती है या फिर जहाँ इसकी कठोरता से लाभ उठाना हो

वहाँ रसात्मक मसाले द्वारा शोधित इस लकड़ी के गट्टओं को फ़र्श में प्रयोग करना चाहिये।

मिलने का स्थानः—पिंग आसाम प्रांत में होती है और २५ फ़ीट तक लम्बे और चार से पाँच फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे हर समय मिल सकते हैं।

दरः—आसाम से लट्ठे ३० रु० प्रतिटन और २४ फ़ीट लम्बे १२ इञ्ची चौकोर वर्ग १ रु० २ आ० प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मिलते हैं (सन् १९३७)।

डलबर्जिया की लकड़ियाँ (Dalbergia species)

व्यापारिक नामः—रोज़उड या बम्बई की काली लकड़ी (ब्लैकउड)—Dalbergia latifolia डलबर्जिया लेटिफ़ोलिया और शीशम या सिसू Dalbergia sisoo डलबर्जिया सिसू।

देसी नामः—डलबर्जिया लेटिफ़ोलिया बम्बई में शीशम कहलाती है और उत्तरी भारत में डलबर्जिया सिसू को शीशम कहते हैं। डलबर्जिया लेटिफ़ोलिया को कुर्ग में बिटी और मालाबार में बीटी कहते हैं और बंगाल में इसे सतीसाल और बिहार में सितसाल कहते हैं। डलबर्जिया सिसू को बिहार में टाली कहते हैं।

वज़नः—५० से ५५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशाः—रोज़उड साधारणतः गहरी ब्राउन या स्याही लिये हुए ब्राउन रंग की होती है। यह ताज़ी कटी हुई तो इतने गहरे रंग की नहीं होती, परन्तु सूखने पर अवश्य गहरा रंग हो जाता है। कभी-कभी तो शीशम की ये दोनों क़िस्में एक दूसरे से रंग में इतनी मिलती-जुलती हैं कि इन्हें पहचानना कठिन हो जाता है। फिर भी रोज़उड अपनी विशेष गंध के कारण पहिचानी जा सकती है। रोज़उड और शीशम भारत की फ़र्नीचर की उत्तम लकड़ियों में से हैं, और ये बहुत ही लोकप्रिय हैं। ये

सुन्दर नक़्क़ाशी के काम की लकड़ियाँ हैं और यदि उचित रूप से सुखाई जायँ तो इनसे उत्तम प्रकार का फ़र्नीचर बन सकता है।

सुखाईः—रोज़उड और शीशम दोनों बड़ी सरलता से हवा में सुखाई जा सकती हैं और किल्न में भी अच्छी तरह सूखती हैं। इनको गीला चिरवाकर शेड के अन्दर खुले चट्टों में लगा देने से बिना किसी हानि के भली प्रकार सूख जाती हैं। केवल तेज़ गर्मी व शुष्क मौसम में लकड़ी के सिरों को गर्म लू से बचाने के लिये ढक देना चाहिए जिससे वह फटने न पायें। इस प्रकार दो-तीन महीने ही के अन्दर ये लकड़ियाँ बहुत अंश तक सूख जाती हैं। इसी प्रकार किल्न में भी थोड़ी सावधानी के साथ ये बिना किसी हानि के सुखाई जा सकती हैं। फिर भी पेड़ के बीचोंबीच जो चूने की तरह का एक सफ़ेद पदार्थ इन लकड़ियों में होता है उसके कारण बहुधा कठिनाई होती है। इसलिये चिराई के समय यह उचित है कि बीच के उतने भाग को काटकर अलग निकाल लिया जाय और अलग ही सुखाया जाय जिससे वह साफ़ लकड़ी से मिल न सके और उसमें कोई दोष न पैदा कर सके।

मज़बूतीः—ये दोनों लकड़ियाँ सागौन से किसी अंश तक वज़नी और अधिक कठोर हैं विशेष रूप से रोज़उड सागौन से ६० प्रतिशत अधिक कठोर है। ब्योरे के लिये अंत में दिये हुए नक़शे को देखिए।

पायदारीः—ये दोनों लकड़ियाँ बहुत टिकाऊ हैं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में दोनों ७ वर्ष के बाद भी ठीक पाई गई हैं और अन्दर के कामों में तो ये लकड़ियाँ बहुत दिनों तक ठीक रहती हैं। यह बात तो पक्की लकड़ी के बारे में बताई गई है। दोनों पेड़ों की कच्ची लकड़ी जल्दी नष्ट-भ्रष्ट हो जाती हैं इसलिये यदि कच्ची लकड़ी को भी काम में लाना हो तो रक्षात्मक मसाला लगा देना चाहिए।

औज़ारों से अनुकूलताः—यद्यपि रोज़उड बहुत कठोर लकड़ी है फिर भी इस पर काम करने या सफ़ाई लाने में कोई कठिनाई नहीं होती। इसी प्रकार शीशम भी औज़ारों के लिये सरल है। परन्तु जब रेशे घूमे हुए या कहीं गाँठ होती है तो अवश्य सफ़ाई और चिकनाहट लाने में कठिनता होती है। परन्तु ऐसी लकड़ी बहुत कम होती है। दोनों लकड़ियाँ प्लाईउड बनाने के लिये उपयुक्त हैं। परन्तु लट्ठों को पहले पानी में पका लेने की आवश्यकता होती है। शीशम की प्लाईउड अच्छी और सुन्दर होती है। रोज़उड की प्लाई कहीं-कहीं से कुछ फट जाती है। इसका यह कारण है कि रोज़उड शीशम से अधिक कठोर है।

ये दोनों लकड़ियाँ भाप द्वारा मोड़ी जा सकती हैं। विशेष रूप से शीशम को बहुत बड़े नाप में मोड़ा जा सकता है। दोनों लकड़ियों पर पालिश भी ख़ूब चढ़ती है। रोज़उड मोमवाली पालिश के साथ अच्छी रहती है।

प्रयोगः—जैसा कि पहले बताया जा चुका है रोज़उड और शीशम दोनों हिन्दुस्तान की उत्तम फ़र्नीचर बनाने की लकड़ियों में गिनी जाती हैं और यही इनका काम है। फिर भी दोनों उत्तम प्रकार के इमारती कामों के लिये विशेष लकड़ियाँ हैं। योरुप में रोज़उड फ़र्नीचर और उत्तम प्रकार की सजावटी चीज़ें बनाने के काम में आती है। हिन्दुस्तान में शीशम फ़र्नीचर के अतिरिक्त तोपों और गाड़ियों के पहियों और दूसरे मज़बूत कामों में लाई जाती हैं। रेलगाड़ियों में भी शीशम का यथेष्ट प्रयोग है और फ़र्श के लिये भी उत्तम समझी गई है। उत्तरी भारत में शीशम इतनी लोकप्रिय लकड़ी है कि प्रत्येक काम के लिये इसे पसन्द किया जाता है। उत्तरप्रदेश के बरेली शहर और कई दूसरी जगहों के कारखानों में हर प्रकार का फ़र्नीचर-मेज़ें, कुर्सियाँ शीशम के अतिरिक्त और किसी लकड़ी की नहीं बनाई जातीं।

मिलने का स्थानः—रोज़उड बम्बई से मिलती है परन्तु मद्रास और कुर्ग से भी यथेष्ट मात्रा में मिल सकती है। सी० पी० (मध्य-प्रदेश), उत्तरप्रदेश (गोंडा डिवीज़न) और उड़ीसा से भा थोड़ी-बहुत मिल सकती है।

शीशम विशेष रूप से उत्तरप्रदेश और पंजाब से मिलती है परन्तु कुछ बंगाल, आसाम, उड़ीसा और सिंध से भी मिलती है।

रोज़उड २० फ़ीट लम्बे और ४-५ फ़ीट गोलाई के लट्ठों और चौरस शहतीरों के रूप में मिलती है। शीशम के लट्ठे भिन्न-भिन्न प्रान्तों में विभिन्न नाप के होते हैं। जहाँ शीशम के लगाये हुए जंगल हैं वहाँ से अच्छी लम्बाई और मोटाई के लट्ठे मिल जाते हैं। परन्तु सड़कों, नदियों और नहरों के किनारे के शीशम नाप में कम, परन्तु पहिले प्रकार के शीशम के वृक्षों से अधिक मज़बूत होते हैं।

दरः—बम्बई से रोज़उड के लट्ठे २५ रु० से १२० रु० प्रति टन तक (लकड़ी की दशा के अनुसार) मिलते हैं। मद्रास से ३१ रु० से ६५० रु० प्रति टन, (यूरुप भेजनेवाली चुनी हुई) दूसरे प्रान्तों से ५० रु० से १०० रु० प्रति टन तक (लकड़ी की दशा के अनुसार) मिलते हैं। (सन् १९३७)

शीशम उत्तरप्रदेश में २० रु० से ५० रु० प्रति टन और पंजाब में ४० रु० से ४५ रु० प्रति टन के हिसाब से लट्ठों के रूप में मिलती है। बंगाल से ४५ रु० से १०० रु० प्रति टन और दूसरे प्रान्तों से ४० रु० से ६० रु० प्रति टन। (सन् १९३७)

डलबर्जिया सिसूआइडीज़ (Dalbergia sissoides)

कभी-कभी दक्षिणी भारत में एक लकड़ी बिलकुल शीशम से मिलती-जुलती पाई जाती है जिसका रंग कुछ गहरा होता है और देखने में यह रोज़उड समझी जा सकती है। परन्तु यथार्थ में इसे डलबर्जिया सिसूआइडीज़ कहना चाहिए। देखने में यह रोज़उड से भी अच्छी मालूम होती है।

डाइकापसिस की लकड़ियाँ (Dichopsis species)

डाइकापसिस इलिप्टिका और डाइकापसिस पोलियान्था
(Dichopsis elliptica and Dichopsis polyantha)

व्यापारिक नामः--पाली। देसी नामः—पाली, ताली इत्यादि।

वज़नः--४० से ४३ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)।

लकड़ी की दशा:--यह बादामी या सुर्ख़ी लिये हुए भूरे रंग की लकड़ी है जिसमें कच्ची लकड़ी अधिक चौड़ी और हलके रंग की होती है। रेशे सीधे और समान होते हैं। ताज़ा कटी हुई लकड़ी में रबर की सी गंध आती है जो सूखने पर जाती रहती है। यह देखने में पून से मिलती-जुलती है।

सुखाईः--अधिक गर्म व शुष्क जगहों में पाली सूखने में सिरों पर से फटती और बाहर की सतह पर से कहीं-कहीं तड़कने लगती है। चिराई होने पर ये दोष और भी अधिक प्रकट हो जाते हैं। परन्तु यदि लट्ठों को गीली दशा में चिरवा लिया जाय और फिर लकड़ी को शेड के अन्दर ढके हुए चट्टों के रूप में सुखाया जाय तो बिना किसी दोष के सूख जाती है।

मज़बूतीः—पाली और ताली अपनी मज़बूती के विचार से बहुत कुछ सागोन के समान हैं। वज़न भी लगभग समान ही है परन्तु कठोरता में ये सागोन से अधिक है। सूखने में यह सागोन से दुगुनी सिकुड़ती है। ब्योरे के लिये अंत में दिये हुए नक़शे को देखिए।

पायदारीः--बाहरी प्रयोग के लिये पाली इतनी अच्छी लकड़ी नहीं है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसकी ६ लकड़ियों में से पाँच-छः वर्ष के भीतर दीमक ने खा डालीं परन्तु साथ ही इस बात से भी आश्चर्य है कि छठी लकड़ी को कोई भी हानि नहीं पहुँची। दुर्भाग्य से यह मसाले को सख़्त से सख़्त

दबाव की मशीन द्वारा भी अच्छी तरह नहीं सोखती, नहीं तो इसकी बहुत कुछ रक्षा की जा सकती थी।

औज़ारों से अनुकूलता:—इस लकड़ी पर काम करने और सफ़ाई लाने में कोई कठिनता नहीं होती। रेशे सीधे और साफ़ होने के कारण यह कारख़ानों में बहुत पसन्द की जाती है। मद्रास की पाली को प्लाईउड के लिये प्रयोग में लाया गया, जिसके लिये वह उपयुक्त सिद्ध हुई। व्यापारिक आवश्यकताओं के लिये इसकी अच्छी प्लाईउड बनाई जा सकती है।

प्रयोग:—मद्रास में पाली को इमारती कामों में लगाते हैं और सस्ते प्रकार के फ़र्नीचर, खपरैलों और कई एक मोटे कामों में भी इसका प्रयोग होता है। यह आम इमारती कामों की लकड़ी है, किन्तु रक्षात्मक मसाले को न सोखना इसके प्रयोग को बहुत अंश तक कम कर देता है। फिर भी साधारण इमारती कामों के लिये यह अच्छी लकड़ी है।

मिलने का स्थान:—मद्रास पाली का मुख्य स्थान है। परन्तु ताली बंगाल के चटगाँव के पहाड़ी भाग से लगभग १००० टन प्रतिवर्ष मिल सकती है। पाली के लट्ठे सीधे और ४० फ़ीट तक मिलते हैं।

दर:—मद्रास में पाली के लट्ठे ३४ रु० से ३७ रु० प्रति टन मिलते हैं। बंगाल से ३७ रु० ८ आ० से ५० रु० प्रति टन (सन् १९३७)।

डिलिनिया की लकड़ियाँ (Dillenia species)

(१) डिलिनिया इण्डिका (Dillenia indica)
(२) डिलिनिया पेन्टागाइना (Dillenia pentagyna)

व्यापारिक नाम:—डिलिनिया। देसी नाम:—ओटेंगा, चालटा, आक्शी, कलाई, राई (बिहार) काडूटेगा (कुर्ग)।

वज़नः—३६ से ४३ पौ० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—ये सुर्ख़ी लिये हुए ब्राउन रंग की लकड़ियाँ होती हैं जिन पर कभी-कभी सफ़ेदी लिये हुए खड़िया मिट्टी की सी धारियाँ भी दिखाई देती हैं। ये मोटे इमारती काम की यथेष्ट मज़बूत और कठोर लकड़ियाँ हैं। इनके रेशे मोटे होते हैं। रेशों के घुमाव और ऐंठ के कारण यह बहुधा कुबड़ी हो जाया करती हैं। "डिलिनिया पेन्टागाइना" "डिलिनिया इन्डिका" से अधिक भारी और गहरे रंग की लकड़ी होती है।

सुखाईः—ये लकड़ियाँ सूखने की दशा में ऐंठने और सिरों पर से फट जानेवाली हैं। परन्तु चिराई के समय लकड़ी के बढ़ोतरी के चिह्नों को यदि उसकी चौड़ाई से खड़ी दशा (लम्ब) में रक्खा जाय तो ऐंठने को बहुत अंश तक रोक सकता है।

ये लकड़ियाँ जल्दी सूखती हैं और यदि चट्टा नियमित रूप से लगाया गया हो, तो लकड़ी बहुधा अच्छी निकलती है। ये किल्न में और भी सुविधा से सुखाई जा सकती हैं।

मज़बूतीः—दोनों मध्यम श्रेणी की मज़बूत लकड़ियाँ हैं। ये सागौन से कुछ हल्की और कुछ दशाओं में उससे कमज़ोर हैं। ब्योरे के लिये अंत में दिये हुए नक़्शे को देखिये।

पायदारीः—ये लकड़ियाँ बहुत कमज़ोर हैं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में दोनों लकड़ियों के ६-६ टुकड़े केवल २ ही वर्ष में दीमक द्वारा नष्ट हो गये, इसलिये रक्षात्मक मसाले बिना ये लकड़ियाँ बाहरी काम के लिये बेकार हैं। ये लकड़ियाँ दबाव की मशीनों में मसाले को सरलता से सोख लेती हैं।

औज़ारों से अनुकूलताः—अधिकतर डिलिनिया की लकड़ियाँ औज़ारों के लिये कठिन नहीं होतीं, परन्तु उनमें खड़िया मिट्टी की सी धारियाँ जो कहीं-कहीं रहती हैं, सूखने पर बहुत कठोर हो जाती हैं। इसलिये औज़ारों के चलाने में अधिक कठिनाई पैदा

होती है। इन लकड़ियों को गीली दशा में चिराना और कटाना अधिक उपयुक्त है।

डिलिनिया को प्लाई उड के लिये भी प्रयोग में लाया गया, जिससे सिद्ध हुआ कि ये लकड़ियाँ अपने मोटे रेशों और भद्दे रंग के कारण इस काम के लिये अच्छी नहीं। इनसे केवल मोटी और भद्दी प्लाई उड बनाई जा सकती है।

प्रयोगः—ये बहुधा इमारती काम की लकड़ियाँ हैं। यदि इनको रक्षात्मक मसाले देकर काम में लाया जाय तो काफ़ी मज़बूत रहती हैं। यदि टक्कर से काटी जायँ तो इनका रंग अच्छा निकलता है और सजावटी कामों में अधिक गहरे रंग की लकड़ियों के भीतर बेल-बूटे बनाने के लिये ये बहुत उपयुक्त रहती हैं।

मिलने का स्थानः—दोनों लकड़ियाँ बंगाल और आसाम से थोड़ी मात्रा में मिल सकती हैं और बम्बई प्रान्त से इससे भी कम। अधिकतर ये बंगाल के बक्सा और चटगाँव डिवीज़नों से आती हैं।

दरः—बंगाल से १८ रु० से ३८ रु० प्रति टन लट्ठों के रूप में मिलती हैं। आसाम से ३० रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी १८ फ़ीट तक लम्बी, १२ इञ्ची चौकोर धर्गों के रूप में १ रु० प्रति घनफ़ुट मिलती है। बम्बई में २५ रु० से ४० रु० प्रति टन के हिसाब से मिलती है (सन् १९३७)

डाइसपायरस की लकड़ियाँ (Diospyros species)

(१) डाइसपायरस एबेनम (एबोनी) (२) डाइसपायरस एम्ब्रिओप्टेरिस (एबोनी) (३) डाइसपायरस मारमोराटा (अण्डमन मार्बल उड) (४) डाइसपायरस मेलेनॉग्ज़ीलन एबोनी)

व्यापारिक नामः—एबोनी।

देसी नामः—तेंदू, आबनूस, केंदू (बिहार) करोनकाली इत्यादि।

वज़नः—५१ से ५६ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—बहुत सा काली लकड़ियों को ग़लती से एबोनी कहा जाता है। यद्यपि उन्हें डाइसपायरस की लकड़ी से कोई सम्बन्ध नहीं होता, फिर भी साधारणतया हिन्दुस्तान में मेलेनॉग्ज़ीलन की काली ही लकड़ी को आबनूस कहते हैं।

डाइसपायरस एबेनम हिन्दुस्तान में बहुत कम होती है, परन्तु सीलोन के जंगलों में यह लकड़ी बहुत है। इसके भीतर की पक्की लकड़ी यद्यपि अधिक मोटी नहीं होती, परन्तु बिलकुल काली होती है और पूर्णरूप से आबनूस कहलाने के योग्य है। डाइसपायरस मेलेनॉग्ज़ीलन की पक्की लकड़ी कुछ हरापन लिये हुए काली होती है और डाइसपायरस एम्ब्रिओपटेरिस की लकड़ी कहीं सफ़ेद और कहीं काली होती है, इसलिये इसमें सरासर काली लकड़ी नहीं निकल सकती। रंग को छोड़कर आबनूस की सफ़ेद लकड़ी भी मज़बूती, कठोरता और शक्ति के विचार से बहुत अच्छी है, जिसे औज़ारों के दस्ते और दूसरे सख़्ती चाहनेवाले कामों में लगाया जा सकता है।

सुखाईः—आबनूस के भीतर की काली लकड़ी सूखने में बहुत कठिन है। वह फटती और तड़कती है। इसलिये इसको बहुत धीरे-धीरे सुखाना चाहिये और वे सब सावधानियाँ काम में लानी चाहियें जो सख़्त लकड़ियों के सुखाने के अध्याय में बताई जा चुकी हैं। परन्तु इसकी सफ़ेद लकड़ी कुछ सरलता से सूख जाती है।

आबनूस के लट्ठों को अधिक दिनों तक वैसे ही असुरक्षित ज़मीन पर न पड़ा रहने देना चाहिये, क्योंकि इस दशा में घुन लगने का डर रहता है। अच्छा तो यह है कि गीले लट्ठों ही को चिरवा कर लकड़ी को हवा में सुखाने के लिये समुचित रूप से चट्टा लगा देना चाहिये।

मज़बूतीः—आबनूस अत्यधिक कठोर और मज़बूत लकड़ी है। यह सागौन से अधिक भारी और कठोर होती है। ब्योरे के लिये पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़्शे को देखिये। आबनूस भारत की उन कुछ लकड़ियों में से है, जो औज़ारों के दस्तों इत्यादि के लिये "ऐश" और "हिकरी" की तुलना में सफल कही जा सकती है। यदि अच्छी प्रकार सुखाई जाय तो आबनूस की बाहर की हल्के रंग की लकड़ी इस काम के लिये बहुत अच्छी है।

पायदारीः—आबनूस के भीतर की काली लकड़ी स्वाभाविक रूप से बहुत समय तक चलनेवाली होती है, परन्तु बाहर की हल्के रंगवाली लकड़ी कम पायदार होती है। डाइसपायरस मेलॅनॉग्ज़ीलन के ६ टुकड़े क़ब्रिस्तानी प्रयोग में ४ वर्ष के भीतर दीमक द्वारा नष्ट हो गये। इसकी सफ़ेद व हल्के रंग की लकड़ी सुगमता से रक्षात्मक मसालों को ग्रहण कर लेती है, जिसके बाद वह एक नियत समय तक रह सकती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—आबनूस यद्यपि कठोर लकड़ी है, फिर भी उसकी चिराई-कटाई या उस पर काम करने में कोई कठिनाई नहीं होती। इस पर ख़ूब सफ़ाई आती है और रगड़ने के बाद लकड़ी बहुत साफ़ व चिकनी निकल आती है और जहाँ तक सफ़ाई का सम्बन्ध है, आबनूस की बाहर की हल्के रंग की लकड़ी भी प्रत्येक काम के लिये उपयुक्त है।

प्रयोगः—आबनूस अपने प्रयोग के विचार से बहुत प्रसिद्ध है। हिन्दुस्तान में इसको खराद के कामों, बेलबूटे काटने, जाली तराशने, पच्चीकारी, सिंगारदान, हाथ की छड़ियाँ और छातों के दस्ते इत्यादि के लिये बहुत पसन्द करते हैं। सजावटी और मूल्यवान् कमरों में इसका फ़र्श भी लगाया जाता है, परन्तु जहाँ लकड़ी का अधिक खर्च हो वहाँ आबनूस की सफ़ेद लकड़ी ही लगाई जा सकती है, क्योंकि इसकी काली लकड़ी बहुत कम मोटी होती है।

इस प्रकार डाइसपायरस मेलेनॉग्ज़ीलन स्थानीय आवश्यकताओं जैसे खम्भों, बल्लियों और नाव इत्यादि बनाने में ही खर्च हो जाती हैं। अपनी कठोरता, मज़बूती, चिकनाहट और सफ़ाई के विचार से यह हर प्रकार के औज़ारों के दस्तों और सख्त कामों के लिये बहुत उपयुक्त है।

मिलने का स्थानः—डाइसपायरस एबेनम बम्बई और उड़ीसा के प्रान्तों से थोड़े परिमाण में मिलती है। उड़ीसा से डाइस-पायरस एम्ब्रिओपटेरिस काफ़ी मिल सकती है। डाइसपायरस मेलेनॉग्ज़ीलन सी० पी० (मध्य प्रदेश), मद्रास, बम्बई, उड़ीसा और संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) से यथेष्ट मात्रा में मिल सकती है अधिक जानकारी के लिये उपरोक्त प्रान्तों में से किसी के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखना चाहिये।

दरः—सी० पी० (मध्य प्रदेश) से इसके लट्ठे ६० रु० से १०० रु० प्रति टन, मद्रास से ५० रु० से ६० रु० प्रति टन और बम्बई से २१ रु० से ५० रु० प्रति टन के हिसाब से मिल सकते हैं। उड़ीसा से २८ रु० प्रति टन और संयुक्त प्रान्त (उत्तर प्रदेश) से २० रु० से २५ रु० प्रति टन तक प्राप्त हो सकते हैं। (सन् १९३७)

डाइसपायरस मारमोराटा

"लगजरी उड" जिसे "मार्बल उड" या "ज़ैब्रा उड" भी कहते हैं। वह डाइसपायरस मारमोराटा की बीच की पक्की लकड़ी है जो केवल अण्डमन के टापुओं में पैदा होती है। यह दुरंगी लकड़ी होती है, जिसमें कुछ काली और पीली धारियाँ होती हैं। यह छोटे नाप में और थोड़े परिमाण में मिलनेवाली लकड़ी है और बहुत क़ीमती होती है। लगभग ३०० रु० प्रति टन के हिसाब से मिलती है (सन् १९३७)। अधिक सूचना के लिये चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर पोर्ट ब्लेयर अण्डमन को लिखिये।

डिप्टेरोकारपस की लकड़ियाँ (Dipterocarpus species)

(१) डिप्टेरोकारपस अलेटस (गुर्जन)
(Dipterocarpus alatus)

(२) डिप्टेरोकारपस इन्डिकस (गुर्जन)
(Dipterocarpus indicus)

(३) डिप्टेरोकारपस मैक्रोकारपस (हौलौंग)
(Dipterocarpus macrocarpus)

(४) डिप्टेरोकारपस टरबिनेटस (गुजन)
(Dipterocarpus turbinatus)

व्यापारिक नामः—गुर्जन, कलकत्ता के बाज़ार में जारूल के नाम से बिकती है।

देसी नामः—गुर्जन, हौलौंग, बिलेनी।

(मालाबार) कैलेनी (कनारा) और जारूल इत्यादि। मियांग और अपेटांग के नामों से जो गुर्जन बिकती हैं वे स्याम और फिलीपाइन के द्वीपों से आती हैं।

वज़नः—४२ से ४८ पौ० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—गुर्जन की सब लकड़ियाँ रूपरंग में एक दूसरे से अधिकतर मिलती-जुलता हैं। ये बादामी या हल्के ब्राउन रंग की कुछ खुरदुरी बनावट की लकड़ियाँ होती हैं। इनके रेशे सीधे और बनावट में थोड़े घने होते हैं। पेड़ के प्रतिवर्ष बढ़ने के चिह्न इन लकड़ियों में स्पष्ट रूप से नहीं दिखाई देते।

सुखाईः—गुर्जन सूखने के विचार से मध्यम श्रेणी का कठोर लकड़ियों में गिनी जाती है। सूखने पर इसका रंग कुछ पक्का हो जाता है। फिर कुछ सुर्खी रहती है। गुर्जन हवा में किलन की अपेक्षा अच्छी तरह सूखती है। इस लकड़ी में जो एक प्रकार का तेल होता है वह इसको किलन में जल्दी नहीं सूखने देता। यदि जल्दी ही सुखाना आवश्यक हो तो पहले लकड़ी को कुछ दिनों हवा में सुखा

लिया जाय, फिर किलन में रक्खा जाय। इस प्रकार लकड़ी जल्दी सूख जायगी।

मज़बूती:—गुर्जन एक अच्छी मज़बूत लकड़ी है। यह सागौन से किसी अंश तक भारी और मज़बूत होती है, परन्तु सागौन से अधिक सिकुड़ती और फूलती है। इसे कितना ही सुखा लीजिये, परन्तु फिर भी इस पर मौसम का प्रभाव अवश्य पड़ता है। और यह फूलती और सिकुड़ती रहती है। इसी कारण इसका अधिक सही और क़ीमती कामों में प्रयोग नहीं किया जाता।

देहरादून में गुर्जन की कई प्रकार की लकड़ियों पर शक्ति के सम्बन्ध में प्रयोग किये जा चुके हैं, जिनका ब्योरा पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़शे में देखिये।

पायदारी:—गुर्जन बाहर के कामों में अधिक दिनों तक चलने-वाली लकड़ी नहीं है। यदि वह ज़मीन से मिली रहे तो जल्दी ख़राब हो जाती है, इसलिये इसमें रक्षात्मक मसाला लगा देना आवश्यक है, यद्यपि भीतरी प्रयोग में गुर्जन यथेष्ट दिनों तक चलती है। विपरीत वातावरण में यह लकड़ी जल्दी गलने-सड़ने लगता है। इसलिये इन बातों से बचाने के लिये इस पर रक्षात्मक मसाला लगाना आवश्यक है। गुर्जन मसाले को सरलता से सोख लेती है और सूखी हुई लकड़ी को यदि दबाव के साथ मशीन द्वारा मसाला दिया जाय तो भीतर तक पहुँच जाता है।

औज़ारों से अनुकूलता:—गुर्जन की लकड़ी चिराई-कटाई और काम करने में थोड़ा मेहनत लेती है, क्योंकि यह मोटे रेशे की लकड़ी है इसलिये इस पर सफ़ाई और चिकनाहट नहीं आ सकती, फिर भी इसको मामूली पालिश और रंग के योग्य बनाया जा सकता है। गुर्जन की कुछ लकड़ियों में एक प्रकार का गोंद पाया जाता है, परन्तु इतना नहीं कि लकड़ी में कोई दोष पैदा कर सके। "डिप्टेरोकारपस मैक्रोकारपस" (हौलौंग) की चाय की

पेटियों के लिये प्लाई उड बनाने के प्रयोग में लाया गया है। इस काम के लिये यह बहुत अच्छी सिद्ध हुई। आसाम में भी यह चाय की पेटियाँ बनाने के लिये उपयुक्त समझी गई। इसी प्रकार "डिप्टेरोकारपस अलेटस" भी हौलौंग के समान प्लाई उड बनाने के लिये उपयुक्त है, परन्तु गुर्जन की और लकड़ियाँ इस काम के लिये ठीक नहीं हैं।

प्रयोगः—गुर्जन यंत्रालय के कामों के लिये अच्छी लकड़ियाँ हैं, जो बहुत से मामूली कामों में आसानी से प्रयोग की जा सकती हैं। ये अत्यधिक मात्रा में पैदा होती हैं, इसलिये ये व्यापारिक दृष्टिकोण से प्रसिद्ध हैं। यदि रक्षात्मक मसाले देकर प्रयोग में लाया जाय तो ये हिन्दुस्तान की इमारती आवश्यकताओं और बड़े कामों में लाई जानेवाली अच्छी लकड़ियाँ सिद्ध हो सकती हैं। मसाला लगा देने के बाद ये रेलवे स्लीपरों के लिये सफल प्रमाणित हुई हैं। आसाम में मारघेरटा पर मसाला दिये हुए स्लीपर अधिकतर गुर्जन ही के थे।

ब्रिटेन में कमरों का फ़र्श लगाने में इनका प्रयोग सफल रहा। परन्तु भारत में जहाँ ऋतुयें बहुत शीघ्र बदलती हैं, ये काम में नहीं लाई जा सकती हैं। इन्हें कमरों के फ़र्श में लगाने से पहले अच्छी तरह सुखा लेना चाहिये।

मिलने का स्थानः—अण्डमन, बर्मा, बंगाल और आसाम से बड़ी मात्रा में मिलती है। दक्षिणी भारत की गुर्जन (डिप्टेरोकारपस इंडीकस) दक्षिणी घाट, कुर्ग और ट्रावणकोर के प्रान्तों से मिलती है। और कई हज़ार टन तक प्रति वर्ष मिल सकती है। आसाम से हौलौंग लगभग १२,००० टन प्रतिवर्ष मिलती है। विशेष जानकारी के लिये चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर अण्डमन या फ़ारेस्ट यूटिलाईजेशन अफ़सर बंगाल, आसाम और मद्रास को लिखना चाहिये।

दरः—अण्डमन से गुर्जन के चौरस लट्ठे ४० से ५८ रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी ५० रु० से ८० रु० प्रति टन मिलती है (सन् १९३७)। बंगाल की क़ीमतें ४५ रु० से ५० रु० प्रति टन उन चौरस लट्ठों के लिये हैं जो चटगाँव से आते हैं। आसाम में ३० फ़ीट लम्बे और ६ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे ४५ रु० प्रति टन, और २४ इञ्ची चौरस लट्ठों के लिये इससे कुछ अधिक क़ीमत देना पड़ती है (सन् १९३७)।

डुआबंगा सोनेरेटीऑइडीज़ (Duabanga sonneratioides)

व्यापारिक नामः—लम्पाती।

देसी नामः—लम्पाती, रामडाला, खोकन (आसाम)

वज़नः—२४ से ३० पौ० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह एक हल्के ब्राउन या बादामी रंग की लकड़ी है। कच्ची और पक्की दोनों ही लकड़ियाँ समान रंग की होती हैं। यह हल्की और मोटे रेशेवाली लकड़ी है। ब्राउन साहब कहते हैं कि यह एक उत्तम प्रकार की लकड़ी है जिसको यदि बढ़ोतरी के वार्षिक चिह्नों के विपरीत चौकोर चीरा जाय तो इसका रंग बहुत अच्छा निकलता है। इसको पैकिंग बक्सों और पेटियों की एक उत्तम लकड़ी समझना चाहिये।

सुखाईः—यह एक नर्म-हल्की लकड़ी है जो हवा और किल्न दोनों में बिना किसी कठिनाई के सुखाई जा सकती है। परन्तु यह आवश्यक है कि लम्पाती के लट्ठों को गीला ही चिरवाया जाय और तुरन्त ही लकड़ी को छोटे चट्टों में लगाकर सुखाने का प्रयत्न किया जाय। नमी के स्थानों में यदि लम्पाती के लट्ठों को अव्यवस्थित रूप में पड़ा रहने दिया जाय तो वे जल्दी ही गलने और सड़ने लगते हैं। जैसा कि दूसरी नर्म लकड़ियों के बारे में बताया जा चुका है। यदि लम्पाती की लकड़ी को चट्टा लगाने से पहले ज़रा धूप दिखा दी जाय तो और अच्छा है। (देखिये नर्म लकड़ियों की सुखाई का वर्णन)

मज़बूती:--लम्पाती बहुत मज़बूत लकड़ी नहीं है, परन्तु इसी हिसाब से यह हलकी भी है, फिर अधिक मज़बूत लकड़ियों के स्थान पर इसे काम में नहीं लाना चाहिये। इसकी शक्ति के बारे में पुस्तक में दिये हुए नक़शे में देखिये।

पायदारी:--यह लकड़ी अधिक पायदार भी नहीं है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके ६ टुकड़े चार वर्ष का अवधि में नष्ट हो गये। फिर भी यह दूसरी नर्म लकड़ियों की अपेक्षा उत्तम "रिकार्ड" है। यदि रक्षात्मक मसाला भी दे दिया जाय तो और भी पायदार हो सकती है।

औज़ारा से अनुकूलता:—औज़ारों के लिये यह ख़ूब नर्म लकड़ी है, परन्तु इस पर सफ़ाई कठिनता से आती है। आसाम में चाय के बक्सों के लिये इसकी प्लाई-उड बहुत बनाई गई, परन्तु इसकी प्लाई-उड इतनी मज़बूत नहीं होती। इसके अतिरिक्त लम्पाती की इतनी प्राप्ति भी नहीं जो इस काम के लिये काफ़ी हो सके।

फिर भी यह हलके वज़न की अच्छी लकड़ी है जिसमें कोई विशेष दोष या गुण नहीं।

प्रयोग:--अभी तक यह लकड़ी अधिकतर तख़्तों के रूप में और पौकिंग बक्सों के ही काम में लाई जाती है या कभी-कभी इसकी बल्लियाँ और नाव की लकड़ियाँ भी बनाते हैं। दीवारों को तख़्तों से ढकने के लिये भी यह उपयोगी है। हलके फ़र्नीचर के लिये लम्पाती एक अच्छी लकड़ी है। इस पर रंग ख़ूब खिलता है। इसलिये साधारण काम की रंगदार चीज़ों के लिये भी यह बहुत उपयुक्त लकड़ी है।

मिलने का स्थान:—हिन्दुस्तान में यह अधिकतर आसाम व बंगाल से मिलती है। आसाम में बंगाल से अधिक होती है। जानकारी के लिये इन प्रान्तों के कंसर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दर:—इसके ३० फ़ीट लम्बे और ४ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे

आसाम से ४० रु० प्रति टन और बंगाल से ३० रु० प्रति टन के हिसाब से मिलते हैं। चिरी हुई लकड़ी ७५ रु० से ९० रु० प्रति टन मिलती है।(सन् १९३७)।

डाइसॉग्ज़ीलम की लकड़ियाँ (Dyroxylum species)

(१) डाइसॉग्ज़ीलम बाइनैक्टेरीफीरम (ह्वाइट सेडर)

(२) डाइसॉग्ज़ीलम हैमिल्टोनया (ह्वाइट सेडर)

(३) डाइसॉग्ज़ीलम मालाबारिकम (ह्वाइट सेडर)

व्यापारिक नामः—सफ़ेद सेडर।

देसी नामः--बिली देवदारी आगिल (कुर्ग) बिलागी (मालाबार)

वज़नः—४८ से ४७ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—असली सफ़ेद सेडर (डाइसॉग्ज़ीलम मालाबारिकम) एक हल्के भूरे रंग की लकड़ी है जो कभी-कभी पीलापन भी लिये हुए होता है। डाइसॉग्ज़ीलम बाइनैक्टेरीफीरम किसी अंश तक सुर्खी लिये हुए बादामी रंग की होती है। इन दोनों में सेडर की सुगंध होती है और ये बारीक रेशों का अच्छी लकड़ियाँ हैं। ये सागौन के बराबर कठोर और वज़न के विचार से साधारण श्रेणी की भारी लकड़ियाँ हैं।

सुखाईः—डाइसॉग्ज़ीलम की लकड़ियों के सूखने में कोई कठिनाई नहीं होती। परन्तु इनकी कच्ची लकड़ी जल्दी बदरंगी और धब्बे ले आती है। इसलिये इनको गीला ही चिरवाकर तुरन्त खुले चट्टों में लगा देना चाहिये। कभी-कभी सूखने की दशा में इन लकड़ियों के बड़े और अधिक चौड़े तख्ते बीच-बीच से महीन-महीन फट जाते हैं, परन्तु इसके अतिरिक्त इनके सूखने में और कोई दोष पैदा नहीं होता।

मज़बूतीः—डाइसॉग्ज़ीलम की लकड़ियाँ खूब मज़बूत होती हैं। यह सागौन से कुछ भारी होती हैं। शक्ति व कठोरता में लगभग

उसके बराबर हैं। चोट सहन करने की शक्ति में यह सागौन से कुछ बढ़ी हुई हैं। पूर्ण ब्योरा पुस्तक के अंत में दिये गये नक़्शे में देखिये।

पायदारीः—डाइसॉग्ज़ीलम की अन्दर की पक्की लकड़ी अधिक पायदार होती है और कीड़े व दीमक का अच्छी तरह सामना करती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में डाइसॉग्ज़ीलम मालाबारिकम और डाइसॉग्ज़ीलम बाइनैक्टेरीफारम के ६-६ टुकड़े ५ वर्ष बाद भी दीमक वाली ज़मीन में सुरक्षित पाये गये हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे साधनों से भी जो कुछ जानकारी प्राप्त हुई उससे भी पता चलता है कि डाइसॉग्ज़ीलम का लकड़ियाँ स्वभावतः काफ़ी दिनों ठहरने वाली हैं।

औज़ारों से अनुकूलताः—इन लकड़ियों की चिराई-कटाई और इन पर सफ़ाई लाना सरल है। इनसे प्लाई-उड बनाने के लिये अभी तक प्रयोग नहीं किया गया, परन्तु विचार किया जाता है कि इस काम के लिये ये अच्छी सिद्ध होंगी। रगड़ने और सफ़ाई लाने के बाद इन लकड़ियों की सतह अतलस के समान साफ़ और चिकनी निकल आती है।

प्रयोगः—डाइसॉग्ज़ीलम अपने पैदावार के क्षेत्रों में यथेष्ट प्रसिद्ध और लोकप्रिय लकड़ी है। यह अधिकतर शराब और शीरा रखने के पीपे बनाने के काम में लाई जाती है और इस काम के लिये अच्छी लकड़ी है। इसके अतिरिक्त इमारती कामों, फ़र्नीचर और रेलगाड़ियों के लिये भी यह उपयोगी है। क्योंकि बिना रक्षात्मक मसालों के यह बहुत दिनों तक रहनेवाली लकड़ी है, इसलिये कई उत्तम लकड़ियों से इसे अच्छा समझा जाता है। फिर भी प्रत्येक आवश्यकता के लिये यह एक अच्छी लकड़ी समझी गई है।

मिलने का स्थानः—दुख है कि डाइसॉग्ज़ीलम की लकड़ियाँ

अपनी माँग की तुलना में बहुत कम प्राप्य हैं। डाइसॉग्ज़ीलम मालाबारिकम केवल मद्रास, कुर्ग और मैसूर के समीप मिलती है।

डाइसॉग्ज़ीलम बाइनैक्टेरीफोरम और डाइसॉग्ज़ीलम हैमिल्टोनिया अल्प परिमाण में केवल आसाम के प्रान्त से मिलती है। अधिक जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाइजेशन अफ़सर मद्रास या आसाम को लिखना चाहिये।

दरः—डाइसॉग्ज़ीलम के लट्ठे मद्रास से ७५ रु० से ८७ रु० प्रति टन मिल सकते हैं। आसाम से इसके १५ इञ्ची चौकोर लट्ठे १८ फ़ीट तक लम्बे १ रु० ६ आ० प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मिलते हैं (सन् १९३७)।

एन्डोस्परमम मेलेकैन्सी (Endospermum malaccense)

व्यापारिक नामः—बकोटा।

देसी नामः—बकोटा।

वज़नः—लगभग ८ से १० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—बकोटा हिन्दुस्तान की सबसे हल्की और मुलायम, सफ़ेद रंग की लकड़ी है। कमरों की दीवारों को ढकने के लिये इस लकड़ी के तख़्ते बहुत अच्छे होते हैं। इसके पानी में डूबने से बचाने के हल्के यंत्र और अन्य सामान भी बनते हैं। यह मज़बूत लकड़ी नहीं है, परन्तु इसको विलायती लकड़ी बालसा के स्थान पर काम में ला सकते हैं जो इस प्रकार के कामों के लिये एक उत्तम लकड़ी है।

सुखाईः—यद्यपि बकोटा के सुखाने के बारे में अभी पूर्णरूप से प्रयोग नहीं किये जा सके। परन्तु दूसरी हल्की लकड़ियों के समान इसमें भी फफूँदी और बदरंगी पैदा हो जाती है। इसलिये इसको भी जल्दी सुखाना उचित है और चट्टा लगाने से पहले इसकी लकड़ियों को सूर्य के सामने एक दूसरे के सहारे मिलाकर

खड़ा करना और अतिरिक्त नमी को धूप की सहायता से निकाल देना एक अच्छा उपाय है, जैसा कि दूसरी नर्म लकड़ियों के बारे में बताया जा चुका है।

मज़बूती:—बकोटा मज़बूत लकड़ी नहीं है। जहाँ मज़बूती आवश्यक हो इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता।

पायदारी:—यह जल्दी ख़राब होनेवाली नापायदार लकड़ी है। परन्तु रक्षात्मक मसालों द्वारा अवश्य कुछ अधिक समय तक चल सकती है परन्तु नर्म और छेदवाली होने के कारण यह बहुत मसाला सोख जायगी।

औज़ारों से अनुकूलता:—मुलायम लकड़ी होने के कारण यह औज़ारों के लिये सरल है। तेज़ धारवाले रन्दे से इस पर ख़ूब सफ़ाई आती है।

प्रयोग:—बकोटा विलायती "बालसा" या "कार्क" की लकड़ी का बहुत उत्तम हिंदुस्तानी बदल है। वायरलैस (बिना तार द्वारा समाचार भेजने का यंत्र) के कमरों में दीवारों को मढ़ने के लिये सबसे पहले इसी लकड़ी को पसन्द किया गया था, परन्तु बाद में एक रासायनिक मसाले 'एसबेसटोज' को उत्तम समझा गया।

मिलने का स्थान:—बकोटा केवल अण्डमन के द्वीपों से मिलती है, जहाँ यह प्रचुर मात्रा में पैदा होती है। अधिक जानकारी के लिये चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर पोर्ट ब्लयर, अण्डमन को लिखिये।

दर:—अण्डमन में इसके लट्ठे २७ रु० ८ आ० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी का भाव ४० रु० प्रति टन है (सन् १९३७)।

यूजीनियाँ की लकड़ियाँ (Eugenia species)

(१) यूजीनियाँ गार्डनेरी (जामुन)

(२) यूजीनियाँ जम्बोलाना (जामुन)

(३) यूजीनियाँ प्रिकॉक्स (जामुन)

व्यापारिक नाम:—जामुन।

देसी नामः—जामुन, निर, नावल, निरालू (कुर्ग)

वज़नः—यूज़ीनियाँ जैम्बोलाना ४२ पौं०, यूज़ीनियाँ गार्डनेरी ६२ पौं० प्रति घनफ़ुट, यूज़ीनियाँ प्रिकॉक्स का वज़न नामालूम है।

लकड़ी की दशाः—यूज़ीनियाँ जैम्बोलाना यानी असली जामुन सुर्खी लिए हुए ब्राउन रंग की लकड़ी है जो कहीं-कहीं अधिक गहरा भी होता है। यह मध्यम श्रेणी के घने रेशोंवाली है और वज़न में भी साधारण श्रेणी की है। परन्तु यूज़ीनियाँ गार्डनेरी, जो दक्षिण-पश्चिमी हिन्दुस्तान की लकड़ी है, अधिक भारी और कठोर होती है। यूज़ीनियाँ प्रिकॉक्स इतनी प्रसिद्ध लकड़ी नहीं है, यह केवल बंगाल के चटगाँव के क्षेत्र में पैदा होती है।

वैसे तो ये तीनों अच्छी लकड़ियाँ हैं, परन्तु इनमें जामुन (यूज़ीनियाँ जैम्बोलाना) विशेष रूप से उत्तम है। यह बहुत पायदार होती है और छाँटी हुई लकड़ी हर तरह बढ़िया फ़र्नीचर बनाने के योग्य हो सकती है।

सुखाईः—जामुन की लकड़ियाँ सूखने के विचार से मध्यम श्रेणी की कठोर लकड़ियों में आती हैं। यदि गर्म व शुष्क मौसम में इनको जल्दी सुखाने का प्रयत्न किया जाय तो ये सिरों पर से फट जाती हैं और सतह से भी तड़क जाती हैं। इसलिये इसको धीरे-धीरे सुखाना चाहिये। जामुन की चिराई ठंडे और नमदार मौसम में की जानी चाहिये। जिसके बाद लकड़ियों को धीरे-धीरे सुखाने के लिये चट्टे को ढक देना चाहिये जैसा कि कठोर लकड़ियों के बारे में बताया जा चुका है। यूज़ीनियाँ गार्डनेरी अधिक कठोर लकड़ी है और इससे भी अधिक सावधानी चाहती है। किल्न में भी इन लकड़ियों को धीरे-धीरे सुखाना चाहिये।

मज़बूतीः—जामुन मज़बूत लकड़ी है। यूज़ीनियाँ गार्डनेरी सागौन से ४० प्रतिशत भारी और ५० प्रतिशत कठोर है। और

भी कई शक्तियों में यह सागौन से बढ़ी हुई है। यूजीनियाँ जैम्बोलाना सागौन के ही बराबर भारी है, परन्तु कठोरता में २० प्रतिशत अधिक है और शक्तियों में यह सागौन के ही बराबर है। पूरी जानकारी के लिये पुस्तक में दिये हुए नक़शे को देखिये।

पायदारीः—देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यूजीनियाँ जैम्बोलाना के टुकड़े सात वर्ष तक बिलकुल ठीक दशा में पाये गये। यूजीनियाँ गार्डनेरी यद्यपि उससे अधिक भारी और कठोर है, परन्तु उसके टुकड़े इस प्रयोग में केवल ७ ही वर्ष टिके। फिर भी दीमक किसी को नहीं लगने पाई। इससे पता चलता है कि जामुन की लकड़ी पर दीमक का प्रभाव नहीं पड़ता। यह बात आसाम में जामुन के रेलवे स्लीपरों से भी प्रमाणित होती है। यद्यपि ये ७ वर्ष बाद गलने तो अवश्य लगे थे, परन्तु इनमें दीमक नहीं लगी। जिन स्लीपरों पर रक्षात्मक मसाला लगा दिया गया था, वे गलने से भी बच गये। ये दोनों लकड़ियाँ रक्षात्मक मसाले को भी भली प्रकार सोख लेती हैं, यद्यपि यूजीनियाँ गार्डनेरी मसाला कम सोखती हैं। इसके गीले लट्ठों को घुन और कुकुरमुत्ता भी लग जाता है। गीली दशा में भी इनकी अधिक देखभाल आवश्यक है।

औज़ारों से अनुकूलताः—जामुन की लकड़ियाँ चिराई-कटाई करने में अधिक परिश्रम नहीं लेतीं, परन्तु यूजीनियाँ गार्डनेरी सूखने पर चिराई के लिये अवश्य कठोर हो जाती है। इसके रेशे भी घुमे हुए होते हैं जो सफ़ाई के बाद बहुत सुन्दर दिखाई पड़ते हैं। अधिक कठोर होने के कारण यह लकड़ी प्लाई-उड के लिये अच्छी नहीं है।

प्रयोगः—जामुन की लकड़ियाँ इमारती कामों और घरेलू आवश्यकताओं में अधिक कामों में लाई जाती हैं। यूजीनियाँ जैम्बोलाना बी० एन० डब्लू० आर० में रक्षात्मक मसाले लगाकर

रेलवे स्लीपरों के प्रयोग में लाई जा चुका है। यूजीनिया गार्डनेरी भी मद्रास रेलवे में स्लीपरों के काम में लाई जा चुकी है। यूजीनिया जैम्बोलाना फ़र्नीचर इत्यादि के लिये भी उत्तम लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—यूजीनिया जैम्बोलाना लगभग प्रत्येक प्रान्त में पाई जाती है। देहातों और बाग़ों में इसे फल के लिये लगाते हैं और यह यथेष्ट मात्रा में पैदा होती है। यूजीनिया गार्डनेरी अधिकतर मद्रास और दक्षिणी हिन्दुस्तान में पाया जाता है। अधिक जानकारी के लिये अपने समीप के किसी कंसर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दरः—बम्बई और मध्यप्रदेश में लट्ठों की क़ीमत ३० रु० से ४० रु० प्रति टन तक होती है। दूसरे प्रान्तों में २० रु० से ३५ रु० प्रति टन। आसाम की चिरी हुई लकड़ी १२ इंच चौकोर और १५ फ़ीट लम्बाई की १ रु० १ आ० प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मिलती है। (सन् १६३७)। जामुन के लट्ठे अधिक मोटे होते हैं, ८ फ़ीट तक गोलाई के मिल सकते हैं।

गार्डिनिया की लकड़ियाँ (Gardenia species)

(१) गार्डिनिया लैटिफोलिया

(२) गार्डिनिया टरजिडा

व्यापारिक नामः—गार्डिनिया, गार्डिनिया लैटिफोलिया को कभी कभी भूल से इण्डियन बाक्स-उड भी कहते हैं यद्यपि असली बाक्स-उड (बकसस सैम्परवायरन्स) हिन्दुस्तान में पैदा होती है। यह दूसरी लकड़ी है।

देसी नाम—पिपरा, डडरी, पेन्ड्रा कोयनोरी (बंगाल) इत्यादि।

वज़नः—४७ से ५७ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह हलके पीले व बादामी रंग की लकड़ी है और बहुत कुछ बाक्स-उड के समान होती है परन्तु इसके रेशे

मोटे होते हैं। यह बाक्स-उड की तरह एक उत्तम लकड़ी है। यह मध्यम श्रेणी की वज़नी और कठोर होती है।

सुखाई:—गार्डिनिया सुखाई के विचार से मध्यम श्रेणी की कठोर लकड़ियों में गिनी जाती है। जल्दी सुखाने में यह सिरों पर से फटती और सतह पर से भी महीन-महीन तड़कने लगती है। इसलिये गार्डिनिया की लकड़ियों को धीरे-धीरे सुखाना चाहिये। और चट्टे को ढक कर गर्म व ख़ुश्क हवाओं से बचाये रखने की आवश्यकता है।

बाक्स-उड के समान इसके लट्ठों को भी यदि बीच से आधा आधा चिरवाकर रखा जाय तो सुखाने के समय लकड़ियों के सिरों पर से फटने का भय बहुत कम होता है।

मज़बूती—गार्डिनिया बहुत कठोर लकड़ियों में से है। देहरादून में अभी पूर्ण रूप से इसकी शक्ति के बारे में प्रयोग नहीं किये जा सके। यह अधिक बड़े नाप में मिलनेवाली लकड़ी नहीं है और अधिकतर ऐसी ही छोटी चीज़ों में काम आती है जिनमें बाक्स-उड के समान घने रेशों की लकड़ी की आवश्यकता होती है।

पायदारी:—गार्डिनिया जिन कामों के लिये उपयुक्त है उनके लिये अधिक पायदार और बहुत दिनों तक चलनेवाली है।

औज़ारों से अनुकूलता:—गार्डिनिया कठोर अवश्य होती है, परन्तु ऐसी नहीं जिससे इसकी चिराई-कटाई कठिन हो जाय। रेशे घूमे हुए होने के कारण यह खराद के काम की अच्छी लकड़ी है जो बारीकी और सफ़ाई के विचार से बहुत कुछ बाक्स-उड के समान और बहुत मूल्यवान् होती है। गार्डिनिया बेलबूटे काटने और जाली इत्यादि बनाने की एक अच्छी लकड़ी है।

प्रयोग:—असली "बाक्स-उड" हिन्दुस्तान में बहुत कम पाई जाती है। इस कारण गार्डिनिया, जो बहुत कुछ बाक्स-उड के समान होती है, इस कमी को बहुत अंश तक पूरा करती है।

इसकी कधियाँ, पैमाने, खिलौने और बहुत सी छोटी-छोटी चीज़ें बनती हैं।

मिलने का स्थानः—गार्डिनिया थोड़ी-थोड़ी बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश और बम्बई के प्रान्तों से मिलती है, परन्तु यह बड़े नाप में नहीं मिलती केवल आठ-दस फ़ीट लम्बाई और २ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे मिल सकते हैं। अधिक जानकारी के लिये समीप के कंसर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दरः—मध्यप्रदेश से इसके लट्ठे ५० रु० से ६५ रु० प्रति टन। बम्बई से ४० रु० प्रति टन और बिहार से २५ रु० प्रति टन के हिसाब से मिलते हैं (सन् १९३७)। उत्तरप्रदेश में गार्डिनिया जलाने की लकड़ियों के समान है, क्योंकि और किसी काम में इसको नहीं लाया गया।

मिलाइना आरबोरिया (Gmelina arborea)

व्यापारिक नामः—गमारी।

देसी नामः—गोमारी, गुम्हार, गुम्वार, कुली (कुर्ग) इत्यादि।

वज़नः—लगभग ३० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह एक उत्तम प्रकार की हलकी और मज़बूत लकड़ी है। रंग हलका पीला या बादामी जिसमें बहुधा गहरे रंग के चिह्न होते हैं। रेशे अधिक घने और चिकने बिना किसी गंध के एक अच्छी पायदार लकड़ी है।

सुखाईः—गमारी हवा में या किलन में दोनों दशाओं में सरलता से सूखता है। यदि चट्टा भली प्रकार लगाया जाय तो सूखने के बाद इसमें कोई दोष नहीं पैदा होता। इसको गीला चिरवाकर खुले चट्टे में भी सुगमता से सुखाया जा सकता है।

मज़बूतीः—गमारी सागौन से १०-१२ पौं० प्रति घनफ़ुट हलकी है और उसके बराबर मज़बूत नहीं। अपने भारीपन के विचार

से यह एक मज़बूत लकड़ी है। ब्योरे के लिये पुस्तक में दिये हुए नक़्शे को देखिये।

पायदारीः—गमारी बिना किसी रक्षात्मक उपायों के यथेष्ट आयु पानेवाली लकड़ी है। परन्तु बाहर के कामों में यह अधिक समय तक दीमक का सामना नहीं कर सकती। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके ६ टुकड़ों में तीन साल बाद कुछ दीमक लगी हुई पाई गई। परन्तु दीमक के अतिरिक्त और सब तरह से यह पायदार लकड़ी है।

औज़ारों से अनुकूलताः—बिना किसी कठिनाई और परिश्रम के इसकी चिराई-कटाई और सफ़ाई हो जाती है। इस पर रंग और पालिश भी ख़ूब चढ़ता है। अच्छी प्रकार सूख जाने के बाद गमारी पर ऋतुओं के बदल का कम प्रभाव पड़ता है। इसी कारण लकड़ी का काम करनेवाले इसको बहुत पसन्द करते हैं।

प्रयोगः—पियर्सन साहब गमारी को हिन्दुस्तान की एक उत्तम लकड़ियों में से बताते हैं। अपनी पैदावार के क्षेत्रों में गमारी एक लोकप्रिय लकड़ी है। यह दीवारों को ढकने की लकड़ियों, बक्सों, नावों, गल्ला नापने के पैमानों और फ़र्नीचर इत्यादि बनाने के काम में लाई जाती है। हलकी होने के कारण इसे कैम्प फ़र्नीचर के लिये विशेष रूप से पसन्द किया जाता है। यदि गमारी प्रचुर मात्रा में मिलती तो इसमें कोई संदेह नहीं कि यह फ़र्नीचर और दूसरी आवश्यकताओं के लिये एक अच्छी लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—यद्यपि गमारी हिन्दुस्तान के अधिकतर प्रान्तों में पैदा होती है फिर भी यथेष्ट मात्रा में नहीं मिलती। बंगाल और आसाम में यह दूसरे प्रान्तों की अपेक्षा अधिक होती है। उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, उड़ीसा और बम्बई के जंगलों में यह कम होती है। जानकारी के लिये उपरोक्त प्रान्तों में से किसी के कंसर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दर:—बंगाल में बक्सा, कुरस्योंग और चटगाव के डिवीज़नों से इसके लट्ठे ३० रु० से ६० रु० प्रति टन, आसाम से लगभग ४५ रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी १५ इंची चौकोर और १५ फ़ीट लम्बाई की १ रु० १ आना प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मिलती है। उड़ीसा से गमारी के लट्ठे ३० रु० से ५० रु० प्रति टन, मध्यप्रदेश से ६० रु० से ६० रु० और बम्बई से २० रु० से ६० रु० प्रति टन लकड़ी की दशा के अनुसार मिलते हैं (सन् १९३७)।

हार्डविकिया बिनेटा (Hardwickia binata)

व्यापारिक नामः—अंजन। देसी नामः—अंजन, कामरा, येपी (तेलगू), आचा (तामिल) इत्यादि।

वज़नः—६९ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद) (परिवर्तनशील)

लकड़ी की दशाः—यह अधिक भारी, सख़्त और पायदार लकड़ी है। पक्की लकड़ी गहरे लाल (ब्राउन) रंग की होती है जिसमें बहुधा काली धारियाँ भी होती हैं। इसमें कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे मोटे और कहीं-कहीं घूमे होते हैं। यह सागौन से दुगुनी सख़्त और कठिनता से सूखनेवाली है। इसी कारण अंजन अधिक उपयोगी लकड़ी नहीं समझी जाती और केवल स्थानीय आवश्यकताओं के लिये जब कोई अच्छी लकड़ी नहीं मिल सकती तो इसे काम में लाया जाता है।

सुखाईः—यह बहुत कठिनाई से सूखनेवाली लकड़ी है और सूखने में ऐंठती और फटती है। अंजन को गीली दशा में ही चिरवाना चाहिये। इसके बाद तुरंत लकड़ी को उचित रूप से चट्टे में लगा कर ढक दिया जाय और धीरे-धीरे सुखाना चाहिये। इस सावधानी से अंजन सुखाई जा सकती है। परन्तु बहुधा सूखते-सूखते इसको घुन लग जाता है।

मज़बूती:—अंजन एक मज़बूत और पायदार लकड़ी है। यह सागौन से दुगुनी भारी है परन्तु इसके वर्ग शक्ति में उससे कम है।

पायदारी:—अंजन किसी अंश तक गलने-सड़ने और दीमक इत्यादि का सामना कर सकती है, यद्यपि सूखते समय इसमें घुन लग जाता है। फिर भी यह आम लकड़ियों की अपेक्षा अधिक दिनों तक चलनेवाली है। रक्षात्मक मसाला देने के लिये अंजन को दवाव के प्रयोग की आवश्यकता है, क्योंकि यह एक भारी और कठोर लकड़ी है। इसकी कच्ची लकड़ी सरलता से मसाला सोख लेती है।

औज़ारों से अनुकूलता:—कठोर होने के कारण (विशेष रूप से सूखने के बाद) अंजन चिराई-कटाई और काम करने में अवश्य अधिक परिश्रम लेती है। इसकी चिराई गीली दशा ही में करानी चाहिये। इस पर सफ़ाई भी बहुत कठिनता से आती है। अंजन को प्लाई उड के लिये प्रयोग में नहीं लाया गया। परन्तु स्पष्ट है कि कठोर होने के कारण यह इस काम के लिये उपयोगी न होगी।

प्रयोग: जहाँ कठोर लकड़ी की आवश्यकता हो वहाँ अंजन अधिकतर काम में लाई जाती है। बैलगाड़ी के पहिये, हल, कंकड़ और रोड़ी कूटने के दुरमुट और ऐसी ही कठोर वस्तुओं के लिये अंजन की लकड़ी अपने पैदावार ही के क्षेत्रों में अधिक लग जाती है। इसके खम्भे, शहतीर और खानों के अन्दर की टेकनें इत्यादि अच्छी बनती हैं। यह कमरों के फ़र्श तम्बुओं व डेरों की खूँटियों और रेल के ब्रेक्स इत्यादि के लिये भी अच्छी लकड़ी है।

मिलने का स्थान:—अंजन मद्रास, बम्बई, मैसूर और मध्यप्रदेश के जंगलों से मिलती है। प्रायः इसके पेड़ जहाँ तहाँ पाये जाते हैं परन्तु कुछ डिवीज़न ऐसे भी हैं जहाँ इसके लगातार जंगल मौजूद हैं। जानकारी के लिये सम्बन्धित प्रान्तों के किसी कन्सर्वेटर आफ़

फ़ारेस्ट को लिखिये। इसके लट्ठे अधिकतर तीन फ़ीट गोलाई के होते हैं और कभी-कभी ४ फ़ीट तक गोलाई के भी मिल जाते हैं।

दर:—मध्यप्रदेश में ३ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे ५० रु० से ७० रु० प्रति टन, मद्रास में २५ रु० से ६० रु० प्रति टन और बम्बई से २० रु० से ४३ रु० प्रति टन लकड़ी की दशा के अनुसार मिल जाते हैं।

हार्डवीकिया पिनेटा (Hardwickia pinnata)

व्यापारिक नाम:—पाइनी।

देसी नाम:—शुगाली (मालाबार), कम्पैनी (कुर्ग) और कोला-वरम इत्यादि।

नोट:—कभी-कभी इस लकड़ी को साटीनी और मालाबार महागनी भी कहते हैं जो ग़लत है।

वज़न:—४३ से ५५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशा:—इसकी कच्ची लकड़ी काफ़ी चौड़ी और सफ़ेद भूसले रंग की होती है। पक्की गहरे ब्राउन और सुर्ख़ी लिये हुए जिसमें से बहुधा चिपकनेवाला गोंद निकलता है। इसके रेशे कुछ मोटे और घूमे हुए होते हैं जिससे लकड़ी सफ़ाई और पालिश के बाद अधिक सुन्दर मालूम होती है। 'ब्राउन' इसे उत्तम प्रकार की हिन्दुस्तानी लकड़ियों में गिनते हैं।

सुखाई:—इसकी कच्ची लकड़ी जल्दी बदरंगी ले आती है और इसे कीड़ा भी लग जाता है। इसलिये इसे रक्षात्मक मसाला लगाया जाय, नहीं तो उसको निकलवा देना ही अच्छा है जिससे इसकी पक्की लकड़ी ख़राब न होने पाये। इसकी पक्की लकड़ी भली प्रकार सूखती है सिवाय इसके कि बीच के तख़्तों में जहाँ पहले ही से लकड़ी कुछ तड़की हुई हो तो सूखने में और फट जाती हैं नहीं तो साफ़ तख़्ते ठीक सूखते हैं। देहरादून में इसके २½ इंची मोटे तख़्तों को हवा में ८ प्रतिशत तक की नमी

में सूखने में केवल एक साल लगा। यदि चट्टे को नियमित रूप से लगाकर और ढककर सुखाएँ तो यह बहुत अच्छी निकलती है। किल्न में इसको सुखाने का अभी तक प्रयोग नहीं किया गया परन्तु विचार किया जाता है कि यह लकड़ी किल्न में भी अच्छी तरह सुखाई जा सकती है।

मज़बूती:—पाइनी अधिक मज़बूत और मध्यम श्रेणी की कठोर लकड़ी है। यह शक्ति में सागौन से ८० से ९० प्रतिशत है। ब्योरे के लिये पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़्शे को देखिये।

पायदारी:—इसकी कच्ची लकड़ी जल्दी नष्ट हो जाती है परन्तु पक्की बहुत दिन चलनेवाली और मज़बूत है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में पाइनी के टुकड़े ६ साल से अधिक समय तक स्थिर रहे। कदाचित् इस लकड़ी का गोंद इसकी रक्षा करता है। अभी तक इस पर रक्षात्मक मसाला लगा कर प्रयोग नहीं किया गया।

औज़ारों से अनुकूलता:—पाइनी चिराई-कटाई और काम करने में अधिक परिश्रम नहीं लेती। सफ़ाई, सुन्दरता और भड़क भी अधिक आती है। पालिश अच्छा होता है परन्तु गोंद होने के कारण पालिश की चमक धीमी पड़ जाती है। खरादी चीज़ें बनाने के लिये भी यह अच्छी लकड़ी है। यद्यपि प्लाई-उड के लिये इसको प्रयोग में नहीं लाया गया परन्तु विचार किया जाता है कि इस काम के लिये भी यह लकड़ी उपयुक्त ही होगी।

प्रयोग:—प्रयोग के विचार से यह लकड़ी दक्षिणी भारत में खूब प्रसिद्ध है। यह यूरोप को भी भेजी गई है परन्तु अधिक नहीं। पश्चिमी घाट के प्रान्त में इमारती आवश्यकताओं में इसका अधिक प्रयोग होता है। शहतीर, वर्गे, पट्टियाँ, छत के तख़्ते, और फ़र्श इत्यादि बहुधा इसी लकड़ी के बनाये जाते हैं। घुमे हुए रेशों-वाली लकड़ी सजावटी फ़र्नीचर के लिये अच्छी रहती है। सुन्दरता

के विचार से इसकी बारीक चिरी हुई तख्तियाँ और प्लाई-उड भी अच्छी होंगी।

मिलने का स्थानः—पाइनी दक्षिण-पच्छिमी भारत की लकड़ी है। कुर्ग, ट्रावनकोर और मद्रास के पच्छिमी जंगलों में भी यह प्रचुर मात्रा में होती है। इसके ६ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे मिल जाते हैं। पूर्ति के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाइजेशन अफ़सर चोपाक, मद्रास या चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर कुर्ग को लिखना चाहिये।

दरः—मद्रास से पाइनी के लट्ठों का भाव आम तौर पर ३७ रु० प्रति टन है। कुर्ग के जंगलों से इसकी प्रतिवर्ष निकासी लगभग १८,७०० घनफ़ीट है और बलियापटम में १२½ घनफ़ीट के लट्ठे ७ रु० प्रति लट्ठे के हिसाब से बिकते हैं।

हेरिटाइरा फोमेस या हेरिटाइरा माइनर (Heritiera fomes)

व्यापारिक नामः—सुन्दरी।

देसी नामः—सुन्दरी।

वज़नः—४८ से ६४ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी लाली लिये हुए बादामी रंग की होती है और पक्की गहरे ब्राउन रंग की लकड़ी में कोई विशेष प्रकार की गंध या स्वाद नहीं होता। यह अधिक भारी, कठोर और घूमे हुए महीन रेशों वाली होती है। सुन्दरी को अच्छी मज़बूत लकड़ियों में गिना जाता है। इसके सूखे हुए पेड़ों से जो लकड़ी मिलती है वह हरे पेड़ों की अपेक्षा अच्छी होती है। इसी क़िस्म की एक और लकड़ी (ब्रुग्वीरा जिमनोरिज़ा) अण्डमन के टापुओं और भारत के सागरी तट के जंगलों में पाई जाती है। इसके लट्ठे सुन्दरी से अधिक लम्बे होते हैं और रक्षात्मक मसालों को भली प्रकार सोख लेते हैं। इस विचार से यह लकड़ी लम्बी बल्लियों के रूप में अधिक काम में लाई जा सकती है। परन्तु अभी

यह मालूम नहीं कि "अ्ग्वीरा जिमनोरिज़ा" बल्लियों के नाप में सरलता से सुखाई भी जा सकती है या नहीं क्योंकि यह लकड़ी सिरों पर से फट जाती है।

सुखाई:—सुन्दरी के सुखाने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती परन्तु बाहर की सतह पर से महीन-महीन चटक अवश्य जाती है। यह सूखती भी धीरे-धीरे है। सुखाई में सुन्दरी बहुत कुछ साल से मिलती-जुलती है। देहरादून में यह लकड़ी किल्न में ठीक तरह सूख तो गई परन्तु यह सिद्ध हुआ कि इसको कम गर्मी पर धीरे-धीरे सुखाना आवश्यक है। इसकी चिराई गीली दशा में करानी चाहिये और चट्टे को ढककर सावधानी से सुखाने की आवश्यकता है।

मज़बूती:—सुन्दरी अधिक कठोर व मज़बूत लकड़ी है। यह सागौन से लगभग दुगुनी कठोर और मज़बूती में १० से २० प्रतिशत बढ़ी हुई है। परन्तु यह भी ध्यान रखना चाहिये कि यह सागौन से ५० प्रतिशत भारी भी है। फिर भी जिन कामों में कठोरता, मज़बूती और लचक की आवश्यकता हो उसके लिये सुन्दरी एक उत्तम लकड़ा है।

पायदारी:—यह बहुत दिनों तक चलने वाली लकड़ी है। 'पियर्सन' साहब का कहना है कि सुन्दरी की बनी हुई नावें ६० वर्ष से भी अधिक चलीं और इसके खम्भे नम जलवायु में भी १८ साल तक चले। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयाग में यह पाँच वर्ष तक स्थिर रही। इसकी कच्ची लकड़ी रक्षात्मक मसाले को सरलता से सोखती है परन्तु पक्की दबाव की मशीन की सहायता के बिना अच्छी तरह मसाले को नहीं पाती।

औज़ारों से अनुकूलता:—हिन्दुस्तानी सुन्दरी कठोर अवश्य है परन्तु चिराई-कटाई और काम करने में अधिक परिश्रम नहीं लेती। कलकत्ते में नदी की राह देहातों में जाने वाली नावें अधिकतर सुन्दरी ही की बनाई जाती हैं जिससे ज्ञात होता है कि यह

लकड़ी इस काम के लिये कितनी उपयुक्त है। वर्मा की सुन्दरी सूखने के बाद इतनी कठोर हो जाती है कि उसे काम में लाना कठिन हो जाता है। प्लाई-उड के लिये सुन्दरी पर कोई प्रयोग नहीं किया गया। विचार किया जाता है कि इस काम के लिये यह अधिक भारी और कठोर होने के कारण उपयुक्त न होगी परन्तु खराद के कामों के लिये यह ठीक रहती है और सफ़ाई खूब आती है और पालिश भी अच्छा चढ़ता है।

प्रयोगः—सुन्दरी कलकत्ते की विख्यात लकड़ी है। सुन्दरवन से प्रचुर मात्रा में लाई जाती है और अधिकतर ईंधन के तौर पर प्रयोग में लाते हैं। परन्तु नावें बनाने में भी यह बहुत उपयोगी है। सैकड़ों वर्षों से बैलगाड़ियों और नावों में इसका प्रयोग होता चला आया है। इमारती कामों में भी यह पसन्द की जाती है। सुन्दरी को औज़ारों के दस्तों और पतली छड़ों इत्यादि के लिये भी काम में लाया जाता है। फावड़ों और बड़े दस्तों के लिये भी यह एक उत्तम लकड़ी है परन्तु हथौड़ों और दूसरे छोटे औज़ारों के लिये इसके दस्ते भारी हो जाते हैं। फिर भी रेलवे के कारखानों में सुन्दरी औज़ारों के दस्ते बनाने के काम में लाई जाती है। यदि इसे भली प्रकार सुखाया न जाय तो औज़ारों में लगने के बाद दस्ते सूखने से बारीक बारीक फटकर खुरदुरे हो जाते हैं और चिकनाहट न होने से पकड़ने में सुविधा नहीं होती। सुन्दरी खेमों की खूँटियों, लकड़ी की गरारियों, गाड़ी के पहियों, खानों के भीतर खम्भों और ऐसे अन्य कामों के लिये एक उत्तम लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—सुन्दरी के मिलने का मुख्य स्थान सुन्दरवन (बंगाल) है जहाँ से यह नावों और रेल द्वारा कलकत्ते लाई जाती है। लकड़ी के व्यापारी इसे भारी परिमाण में जमा कर लेते हैं। परन्तु इसके बड़े लट्ठे नहीं मिलते। सुन्दरी छोटे नाप ही में आती है।

दरः—बंगाल में २५ रु० से ३० रु० प्रति टन (सन् १९३७)

हौलोपटीलिया इन्टिग्रीफ़ोलिया (Holoptelea integrifolia)

व्यापारिक नामः—काञ्जू। इसको "एल्म" भी कहते हैं जो ग़लत है।

देसी नामः—पिपरी, काञ्जू, चिलबिल (बिहार)

वज़नः—३६ से ४१ पा० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह एकसार बादामी रंग की लकड़ी है। चिराई के बाद हवा लगने पर इसका रंग कुछ गहरा हो जाता है और कहीं-कहीं कुकुरमुत्ते के प्रभाव से भूरा दिखाई पड़ता है। इसके रेशे कुछ अंश तक घूमे हुए परन्तु समान और घने होते हैं। तुरन्त कटी हुई लकड़ी में एक प्रकार की गंध होती है जो सूखने पर जाती रहती है। काञ्जू एक मध्यम श्रेणी की वज़नी और अच्छी लकड़ी है, यद्यपि यह अधिक मज़बूत नहीं होती। इसकी प्राकृतिक बनावट कुछ सेमल और हल्दू के बीच की समझना चाहिये। सेमल के रेशे इसकी तुलना में अधिक मोटे और हल्दू के महीन होते हैं।

सुखाईः—काञ्जू की कच्ची लकड़ी कुकुरमुत्त और बदरंगी को जल्दी पकड़ लेता है और इसको कीड़ा लगने का डर रहता है। किन्तु उचित रूप से चट्टा लगाने और आवश्यक देखभाल करने से इसको हवा में भी बिना किसी ख़राबी के सुखाया जा सकता है। असावधानी करने से यह ऐंठती और फटती भी है। देहरादून में काञ्जू के १ इंची मोटे तख़्ते बिना किसी दोष के ५ प्रतिशत नमी तक केवल एक महीने में हवा में सुखाये गये। इस लकड़ी को चिराने के बाद जल्दी सुखाना उचित है ताकि बदरंगी और कीड़े इत्यादि से सुरक्षित रहे। किल्न में काञ्जू भली प्रकार सूखती है, यहाँ तक कि उसका असली रंग और चमक वैसी ही बनी रहती है।

मज़बूती:—काञ्जू अधिक मज़बूत लकड़ी नहीं, और न इस प्रयोजन के लिये काम में लाई जाती है। कठोरता और लचक के विचार से यह सागौन से ६५ प्रतिशत है। परन्तु धक्का और चोट सहने की शक्ति में उसके बराबर है। वज़न में यह सागौन से ८५ प्रतिशत ही है। इस विचार से हम यह कह सकते हैं कि काञ्जू अपने भारीपन के हिसाब से काफ़ी मज़बूत लकड़ी है।

पायदारी:—काञ्जू बहुत दिनों चलने वाली लकड़ी नहीं है, विशेष रूप से जब इसे गीली दशा में प्रयोग किया जाय तो जल्दी नष्ट हो जाने वाली है। परन्तु अच्छी तरह सुखा लेने के बाद काञ्जू भीतरी और साफ़-सुथरे कामों में अधिक दिनों तक चल सकती है। यह रक्षात्मक मसाला सोखती है। परन्तु जब बाहरी काम में लाना हो, तो दबाव के तरीक़े से मसाला देना चाहिये।

औज़ारों से अनुकूलता:—चिराई-कटाई और काम करने के विचार से काञ्जू अधिक सरल लकड़ी है परन्तु किसी-किसी स्थान पर रेशों के घुमाव के कारण इस पर जितनी सफ़ाई आनी चाहिये उतनी नहीं आती। छेदों को भर देने के बाद इस पर पालिश खूब चढ़ता है और हर तरह से इसको मध्यम श्रेणी की लकड़ियों में गिन सकते हैं। ख़रादी चीज़ों के लिये भी काञ्जू अच्छी है। प्लाई-उड के लिये अभी तक इस पर प्रयोग नहीं किया गया।

प्रयोग:—काञ्जू उत्तरप्रदेश, बिहार, उड़ीसा और पच्छिमी तट की एक प्रसिद्ध लकड़ी है। यह साधारण फ़र्नीचर, सन्दूक़ों के तख़्तों, स्लेट के चौखटों, धागे की रीलों ब्रुश के दस्तों और दियासलाई इत्यादि के लिये बहुत उपयोगी लकड़ी है। इसको बरेली में अंटे (बाबिन) के लिये भी जाँचा गया था परन्तु हल्दू ही को इस काम के लिये ठीक लकड़ी समझा गया। काञ्जू सन्दूक़ बनाने की एक अच्छी लकड़ी है और जहाँ यह यथेष्ट मात्रा में मिलती है वहाँ अधिकतर इसी काम में प्रयोग की जाती है।

मिलने का स्थानः – काञ्जू उत्तरप्रदेश में अधिक होती है। केवल वेस्टर्न सर्किल से काञ्जू के लट्ठे ६०,००० घनफ़ीट के लगभग निकलते हैं। इससे कुछ कम बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश और उत्तरी मालाबार के पश्छिमी किनारे से भी मिलती है।

दरः—उत्तरप्रदेश से इसके लट्ठे १५ फ़ीट लम्बे और ५ फ़ीट से अधिक गोलाई के २५ रु० प्रतिटन और बिहार से ३० रु० प्रतिटन मिलते हैं। (सन् १९३७)

होपिया की लकड़ियाँ (Hopea species)

(१) होपिया ओडोरेटा
(२ होपिया पार्विफ्लोरा
(३) होपिया ग्लेबरा
(४) होपिया वाइटिएना

व्यापारिक नामः—होपिया। बर्मा में इसे चिंगन कहते हैं।

देसी नामः—चिंगन, अण्डमन, बोगम (तामिल), काञ्जू, हेगी (कनारा), इरुकू (कुर्ग), तिलसुर (बंगाल) इत्यादि।

वज़नः – होपिया ओडोरेटा लगभग ४७ पौं० प्रति घनफ़ुट और होपिया पार्विफ्लोरा ५८ से ६२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—होपिया की लकड़ियाँ खुलते हुए ब्राउन या सुर्ख़ी लिये हुए ब्राउन रंग की होती हैं जिनमें कहीं-कहीं कुछ पीलेपन की झलक भी मिलती है। कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे काफ़ी महीन और समान परन्तु बहुधा घूमे हुए होते हैं। ये बहुत कठोर और मज़बूत व पायदार लकड़ियाँ हैं। होपिया ओडोरेटा मुख्यतः बर्मा की लकड़ी है परन्तु बंगाल, बम्बई और अण्डमन में भी होती है। होपिया पार्विफ्लोरा केवल दक्षिणी भारत में पैदा होती है। इसमें की दूसरी लकड़ियाँ होपिया ग्लेबरा

और होपिया वाइटियना दक्षिण-पश्चिमी भारत में पाई जाती हैं।

सुखाई:—सूखने में होपिया की गिनती मध्यम श्रेणी की कठोर लकड़ियों में होती है। चट्टे को ढक कर सुखाने और काफ़ी हवा के आने-जाने का प्रबन्ध रखने से होपिया की लकड़ियाँ बिना किसी दोष के सुखाई जा सकती हैं। कभी-कभी बाहरी सतह पर लकड़ी में महीन-महीन फटने के चिह्न दिखाई देते हैं। परन्तु जैसा कि बताया जा चुका है चट्टे को अच्छी तरह ढक कर रखने से यह दोष अधिक पैदा नहीं होता। तात्पर्य यह है कि होपिया की लकड़ियों को कुछ सावधानी से धीरे-धीरे सुखाने की आवश्यकता है। इनकी चिराई-कटाई गीली दशा में करनी चाहिये। ये किल्न में बिना किसी कठिनाई के सुखाई जा सकती हैं।

मज़बूती:—होपिया पार्विफ्लोरा एक अधिक मज़बूत, कठोर और लचकदार लकड़ी है। यह सागौन से २० प्रतिशत अधिक मज़बूत और दुगुनी कठोर है। होपिया ओडारेटा वज़न और शक्ति में सागौन के बराबर है। परन्तु उससे ३० प्रतिशत अधिक कठोर है। होपिया ग्लेबरा बहुत सख़्त और मज़बूत लकड़ी है, सागौन से दुगुनी कठोर और ३० प्रतिशत अधिक मज़बूत है।

पायदारी:—होपिया की सब लकड़ियाँ अति पायदार और बहुत दिनों तक चलनेवाली हैं। होपिया पार्विफ्लोरा के बारे में कहा गया है कि यह लकड़ी ख़राब से ख़राब जलवायु में भी बिना किसी भय के बाहर के कामों में लाई जा सकती है। होपिया ओडारेटा के स्लीपर बिना किसी रक्षात्मक मसाले के १५ वर्ष तक रेलवे के प्रयोग में रहे और इसकी खोदी हुई छोटी-छोटी नावें और डोंगी ६० वर्ष से भी अधिक समय तक चलती हुई पाई गईं। इसकी कच्ची लकड़ी रक्षात्मक मसाले को सोखती है। परन्तु पक्की

लकड़ी अधिक कठोर होने के कारण मसाला सोखने के योग्य नहीं होती।

औज़ारों से अनुकूलता:—क्योंकि होपिया की लकड़ियाँ बहुत कठोर होती हैं, इसलिये उन पर औज़ार कठिनता से चलते हैं और उनकी चिराई और कटाई में बहुत परिश्रम करना पड़ता है। इसके बाद खूब सफ़ाई आती है और पालिश भी अच्छी चढ़ती है।

प्रयोग:—होपिया विशेषतः मज़बूत और पायदार इमारती लकड़ियाँ हैं। नाव बनाने और पुल बनाने में अधिकतर इन्हीं को प्रयोग में लाया जाता है और इनके शहतीर और बल्लियाँ भी अच्छी होती हैं। बैलगाड़ियों और रेल के स्लीपरों में भी होपिया की लकड़ियों का अधिक प्रयोग होता है। इससे फ़र्नीचर भी बनाया जाता है। तात्पर्य यह है कि बर्मा में सागौन के बाद इन्हीं लकड़ियों को हर प्रकार के कामों में लाते हैं।

मिलने का स्थान:—होपिया ओडोरेटा अधिकतर बर्मा ही में पैदा होती है। परन्तु बंगाल में यथेष्ट होती है और कुछ न्यून मात्रा में अण्डमन और बम्बई में भी मिल जाती है। होपिया पार्विफ्लोरा दक्षिणी भारत की लकड़ी है और पश्चिमी तट के बन्दरगाहों और लकड़ी के दूसरे व्यापारिक केन्द्रों में बहुतायत से मिलती है। ये दोनों प्रसिद्ध लकड़ियाँ काफ़ी लम्बे लट्ठों के रूप में, जो ६ फ़ीट तक गोलाई के होते हैं मिलती हैं। जानकारी के लिये चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर अण्डमन व कुर्ग या फ़ारेस्ट यूटिलाइजेशन अफ़सर चीपाक को लिखिये।

दर:—बंगाल में चटगाँव के होपिया ओडोरेटा के लट्ठे ३० रु० से ४० रु० प्रति टन और बम्बई में ५० रु० से ७० रु० प्रति टन मिलते हैं। मद्रास से होपिया पार्विफ्लोरा के लट्ठे ४५ रु० से ६२ रु० प्रति टन आते हैं। (सन् १९३७)

हाईमिनोडिकटियन एक्सलसम (Hymenodictyon excelsum)

व्यापारिक नामः—कुठान। देसी नामः—बोरंग, भोरसल, भोलन, डोडी (कुर्ग), भुरखंड (बिहार), लाटी कारुम (बंगाल)

वज़नः—३२ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कुठान तुरन्त की कटी हुई सफ़ेद रंग की होती है जो हवा लगने पर हल्का बादामी रंग पकड़ लेती है। इसकी कच्ची व पक्की लकड़ी एक ही रंग की होती है जिसको पहचानना कठिन होता है। इस लकड़ी में कोई विशेष गंध व स्वाद नहीं होता। यह सीधे और मध्यम श्रेणी के घने रेशों की लकड़ी है जिसमें कोई विशेष सुन्दरता और सफ़ाई नहीं रहती।

सुखाईः—यह सरलतापूर्वक हवा में सुखाई जा सकती है। इसमें थोड़ी बहुत बदरंगी आ जाने के अतिरिक्त और कोई दोष नहीं पैदा होता। किल्न में भी यह भली प्रकार सूखती है और कोई दोष नहीं आने पाता। इस लकड़ी को गीली ही चिरवाकर साफ़-सुथरी और हवादार जगह में चट्टा लगाना इसको सावधानी से सुखाने के लिये उत्तम उपाय है।

मज़बूतीः—कुठान मज़बूत व पायदार लकड़ी नहीं है। यह कठारता और मज़बूती के विचार से सागोन की अपेक्षा आधी है। यह अपना डौल ठीक बनाये रखती है। अधिक मज़बूती चाहनेवाले कामों में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

पायदारीः—कुठान अधिक समय तक रहनेवाली लकड़ी नहीं है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके सब टुकड़े २ वर्ष ही में नष्ट हो गये। परन्तु रक्षात्मक मसालों द्वारा शोधित लकड़ी अवश्य अधिक काल तक चल सकती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—औज़ारों के लिये यह नर्म और काम करने में अधिक परिश्रम नहीं लेती। खरादी चीज़ों के लिये भी

अच्छी है। सफ़ाई अच्छी आती है। पालिश करने से पहले इसके छेदों को भर लेना चाहिये, नहीं तो यह पालिश बहुत सोखती है। इस पर रंग भी अच्छा चढ़ता है। देहरादून में प्लाई-उड बनाने के प्रयोग में यह सफल रही। कुठान हिन्दुस्तान की उन इनीगिनी सफ़ेद लकड़ियों में से है जिनसे उत्तम प्रकार की प्लाई-उड बनाई जा सकती है।

प्रयोगः—गत वर्षों में कुठान की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया। परन्तु हाल ही में इस बात का विचार किया गया कि कुठान भी एक अच्छी लकड़ी है। ब्रुश बनानेवाली फैक्ट्रियाँ इसको "बीच" की लकड़ी का उपयुक्त बदल समझती हैं, यद्यपि यह "बीच" से कुछ नर्म अवश्य है। दियासलाई के लिये यह एक अच्छी लकड़ी है। खिलौने, अनाज नापने के नाप, पीपे और सन्दूक इत्यादि बनाने के लिए यह उत्तम लकड़ी है। इसकी उपज अधिक नहीं है।

मिलने का स्थानः—यह थोड़ी-थोड़ी आसाम, बंगाल, बिहार, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश सभी स्थानों में होती है। जानकारी के लिये इन प्रान्तों में से किसी के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखना चाहिये। कुठान उन लकड़ियों में से है जिसको यदि अधिक से अधिक उपजाया जाय तो उतनी ही उपयोगी होगी। अनुकूल जलवायु में इसके ५ फ़ीट तक गोलाई के पेड़ उगते हैं। यह बर्मा में पैदा होती है।

दरः—आसाम से इसके लट्ठे ३५ रु० प्रति टन, और १५ इंची चौकोर व १८ फ़ीट तक लम्बी लकड़ी १ रु० २ आ० प्रति घनफ़ुट मिलती है। बंगाल में कुर्सियांग, बकसा और चटगाँव डिवीज़न से इसके लट्ठे १८ रु० से २५ रु० प्रति टन के हिसाब से मिलते हैं। बिहार से भी अधिक मात्रा में ३० से ३८ रु० प्रति टन, उत्तर प्रदेश से २५ रु० प्रति टन के हिसाब से मिल सकते हैं (सन् १९३७)

जुगलन्स रीजिया और जुगलन्स फेलेक्स

(Juglans regia and Juglans fallax)

व्यापारिक नामः—वालनट । देसी नामः—अखरोट, अख़ोर इत्यादि ।

वज़नः—लगभग ३६ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

नोटः—वालनट के टुकड़े बहुधा २८ से ४३ पौं० प्रति घनफुट तक भारी पाये गये हैं।

लकड़ी की दशाः—यह प्रसिद्ध लकड़ी कभी बादामी और कभी गहरे बादामी रंग की होती है। इसमें काली धारियाँ भी होती हैं। केवल अपने सुन्दर रंगरूप के कारण ही इतनी प्रसिद्ध नहीं है। परन्तु हल्की होते हुए भी अधिक मज़बूत लकड़ी है। इस पर काम करने और सफ़ाई लाने में कोई कठिनता नहीं होती। वालनट की विशेषता यह है कि भली प्रकार सुखा लेने पर जलवायु के परिवर्तन का कम प्रभाव पड़ता है और यह बहुत अंश तक सिकुड़ने, फैलने और फटने से बची रहती है। यही कारण है कि यह बन्दूक़ों और राइफ़लों के कुन्दों के लिये विशेष रूप से पसन्द की जाती है। बेल-बूटे खोदने और दूसरे बारीक कामों में भी इसे प्रयोग में लाया जाता है।

सुखाईः—वालनट धीरे-धीरे सूखती है और सूखते समय काफ़ी सिकुड़ती है। परन्तु हवा और किलन दोनों प्रकार सरलता से सुखाई जा सकती है। इसको गीली दशा में चिरवा कर चट्टा लगाने के बाद ढक देना और हवा के आने-जाने का ठीक प्रबन्ध रखना इसको सुखाने का अच्छा ढंग है। तनिक सी सावधानी के साथ वालनट बिना किसी दोष के सुखाई जा सकती है। कभी-कभी इसके बड़े तख़्ते सिरों पर से कुछ फट जाते हैं। यदि तख़्तों के सिरों पर मसाला लगा दिया जाय तो यह दोष भी नहीं आने पाता।

मज़बूतीः—वालनट अपने वज़न के विचार से यथेष्ट मज़बूत है। सागौन से १५ प्रतिशत हलकी होने पर भी चोट सहन करने में उसके समान है।

पायदारीः—वालनट अधिक समय चलनेवाली लकड़ी नहीं है। कुकुरमुत्ता और दीमक इत्यादि का भली प्रकार सामना नहीं कर सकती। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसकी लकड़ियाँ केवल दो वर्ष तक रहीं। इसलिए जब वालनट को किसी उत्तम प्रकार के फ़र्नीचर इत्यादि बनाने के प्रयोग में लाना हो तो कोई पतला बिना रंगवाला मसाला इस पर लगा देना चाहिये। इससे लकड़ी अधिक समय तक सुरक्षित रह सकती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—चिराई, कटाई और काम करने के विचार से यह बहुत सरल लकड़ी है। इस पर औज़ार भली प्रकार चलते हैं और सफ़ाई खूब आती है। इस लकड़ी को तेज़ से तेज़ खराद पर भी काम में लाया जा सकता है।

काश्मीर और सारे उत्तरी भारत में वालनट बेल-बूटे खोदने की बहुत उत्तम लकड़ी समझी जाती है। इसके पतले तख़्ते और प्लाई-उड भी अच्छी बनती है। छेदों को भर देने के बाद इस पर पालिश भी खूब चढ़ता है।

प्रयोगः—काश्मीरी वालनट की लकड़ी अधिकतर गवर्नमेंट के आर्डनेन्स विभाग में सेना की राइफ़लों और बन्दूक़ों के कुन्दे बनाने के काम में लाई जाती है। स्वयं काश्मीर और उत्तरी भारत में यह उत्तम प्रकार के फ़र्नीचर और बेल-बूटे की खुदाई में बहुत काम आ जाती है। अधिकतर बन्दूक़ों के कुन्दे वालनट ही के बनाये जाते हैं। तात्पर्य यह है कि सब उत्तम प्रकार के कामों में जहाँ एक अच्छी मज़बूत और हलकी लकड़ी की आवश्यकता हो बहुत कम लकड़ियाँ वालनट की समता कर सकती हैं; यदि इसमें गहरे काले फूल हों तो सुन्दरता में कोई लकड़ी इसकी तुलना नहीं कर सकती।

मिलने का स्थान:—वालनट की लकड़ी हिन्दुस्तान में अधिकतर काश्मीर से मिलती है। जानकारी के लिये कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन सर्किल, बारामूला, काश्मीर को लिखना चाहिये। परन्तु पंजाब के कुछ पहाड़ी क्षेत्रों, उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त और उत्तर-प्रदेश से भी मिल सकती है। इसलिये चीफ़ कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट, लाहौर और फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन अफ़सर, नैनीताल को भी लिखना चाहिये।

दर:—वालनट के दाम लकड़ी की दशा के अनुसार भिन्न-भिन्न रहते हैं। काश्मीर से इसके उत्तम प्रकार के १० फ़ीट लम्बे, १ फुट चौड़े और ३ इंच मोटे लट्ठे ४ रु० प्रति घनफुट के हिसाब से मिलते हैं। द्वितीय श्रेणी की लकड़ी ३ रु० प्रति घनफुट मिलती है। अमृतसर भी वालनट की लकड़ी का मुख्य बाज़ार है जहाँ से यह प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो सकती है। "वालनट बर" की सुन्दर लकड़ी भी अमृतसर में मिलती है।

लैजरस्ट्रोमिया फ़्लासरीजनी और हाइपोल्यूका

(Lagerstroemia flos-reginae and L. hypoleuca)

व्यापारिक नाम:—जारुल। देसी नाम:—पिनमा (बर्मा व अण्ड-मन), अजहर (आसाम), निरमरूद (कुर्ग)

वज़न:—३७ से ४० पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशा:—इसकी कच्ची लकड़ी सफ़ेदी लिये हुए भूरे रंग की और अधिक चौड़ी होती है। पक्की कुछ पीलापन लिये हुए लाल रँग जो हवा लगने पर पक्के भूरे रंग में बदल जाती है। इसमें कोई विशेष गन्ध या स्वाद नहीं होता। रेशे अधिकतर सीधे और मध्यम श्रेणी के और घने होते हैं। यह एक प्रकार की सरल मज़बूत व पायदार लकड़ी है जो इस कारण बहुत पसन्द की जाती है कि कठोर होते हुए भी इस पर काम करना कठिन नहीं।

इसी विचार से इसकी माँग अधिक बढ़ती जा रही है। यह कई कामों के लिये एक उत्तम लकड़ी है।

सुखाई:—यदि उचित रूप से चट्टा लगायें और धीरे-धीरे सुखाने का प्रयत्न करें तो यह सरलता से सूखती है। यहाँ तक कि प्रयोग करते समय इसकी लकड़ी शत प्रतिशत ठीक सूखी है। इसके दो साल के पेटी दिए (गर्डलड)* पेड़ों की लकड़ी सूखने में बहुत अच्छी रही है परन्तु जारुल की बिलकुल गीली लकड़ी को भी यदि उन तमाम सावधानियों से सुखाया जाय जो मध्यम श्रेणी की कठोर लकड़ियों के लिये बताई गई हैं तो उसे बिना किसी दोष के सुखा सकते हैं। एक इंची मोटे तख़्तों को हवा में सुखाने के लिये कम से कम ६ महीने का समय चाहिये। जारुल किल्न में भी सरलता से सूखती है।

मज़बूती:—जारुल और सागोन वज़न में एक समान हैं परन्तु सख़्ती में सागोन से कुछ अधिक है और दूसरी शक्तियों में उससे कुछ कम है। फिर भी यह अच्छी और मज़बूत लकड़ी है जिसे सागोन की अपेक्षा काम में लाया जा सकता है।

पायदारी:—जारुल स्वाभाविक रूप से यथेष्ट आयु पानेवाली पायदार लकड़ी है। यह कुकुरमुत्ता (बदरंगी) और कीड़ों का बहुत अंश तक सामना करती है। परन्तु कुछ समय बाद दीमक अवश्य लग जाती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसकी ६ लकड़ियों में से ५ चार वर्ष बाद भी स्थिर रहीं, यद्यपि उन्हें दीमक से कुछ हानि अवश्य पहुँची थी।

यह लकड़ी सुगमता से रक्षात्मक मसाले को नहीं सोखती। और इसकी पकी लकड़ी तो अधिक से अधिक दबाव देने पर भी दो पौंड प्रति घनफुट से अधिक मसाला नहीं सोख सकती।

---

* नोट:—खड़े पेड़ को सुखाने के लिए उसके गिर्द तने की २-३ इंच चौड़ी छाल और कच्ची लकड़ी की पट्टी अलग करना।

औज़ारों से अनुकूलताः—जारुल चिराई-कटाई और काम करने के विचार से अधिक सरल है। बिना किसी विशेष परिश्रम के इस पर सफ़ाई व चिकनाई खूब आती है। परन्तु यह प्लाई-उड के काम के लिए अच्छी लकड़ी सिद्ध नहीं हुई। कारण यह है कि इसके रेशे काफ़ी महीन नहीं होते। फिर भी खरादी चीज़ों के लिये अच्छी लकड़ी है। और इस पर पालिश भी खूब चढ़ती है।

प्रयोगः—जारुल पहले ही से इमारती कामों के लिए एक प्रसिद्ध लकड़ी है। और रेलगाड़ियों के डिब्बों, फ़र्श के तख़्तों, मकानों और नावें इत्यादि बनाने में यह बहुत प्रयोग में लाई जाती है। बूटों के फर्मे और पहियाँ भी इसकी बनती हैं। मिलों और कारख़ानों की आवश्यकताओं की चीज़ों में भी इसका अधिक प्रयोग है। तात्पर्य यह है कि यह हिन्दुस्तान की उत्तम इमारती लकड़ियों में से है।

मिलने का स्थानः—यह बंगाल और आसाम में मिलती है। परन्तु इसकी माँग इसकी उपज से अधिक रहती है। बम्बई और मद्रास के पच्छिमी घाट के जंगलों से भी इसकी कुछ प्राप्य है। बर्मा में यह प्रचुर मात्रा में होती है। जानकारी के लिए ऊपर लिखे प्रान्तों में से किसी के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दरः—आसाम से ५ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे ६० रु० प्रति टन और चिरे हुए १२ इंच चौकोर १८ फ़ीट लम्बे १ रु० १२ आ० प्रति घनफुट के हिसाब से मिलते हैं। बंगाल में चटगाँव से आनेवाले जारुल के लट्ठे ४० रु० से ६० रु० प्रति टन और बम्बई में ५० रु० से ७० रु० प्रति टन मिलते हैं। (सन् १९३७)

लैजरस्ट्रोमिया हाइपोल्यूका

जिसे "अण्डमन पिनमा" भी कहते हैं। देखने में बिलकुल जारुल के समान है। परन्तु इससे कुछ भारी और अधिक मज़बूत है।

इसका वज़न ४२ से ५३ पौं० प्रति घनफुट तक रहता है। यह सूखने और काम करने में सरल है। अण्डमन से बड़े नाप के लट्ठों में ६० रु० प्रति टन के हिसाब से मिलती है। (सन् १९३७) कलकत्ते के बाज़ारों में यह बहुधा जारुल के साथ मिलीजुली बिकती है। और सरकारी तौर से इसका व्यापारिक नाम भी जारुल ही मान लिया गया है।

लैजरस्ट्रोमिया लैन्सिओलाटा (Lagerstroemia lanceolata)

व्यापारिक नामः--बेनटीक। देसी नाम--नाना (बम्बई), नन्दी (कुर्ग), बेनटीक (तामिल)

वज़नः—४५ से ४६ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने पर)

लकड़ी की दशाः--कच्ची लकड़ी कुछ सफ़ेद परन्तु भूरे रंग की और पक्की हलके लाल या भूरे रंग की होती है। जो हवा लगने पर और गहरे रंग की हो जाती है। इस लकड़ी में कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे अधिकतर सीधे और मोटे होते हैं। यदि उचित ढंग से सुखाई जाय तो कई कामों के लिये यह एक अच्छी लकड़ी है।

सुखाईः—यह कुछ कठिनता से सूखनेवाली लकड़ी है। यदि अच्छी प्रकार देखभाल न की जाय तो ऐंठती और सिरों पर से फट जाती है। इसके चट्टे को ढककर धीरे-धीरे सुखाना चाहिये। इसी प्रकार किल्न में भी यदि इसे धीरे-धीरे सुखाया जाय तो कोई दोष उत्पन्न न होगा। भारत के पश्चिमी घाट में नाव बनाने की यह बहुत प्रसिद्ध लकड़ी है। इससे ज्ञात होता है कि यह लकड़ी सम जलवायु में भी सरलतापूर्वक सुखाई जा सकती है। और कई महत्त्वपूर्ण कामों में भी इसका प्रयोग सफल रहा।

मज़बूतीः—बेनटीक अपनी विशेषताओं के कारण बहुत कुछ सागौन से मिलती-जुलती है। वज़न में सागौन के बराबर है परन्तु

कठोरता में उससे २० प्रतिशत अधिक है। यह एक अच्छी मज़बूत लकड़ी है। इमारती आवश्यकताओं के लिये बहुत उपयुक्त है, विशेष रूप से जब लचीली लकड़ी की आवश्यकता हो।

पायदारी:—यह एक मध्यम श्रेणी की पायदार लकड़ी है, जो अधिक समय तक लकड़ी को हानि पहुँचाने और बदरंगी लानेवाले (कुकुरमुत्ता) का सामना कर सकती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके ६ टुकड़ों में से ५ चार वर्ष बाद भी ठीक पाये गये, यद्यपि दीमक अवश्य कुछ असर कर गई थी। इस दोष को रक्षात्मक मसाले द्वारा रोका जा सकता है, परन्तु कठिनाई है कि यह लकड़ी मसाले को नहीं सोखती। देहरादून में इस सम्बन्ध में किये गये प्रयोगों से सिद्ध हुआ कि बेनटीक की पक्की लकड़ी २ से ३ पौं० प्रति घनफुट से अधिक मसाला नहीं सोखती।

औज़ारों से अनुकूलता:—यह लकड़ी मशीन पर या हाथ से हर प्रकार काम करने में सरल है। इस पर सफ़ाई खूब आती है और पालिश भी अच्छी चढ़ती है। बेनटीक के रेशे सीधे और महीन होते हैं। देहरादून में इसको प्लाई-उड बनाने के लिये प्रयोग में लाया गया। परन्तु इसके लिये यह उपयुक्त सिद्ध नहीं हुई।

प्रयोग:—भारत के पच्छिमी तट पर बहुधा बन्दरगाहों में बेन-टीक नाव बनाने की अच्छी लकड़ी समझी जाती है। इस लकड़ी को अरब वाले भी ख़रीद कर अपने यहाँ छोटे जहाज़ बनाने और ईराक़ में नाव बनाने के लिए ले जाते हैं। यह अधिकतर मकानों, गाड़ियों, फ़र्नीचर और बढ़ई के काम की आवश्यकताओं को पूरा करती है। रेलवे ने इसे रेलगाड़ियों के फ़र्श के तख़्तों और कई दूसरे भागों के लिये स्वीकृत कर लिया है। मद्रास में इसको लारियों के ढाँचे (बाडी) बनाने में बहुत काम में लाया जाता है। मिट्टी के तेल के कुओं में जो लकड़ियाँ लगाई जाती हैं उनके लिये भी बेनटीक उचित लकड़ी सिद्ध हुई है।

मिलने का स्थानः—मद्रास, बम्बई और कुर्ग से इसके १२ से २० फ़ीट तक लम्बे और ७ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। जानकारी के लिये चीफ़ कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट, बम्बई, फ़ारेस्ट यूटिलाईज़ेशन अफ़सर मद्रास या चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर, कुर्ग को लिखिये।

दरः—मद्रास में २० से ५६ रु० प्रति टन (लट्ठों की दशा के अनुसार) इसी प्रकार बम्बई में लट्ठों के दाम ३२ रु० से ८० रु० प्रति टन, कुर्ग में ४ आ० से ६ आ० प्रति घनफ़ुट तक "फ़ारेस्ट डिपो" पर (सन् १६३७)

लैजरस्ट्रीमिया पार्विफ़्लोरा (Lagerstrœmia parviflora)

व्यापारिक नामः—लेन्डी। देसी नाम—नन्दी, सिदक डौरी, लेन्डिया (सी. पी.), चिनांगी (कुर्ग), सिधा (बिहार)

वज़नः—४६ से ४८ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी सफ़ेदी लिये हुए भूरे रंग की और पक्की हल्के भूरे रंग की होती है। इसमें कोई विशेष गन्ध या स्वाद नहीं होता। रेशे बहुत मोटे और सीधे, परन्तु कभी-कभी कुछ घूमे हुए होतेहैं। यह एक मध्यम श्रेणी की भारी और कठोर लकड़ी है। यह कठिनता से सूखती है, परन्तु सूखने के बाद खराब वातावरण में यथेष्ट आयु पाती है। यदि यह लकड़ी कठिनाई से सूखनेवाली न होती तो अत्यधिक काम में लाई जाती।

सुखाईः—लेन्डी को हवा में विना किसी हानि व दोष के सुखाना बहुत कठिन है। यह सूखने में फटती और ऐंठती है। अच्छा तो यह है कि इसे गीली दशा में ठंडे और नम मौसम में चिरवाया जाय। उसके बाद चट्टे को ढककर गर्म हवा और धूप से बचाने की आवश्यकता है। लेन्डी को धीरे-धीरे ही सुखाना चाहिये। यह किलन में बहुत सरलता से सूख सकती है। इसके २ "च

मोटे तख़्तों को हवा में सुखाने में लगभग दो वर्ष का समय लगता है। लकड़ी के सिरों पर से फटने को रोकने के लिये मसाला लगा देना चाहिये।

मज़बूतीः—लेन्डी सागोन से कुछ भारी और कठोर लकड़ी है। यह बहुधा शक्तियों में सागोन के बराबर है, परन्तु चोट सहने और बोझ से टूटने में उससे अधिक मज़बूत है। यदि भली प्रकार सुखा ली जाय तो इसे बहुत से कामा में सागोन के स्थान पर काम में लाया जा सकता है।

पायदारीः—यह अधिक पायदार लकड़ी है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यह अति विपरीत वातावरण में भी ५ वर्ष तक स्थिर रही। यह रक्षात्मक मसाले को भली प्रकार नहीं सोखती, कहीं कम और कहीं ज़्यादा। देहरादून में इसके स्लीपरों को मसाला देने से मालूम हुआ कि कहीं-कहीं केवल दो पौंड प्रति घनफुट और कहीं १० पौं० प्रति घनफुट के लगभग मसाला लगा।

औज़ारों से अनुकूलताः—लेन्डी चिराई-कटाई और काम करने के विचार से अधिक सरल है, परन्तु गीली लकड़ी अधिक सरलता से चिरती है। जिन टुकड़ों में रेशे घूमे हुए हों उनके चिरनेमें तिरछा हो जाने का भय रहता है। इस पर सफ़ाई भी अच्छी आती है और छेदों को भर लेने के बाद पालिश भी अच्छी होती है। अभी तक प्लाई उड बनानेके लिये इसका प्रयोग नहीं किया गया है। विचार किया जाता है कि इस काम के लिये यह अच्छी लकड़ी न होगी।

प्रयोगः—यह यदि हवा में सरलता से सूखनेवाली लकड़ी होती तो बहुत काम में लाई जा सकती थी। फिर भी लेन्डी अपनी उपज के क्षेत्रों में यथेष्ट प्रसिद्ध है। इमारती कामों में यह खम्भों, शहतीरों और कड़ियों के लिये प्रयोग में लाई जाती है। पुलों, बैलगाड़ियों और पीपे बनाने में भी अधिकतर काम आती है। ईस्ट इन्डियन रेलवे ने इसे औज़ारों के दस्तों और लकड़ी को मोड़कर बनाई जानेवाली

चीज़ों के लिये स्वीकृत किया है। किल्न में उचित रूप से सुखाने के बाद लेन्डी साधारण आवश्यकताओं के लिये एक अच्छी लकड़ी सिद्ध हो सकती है। जलाने के लिये भी यह अच्छी है।

मिलने का स्थानः—यह हिन्दुस्तान के कुल नमीवाले भागों में पाई जाती है। यह बंगालमें बहुत पैदा होती है। आसाम, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, बम्बई और कुर्ग से भी थोड़ी बहुत प्राप्य हो सकती है। जानकारी के लिये समीप के किसी कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट या चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर कुर्ग को लिखना चाहिये।

दरः—लेन्डी साधारणतया एक सस्ती लकड़ी है। विभिन्न स्थानों में इसके दाम १६ से ५० रु० प्रति टन तक हैं जिसका मध्य मूल्य लगभग २५ रु० प्रति टन है (सन् १६३७)

लैनियाग्रैन्डिस (Lannea grandis)

व्यापारिक नामः—झींगन। देसी नाम—मोहिन (सी. पी. व बरार), गोडा (कुर्ग), डोका (बिहार)

वज़नः—लगभग ३५ से ३६ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

परन्तु इस लकड़ी का वज़न बहुधा इससे कम या अधिक भी रहता है।

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी कुछ सफ़ेद रंग की और चौड़ी होती है। पक्की कालापन लिये हुए लाल या पक्के भूरे रंग की होती है। लकड़ी में कोई गंध या स्वाद नहीं होता। इसके रेशे बहुधा सीधे और घने होते हैं और कभी-कभी अधिक घूमे हुए भी रहते हैं। झींगन एक अच्छे प्रकार की लकड़ी है। यदि सरलता से सूखनेवाली होती तो इसकी माँग और भी अधिक होती।

सुखाईः—झींगन धीरे-धीरे और कठिनता से सूखनेवाली लकड़ी है। इसकी कच्ची लकड़ी पक्की से अधिक मोटी, कीड़ा

लगनेवाली और जल्द नष्ट हो जानेवाली होती है। पक्की लकड़ी बहुत मज़बूत और इतनी धीरे-धीरे सूखनेवाली है कि अभी तक देहरादून में कोई लकड़ी इसके समान देर में सूखनेवाली प्रयोग में नहीं आई। लगभग १½ इंच मोटे तख़्तों को ११ प्रतिशत तक नम तापमान पर सुखाने में ३ वर्ष लगे और इस अवधि में कुल कच्ची लकड़ी बदरंगी (कुकुरमुत्ते) और कीड़े से नष्ट हो चुकी थी और पक्की लकड़ी तब तक समान रूप से सूखी भी नहीं थी।

सबसे अच्छा उपाय यह है कि भींगन की कच्ची लकड़ी को पक्की से अलग करके रक्षात्मक मसाले द्वारा शोधित कर लें और कच्ची को खुले हवादार चट्टे के रूप में जल्दी सुखाने का प्रयत्न किया जाय। परन्तु पक्की लकड़ी को ढके चट्टे के रूप में कम हवा में धीरे-धीरे सुखाने का उपाय किया जाय तो अच्छा है। क्योंकि भींगन में गोंद बहुत होता है, इसलिये यह लकड़ी किल्न में अधिक सरलता से नहीं सुखाई जा सकती। गोंद किल्न की बन्द गरमी में लकड़ी की नमी को नहीं निकलने देता, इसलिये उसको हवा में सुखाना अच्छा है।

मज़बूती:—भींगन पर जो शक्ति सम्बन्धी प्रयोग देहरादून में किये गये उनमें यह लकड़ी कुछ अधिक मज़बूत सिद्ध नहीं हुई। यह सागोन की अपेक्षा हलकी और मुड़ने और खम्भे की शक्ति में उसकी आधी है। चोट सहन करने और अपने को फटने से बचाने में यह उससे अच्छी है। कठोरता में यह सागोन के ७० प्रतिशत है। ऐसा मालूम होता है कि भींगन की जो लकड़ी देहरादून में शक्ति सम्बन्धी प्रयोगों के लिये आई वह घटिया थी यानी यह लकड़ी अपने वज़न के विचार से बहुत हलकी, भारी और घटिया, बढ़िया हो सकती है। बहुधा भींगन के टुकड़े सागोन के समान भारी और मज़बूत देखने में आये हैं।

पायदारी:—भींगन की कच्ची लकड़ी बदरंगी (कुकुरमुत्ता)

और कीड़े से जल्दी खराब हो जाती है विशेषकर गीली दशा में। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यह एक वर्ष भी न टिकने पाई। परन्तु पक्की लकड़ी अवश्य अधिक समय तक चलनेवाली होती है, यद्यपि अभी इसके विषय में भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। कच्ची लकड़ी रक्षात्मक मसाले को अच्छी तरह और पक्की बहुत कम सोखती है।

औज़ारों से अनुकूलताः--काम करने के विचार से भींगन अच्छी लकड़ी है। खराद पर या हाथ से दोनों तरह इस पर अच्छी सफ़ाई आती है। पालिश भी खूब होती है जिससे इसके रेशे और लकड़ी का रंग अति सुन्दर और चमकदार दिखाई देता है। कभी-कभी रेशों के घुमाव के कारण रन्दा करने में भींगन फट जाती है और गोंद के कारण इस पर चिराई भी अधिक परिश्रम लेती है। इसके अतिरिक्त और कोई कठिनता नहीं होती।

प्रयोगः--भींगन काफ़ी प्रसिद्ध और घरेलू आवश्यकताओं की एक अच्छी लकड़ी है। यह छोटे-छोटे कामों में हिंदुस्तान के बहुत से भागों में प्रयोग में लाई जाती है परन्तु यह ऐसी लकड़ी नहीं जो किसी एक ही स्थान से यथेष्ट मात्रा में मिल सके। इमारती कामों, फ़र्नीचर, कृषि उपकरण, पानी के नलके तसले, डोंगे और नाव बनाने के काम में आती है। खरादी चीज़ों और बेल-बूटों की खुदाई के लिये भी उपयुक्त है। इसकी कच्ची लकड़ी दियासलाई बनाने के लिये ठीक है। परन्तु कुछ सख़्त अवश्य है। चमड़ा काटने के लिये नीचे रखने की लकड़ी, जूतों के कलबूत और ब्रुश के दस्ते बनाने के लिये भी यह अच्छी लकड़ी है। कच्ची लकड़ी पेन्सिल बनाने के लिये भी ठीक है, यदि इसे रासायनिक तौर से कुछ मुलायम बना लिया जाय। जूट (सन) के कारखानों में "रोलर्स" यानी कोल्हू के गट्टू भींगन की लकड़ी के बहुत अच्छे बनते हैं। रक्षात्मक मसाले देकर इसे रेल के स्लीपरों के लिये भी उपयोगी बनाया जा सकता

है। तात्पर्य यह कि झींगन भली प्रकार सुखाये जाने पर बहुत से लाभदायक कामों में लाई जा सकती है।

मिलने का स्थानः—यह हिन्दुस्तान के मैदानी जंगलों की साधारण लकड़ी है जो लगभग देश के प्रत्येक भाग में पाई जाती है परन्तु इसके स्थायी और लगातार जंगल कहीं नहीं हैं। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बंगाल, बिहार, उड़ीसा और मद्रास के प्रान्तों में यह एक सीमा तक काफ़ी होती है। यह हर जगह लकड़ी के व्यापारियों के यहाँ मिल सकती है।

दरः—क्योंकि अभी तक झींगन की माँग अधिक नहीं है, इसलिये यह सस्ते दामों पर मिल जाती है। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, और मद्रास से २२ रु० से ३० रु० प्रतिटन तक मिल सकती है। (सन् १९३७)

मैन्जीफीरा इन्डिका (Mangifera indica)

व्यापारिक नामः—मैन्गो। देसी नाम—आम, अम्बा, मावो (कुर्ग)

वज़नः—३८ से ४३ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह भूरे या बादामी रंग की एक प्रसिद्ध लकड़ी है, जिसमें कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे मोटे तथा कभी-कभी घूमे और गुथे हुए होते हैं। यह एक मध्यम श्रेणी की वज़नी और अधिक मज़बूत लकड़ी है जो बहुत से कामों में प्रयोग की जाती है। यह लकड़ी अपना रूप बहुत अंश तक एक सा ही बनाये रखती है।

सुखाईः—आम की लकड़ी सूखने में सरल है और जल्दी सुखाई जा सकती है। इसके अधिक चौड़े तख़्ते सूखने की दशा में बीच से कुछ फट जाते हैं। इसके अतिरिक्त और कोई दोष नहीं आने पाता। गीली दशा में पड़ी रहने से आम की लकड़ी बदरंगी और फफूँदी ले आती है। यदि जल्दी सुखाई जाय तो ये दोष पैदा नहीं

होते। इसलिये इस लकड़ी को गीली ही चिरवा कर हवादार जगह में खुला चट्टा लगा देना चाहिये। नम जलवायु में, जहाँ बदरंगी और फफूँदी का भय हो, इस लकड़ी का चट्टा धूप में खड़ा करके लगा देना चाहिये। यह किलन में भली प्रकार सुखाई जा सकती है।

मज़बूतीः—आम को लोग बहुधा कम पायदार समझते हैं। परन्तु यह किसी अंश तक एक मज़बूत लकड़ी है। वज़न में सागोन से कुछ हल्की और चोट सहने, अपने को फटने से बचाने में वह सागोन से अच्छी है। परन्तु अन्य शक्तियों में यह सागोन की ८० प्रतिशत है। आम की लकड़ी मुख्य विशेषता यह है कि यह अपने रूप को नहीं बिगड़ने देती और इस बात में लगभग सागोन के समान है।

पायदारीः—यह बाहरी कामों के लिए इतनी पायदार नहीं होती। जल्दी ही बदरंग हो जाती है और गलने लगती है। दीमक भी इसको जल्दी लग जाती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके टुकड़े २½ वर्ष के अन्दर नष्ट हो गये। यह रक्षात्मक मसाले को भली प्रकार सोख लेती है अर्थात् इसकी लकड़ी १७ पौं० प्रति घनफुट के लगभग मसाला पी लेती है। फिर यह बाहर के कामों के लिये भी सुरक्षित हो जाती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—आम की लकड़ी काम करने और औज़ारों के लिये सरल व कम परिश्रमी होती है। चिराई-कटाई व इस पर सफ़ाई लाने में कोई कठिनाई नहीं होती। छेदों को भर देने के बाद इस पर रंग और पालिश भी खूब चढ़ता है। इसकी प्लाई-उड भी अच्छी बनती है। मद्रास के दक्षिणी-पच्छिमी किनारे पर एक "फ़र्म" इससे बहुत सुन्दर प्लाई-उड बना रही है।

प्रयोगः—दक्षिणी भारत की आम की लकड़ी उत्तरी भारत की आम की लकड़ी से अच्छी होती है। आम की लकड़ी हिन्दुस्तान के प्रत्येक भाग में प्रचुर मात्रा में काम में लाई जाती है। यह सस्ते

प्रकार के फ़र्नीचर, तख़्ते, चाय के पैकिंग बक्सों, सन्दूकों और पेटियों के लिये बहुत उपयुक्त है। नाव, बैलगाड़ी के कुछ भाग कृषि उपकरण, ताँगों की छतों के ढाँचे (फ्रेम) और थोड़े दिन से प्लाईउड इत्यादि अर्थात् इसी प्रकार के विभिन्न कामों में यह बहुत प्रयोग की जाती है। यह खुश्क चीज़ें रखने के छोटे डिब्बे और जूतों की एड़ियाँ बनाने के लिये भी एक अच्छी लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—आम के पेड़ हिन्दुस्तान के जंगलों और मैदानों में अधिकतर पाये जाते हैं। इस विचार से इसकी लकड़ी प्रचुर मात्रा में मिलनी चाहिये, परन्तु ऐसा नहीं है। इसका यह कारण है कि आम को लोग लकड़ी के लिये नहीं, बल्कि फल के लिये लगाते हैं। फिर भी हर स्थान से थोड़ी बहुत लकड़ी मिल सकती है। जानकारी के लिये स्थानीय व्यापारियों या समीप के किसी फ़ारेस्ट अफ़सर को लिखना चाहिये।

दरः—आम की लकड़ी अपनी दशा और नाप के अनुसार विभिन्न दामों पर बिकती है। आम के लट्ठे ४० से ५० फ़ीट तक लम्बे और ६ फ़ीट तक गोलाई के हो सकते हैं। मद्रास में आम की अच्छी लकड़ी ४४ रु० प्रति टन और बम्बई में ८० रु० प्रति टन तक बिकती है। बंगाल, बिहार, उड़ीसा, यू० पी०(उत्तर प्रदेश), सी० पी० (मध्य प्रदेश) और कुर्ग में १५ रु० से ५० रु० प्रति टन तक मिल सकती है। (सन् १६३७)

मेसुआ फेरिया (Mesua ferrea)

व्यापारिक नामः—मेसुआ । देसी नामः—नाहोर, नागेश्वरी (नैपाल व बंगाल), नांगल (तामिल) इत्यादि।

वज़नः—६० से ६७ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी हल्के बादामी रंग की और अधिक चौड़ी होती है। पक्की गहरे लाल या गहरे ब्राउन रंग की होती है। इसमें कोई गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे मध्यम श्रेणी के

घने, सीधे, कभी-कभी घूमे और गुथे हुए होते हैं। यह बहुत भारी कठोर और मज़बूत लकड़ी है जिसमें कोई सुन्दरता अर्थात् गहरी काली धारियाँ इत्यादि नहीं होतीं।

सुखाई:—मेसुआ धीरे-धीरे और कठिनता से सूखनेवाली लकड़ी है। यदि यथेष्ट सावधानी और देखभाल न की जाय तो यह ऐंठती और फटती है। इसे ढककर और गर्म व शुष्क हवाओं से बचाकर सुखाना चाहिये और सूखने के लिये समय भी अधिक देना चाहिये। इस प्रकार मेसुआ बिना ख़राबी के सुखाई जा सकती है।

मज़बूती:—यह हिन्दुस्तान की सबसे अधिक कठोर और मज़बूत लकड़ियों में से है। यह सागोन से दुगुनी कठोर और दूसरी शक्तियों में उससे ड्योढ़ी है। ब्योरे के लिये पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़्शे को देखिये।

पायदारी:—इसके रेल के स्लीपर बिना किसी रक्षात्मक मसाले के १२-१४ वर्ष तक चले हैं और हर प्रकार की लापरवाही से प्रयोग किये जाने पर भी ये वर्षों दीमक और बदरंगी (कुकुरमुत्ता) से सुरक्षित रहे हैं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके १२ टुकड़ों में से १० अभी ६ साल बाद भी ठीक पाये गये।

औज़ारों से अनुकूलता:—अधिक कठोर होने के कारण मेसुआ औज़ारों के लिये एक कठिन लकड़ी है। इसलिये इसको गीली दशा में चिरवा लेना चाहिये। इस पर सफ़ाई लाने में भी बहुत परिश्रम करना पड़ता है। इसलिये व्यापारिक विचार से यह बढ़ई-खाने (वर्कशाप) की साधारण आवश्यकताओं की लकड़ी नहीं है।

प्रयोग:—मेसुआ अधिकतर इमारती कामों में, खम्भों और शहतीरों के रूप में प्रयोग में लाई जाती है। यह पुलों के बनाने के लिये भी अच्छी है। मेसुआ रेल के स्लीपर, बैलगाड़ियों, खानों के अन्दर के खम्भों, नावों और बन्दरगाहों

के काम की एक अच्छी लकड़ी है। तात्पर्य यह है कि जहाँ कठोर और मज़बूत लकड़ी की आवश्यकता हो वहाँ इसे काम में लाना चाहिये। गोदामों और कारख़ानों के फ़र्श लगाने में भी इसके टुकड़े बहुत अच्छे रहते हैं।

मिलने का स्थानः—आसाम में यह लकड़ी बहुत पैदा होती है। जहाँ से इसके ३० फ़ीट तक लम्बे और ४ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे १५०० टन के लगभग प्रतिवर्ष मिल सकते हैं। यह मद्रास, कुर्ग और कोचीन से भी काफ़ी मिल सकती है। बंगाल के चटगाँव डिवीज़न में भी कुछ होती है। जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाईज़ेशन अफ़सर, आसाम, मद्रास या बंगाल को लिखना चाहिये। चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर, कुर्ग से भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

दरः—आसाम में इसके लट्ठों के दाम ३८ रु० प्रति टन और चिरान की हुई लकड़ी १ रु० ८ आ० प्रति घनफ़ुट तक मिलती है। मद्रास में इसके दाम ७५ रु० से ९० रु० प्रति टन और कुर्ग में ७ रु० प्रति कंडी (१२½ घनफ़ुट) हैं। (सन् १९३७)

माइकीलिया की लकड़ियाँ (Michelia species)

(१) माइकीलिया चम्पाका

(२) माइकीलिया एक्सेल्सा

(३) माइकीलिया मौन्टाना

व्यापारिक नामः—चम्प । देसी नामः—चम्पक, चम्पा, टीटा-सोपा।

वज़नः—२१ से ३४ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी कम चौड़ी सफ़ेद या हल्के भूरे रंग की होती है। पक्की लकड़ी पीलापन लिये हुए भूरे रंग की होती है। इसमें कोई गंध या स्वाद नहीं होता। ये द्वितीय श्रेणी के घने और सीधे रेशोंवाली लकड़ियाँ हैं। ये चमकदार और चिकनी परन्तु वज़न में हल्की होती हैं। यदि ये यथेष्ट मात्रा में

प्राप्य हो सकतीं तो कलकत्ते के बाज़ार में इन लकड़ियों की अच्छी क़ीमत मिल सकती।

सुखाई:—ये सरलता से सूखनेवाली लकड़ियाँ हैं। इनको गीली दशा में चिरवा कर कहीं छाया में या खूब हवादार गोदाम में चट्टा लगवा देना चाहिये। ये लकड़ियाँ जल्दी सूख जाती हैं। देहरादून में इनके पौन इंची तख़्तों को गर्मी के मौसम में १३० प्रतिशत नमी से ८ प्रतिशत तक लाने में १ महीने से भी कम समय लगा और लकड़ी सूखने पर साफ़ और दोषरहित निकली। इसी प्रकार ये लकड़ियाँ किल्न में भी सरलता से सुखाई जा सकती हैं। सिवाय इसके कि किल्न में सूखी हुई लकड़ी का रंग, उसकी चमक और भड़क कम हो जाती है।

मज़बूती:—माइकीलिया की सब लकड़ियाँ वज़न, कठोरता और पायदारी में समान हैं। ये सागौन से २५ प्रतिशत हल्की, शक्ति में उससे २०-२५ प्रतिशत कमज़ोर और कठोरता में ४० प्रतिशत कम हैं।

पायदारी:—ये लकड़ियाँ अधिक दिन चलनेवाली नहीं हैं। यद्यपि यह बात प्रमाणित है कि पानी के भीतर खम्भों के रूप में प्रयोग किये जाने पर भी ये बहुत समय तक चलीं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में माइकीलिया चम्पाका और माइकीलिया एक्सेल्सा के सब टुकड़े तीन वर्ष के अन्दर बदरंगी और फफूँदी से नष्ट हो गये। परन्तु माइकीलिया मौन्टाना के ६ टुकड़ों में से ५ टुकड़े ४½ वर्ष बाद भी ठीक दशा में पाये गये। माइकीलिया की लकड़ियाँ रक्षात्मक मसालों को भली प्रकार सोख लेती हैं जिससे उनकी मज़बूती बढ़ जाती है।

औज़ारों से अनुकूलता:—ये सीधे रेशोंवाली लकड़ियाँ हैं जिनकी चिराई, कटाई और इन पर काम करना बहुत सरल है। इन पर सफ़ाई और चिकनाहट भी अच्छी आती है। रंग और

पालिश भी अच्छा होता है। खरादी काम के लिये भी ये अच्छी सिद्ध हुई हैं और इनकी प्लाईउड भी बनाई जा सकती है। परन्तु इनका प्लाईउड सुन्दर नहीं बनती क्योंकि रेशे स्पष्ट नहीं दिखाई देते।

प्रयोगः—ये हल्के फ़र्नीचर और घरेलू आवश्यकताओं के लिये उपयोगी लकड़ियाँ हैं। आसाम में ये अनेक प्रकार के कामों के लिये उत्तम लकड़ी समझी जाती हैं। ये तख़्तों और लकड़ी को मोड़कर बनाई जानेवाली चीज़ों, सन्दूक़ और नाव बनाने में काम आती हैं। परन्तु इमारती कामों में कुछ कमज़ोर रहती हैं। फिर भी रक्षात्मक मसालों के साथ चम्प की लकड़ियाँ छत या फ़र्श के लिये तख़्तों के रूप में यथेष्ट उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

मिलने का स्थानः—चम्प की लकड़ियाँ मुख्यतः बंगाल व आसाम से प्राप्त होती हैं। वास्तव में यही दो प्रान्त ऐसे हैं जहाँ से ये लकड़ियाँ बाहर भेजी जाती हैं। बर्मा में इनकी उपज अधिक नहीं होती। यहाँ की लकड़ियाँ केवल स्थानीय आवश्यकताओं में ही व्यय हो जाती हैं। यदि ये लकड़ियाँ प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो सकती होतीं तो कलकत्ते के बाज़ार में ही सबकी सब खप सकती थीं। विशेष जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन अफ़सर, बंगाल व आसाम को लिखना चाहिये।

दरः—आसाम से १८ फ़ीट लम्बाई के और ६ फ़ीट तक गोल लट्ठे ५० रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी १ रु० १० आ० प्रति घनफुट तक मिल सकती है। बंगाल में कुर्स्यौंग, बक्सा और दार्जिलिंग डिवीज़न के लट्ठे ३५ से ४५ रु० प्रति टन तक मिल सकते हैं। (सन् १९३७)

मिट्रागाइना पार्विफ़ोलिया (Mitragyna parvifolia)

व्यापारिक नामः—कैम। देसी नाम—अम्साविटा, काली कदम्बा (बिहार), हेदू (हैदराबाद)

वज़नः—३९ से ४० पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—ताज़ी कटी हुई लकड़ी पीले रंग की होती है जो हवा लगने पर भूरी (बादामी) हो जाती है। लकड़ी में कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे साधारणतया सीधे और बहुधा घूमे हुए भी होते हैं परन्तु बनावट में बहुत चिकने होते हैं। कैम खरादी काम की एक अच्छी लकड़ी है, यद्यपि हल्दू के बराबर नहीं।

सुखाईः—कैम सूखने की दशा में गिरह के पास से फटती और तड़कती है। यदि लकड़ी को सावधानी से धीरे-धीरे सुखाया जाय तो इस दोष से भी बची रहती है। कैम को गीला ही चिरवा कर किसी शैड के अन्दर छाया में चट्टा लगाना चाहिये जिससे लकड़ी धीरे-धीरे सूखती रहे। इस लकड़ी को हवा में सुखाने का यह अच्छा उपाय है। किल्न में भी यह सरलता से सूख सकती है परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि लकड़ी को धीरे-धीरे सुखाया जाय जिससे कि फटने से सुरक्षित रहे।

मज़बूतीः—यह लकड़ी सागौन से किसी अंश तक हल्की परन्तु कठोरता में उसके समान है। चोट सहने और अपने को फटने से बचाने में यह सागौन के समान है। परन्तु शक्ति में उससे २५ प्रतिशत कम है।

पायदारीः—कैम अधिक पायदार लकड़ी तो नहीं परन्तु बहुत जल्दी खराब होनेवाली भी नहीं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यह चार वर्ष तक ठीक रही। रक्षात्मक मसाले को यह भली प्रकार नहीं सोखती, कभी कम और कभी ज्यादा।

औज़ारों से अनुकूलताः—यदि रेशे सीधे हों तो कटाई और चिराई अधिक सरल हो जाती है और सफ़ाई भी अच्छी आती है परन्तु घूमे हुए रेशों की दशा में कुछ मेहनत अवश्य चाहती है। इस पर पालिश भी अच्छा होता है। प्लाईउड के लिये अभी तक इस पर प्रयोग नहीं किया गया। परन्तु विचार किया जाता है

कि इस काम के लिये यह ठीक न होगी वैसे इसकी बारीक चिरी हुई तख्तियाँ अच्छी हो सकती हैं।

प्रयोगः—कैम अधिकतर खरादी चीज़ों, खिलौनों इत्यादि में प्रयोग की जाती है। इसके कंघे, प्याले, प्यालियाँ, हाथ की छड़ियाँ, विभिन्न प्रकार के दस्ते और चौखटे अच्छे बनते हैं। इस लकड़ी पर खुदाई का काम भी अच्छा होता है। इसके अतिरिक्त कैम के तख्ते और फ़र्नीचर भी बनता है। कपड़े की मिलों के लिये बाबिन, क़लम और रेखागणित (ज्योमेट्री से संबंधित) यंत्र भी बनाये जाते हैं।

मिलने का स्थानः—कैम के पेड़ एक स्थान पर साधारणतया थोड़ी मात्रा में ही पाये जाते हैं। इसके लगातार जंगल कहीं नहीं हैं। इसलिये इस लकड़ी की प्राप्ति किसी एक स्थान से प्रचुर मात्रा में नहीं होती। यू० पी० (उत्तर प्रदेश) और बिहार से कुछ, और बम्बई, मद्रास और उड़ीसा से उससे कम मिल सकती है।

दरः—यू० पी० (उत्तर प्रदेश) से कैम के अच्छे लट्ठे २५ रु० प्रति टन और बिहार से २२ से ३० रु० प्रति टन तक मिल सकते हैं। (सन् १९३७)

मोरस की लकड़ियाँ (Morus species)

(१) मोरस एल्बा (Morus alba (२) मोरस लीवीगेटा Morus laevigata)

व्यापारिक नामः—मलबरी। देसी नामः—शहतूत-तूतरी।

वज़नः—३८ से ४२ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—मोरस एल्बा के पेड़ पंजाब में बहुतायत से उगाए जाते हैं और मोरस लीवीगेटा बंगाल व आसाम में होता है। शहतूत की ये दोनों लकड़ियाँ देखने में समान हैं। कच्ची लकड़ी सफ़ेद रंग की होती है, पक्की लकड़ी से, जो खुले हुए पीले

रंग की होती है, अलग मालूम होती है। सूखने पर पकी लकड़ी किसी अंश तक भूरे रंग की हो जाती है। इसमें कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। यह सीधे और द्वितीय श्रेणी के घने रेशों-वाली लकड़ी है।

सुखाई:—मलबरी का सूखना तो कठिन नहीं परन्तु यह सूखने में ऐंठती है। कहा जाता है कि यदि इसके लट्ठों को "चौफाड़" करके सुखाया जाय तो यह दोष बहुत अंश तक दूर हो जाता है। इसके अतिरिक्त लट्ठों या चौफाड़ टुकड़ों के सिरों पर मसाला लगाकर अंतिम चिराई तक कुछ मास तक का समय अवश्य देना चाहिये। यह उपाय पंजाब के भागों में, जहाँ झुलसानेवाली हवाएँ चलती हैं, अति आवश्यक है जिससे लकड़ी जल्दी न सूखने पाये। मोरस लीवीगेटा, मोरस एल्बा की तुलना में कुछ सरलता से सूखनेवाली लकड़ी है। किलन में दोनों लकड़ियाँ अच्छी तरह सूखती हैं और कोई दोष नहीं आने पाता। मलबरी अधिकतर पंजाब में "स्पोर्ट्स गुड्स मैनुफ़क्चरर्स" यानी खेलकूद की चीज़ें बनानेवाले कारखानों में काम आनेवाली लकड़ी है। वे इसको गीली ही दशा में काम के योग्य बना लेते हैं। इसकी गीली लकड़ी चिराई-कटाई के बाद भाप द्वारा सरलता से खेल के बल्लों, स्टिकों के लिये मोड़ ली जाती है और फिर शिकञ्जे में कसकर सुखाई जाती है। इस प्रकार इस लकड़ी को सफलता से इच्छानुसार रूप में परिवर्तित करते हैं। मलबरी वज़न में सागौन के लगभग है और चोट सहने, फटने और कठोरता में उससे अधिक मज़बूत है परन्तु दूसरी विशेषताओं में यह सागौन से कम है। ब्यौरे के लिये पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़्शे को देखिये।

पायदारी:—मलबरी मध्यम श्रेणी की पायदार लकड़ी है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके बढ़िया से बढ़िया टुकड़े भी चार वर्ष में दीमक द्वारा नष्ट हो गये। परन्तु बदरंगी और फफूँदी

का कोई प्रभाव नहीं पाया गया। मलबरी पर रक्षात्मक मसालों का प्रयोग अभी तक नहीं किया जा सका, परन्तु लकड़ी की बनावट से ज्ञात होता है कि यह रक्षात्मक मसाला सोख सकती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—शहतूत की लकड़ी चिराई-कटाई और काम करने व सफ़ाई लाने के विचार से सरल है। खरादी चीज़ों और लकड़ी पर खुदाई के काम के लिये भी उपयुक्त है। भाप द्वारा मोड़े जाने के लिये शहतूत एक उत्तम लकड़ी है। यहाँ तक कि ६०° का कोण बनाने में यह ठीक मुड़ जाती है और बिलकुल नहीं चिटकती। इसी कारण मलबरी खेल के बल्लों और स्टिकों इत्यादि के लिये प्रसिद्ध है। प्लाई-उड बनाने के लिये अभी तक इस पर प्रयोग नहीं किया गया, परन्तु इसके चौफाड़ टुकड़े रंग और सुन्दरता के विचार से अच्छे पाये गये हैं।

प्रयोगः—उत्तरी भारत में शहतूत अधिकतर खेलकूद की चीज़ें बनाने के प्रयोग में लाई जाती है जिसके लिये यथार्थ में यह एक उत्तम लकड़ी है। यूरप और अमेरिका में भी अब इस काम के लिये मलबरी काफ़ी लोकप्रिय हो चुकी है और बहुधा लोग हाकी और स्टिकों के लिये "ऐश" की लकड़ी से उत्तम समझने लगे हैं। फ़र्नीचर के लिये भी मलबरी अच्छी लकड़ी है विशेषकर सफरी (कैम्प) फ़र्नीचर के लिये बहुत उपयुक्त है। यह गाड़ियों की बाडी बनाने में भी काम आती है। यदि यह प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो सकती तो इस लकड़ी को बहुत से कामों में लगाया जा सकता।

मिलने का स्थानः—मोरस लीवीगेटा और मोरस की दूसरी लकड़ियों की प्राप्ति प्राकृतिक जंगलों से बहुत थोड़ी मात्रा में होती है। किन्तु पंजाब में मलबरी के बाग़ हैं। छाँगामाँगा (जो अब पाकिस्तान में है) इसके लिए मुख्य स्थान है जहाँ से यह प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो सकती है। इस लकड़ी की माँग इसकी पैदावार से अधिक है।

दर:—मलबरी के दाम पंजाब के छाँगामाँगा इलाके से ६ फ़ीट लम्बाई और ३ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे २ रु० से ३ रु० प्रति घनफुट के हिसाब से मिल जाते हैं।

ओलिया, और पैरोशिया जैक्विमोण्टियाना

(Olea species and Parrotia jacquemontiana)

व्यापारिक नामः—औलिव और पैरोशिया। देसी नामः-(औलिव के लिये) काव और (पैरोशिया के लिये) पोहू है।

वज़नः—औलिव ६० से ७० पौं० और पैरोशिया ४६ से ५० पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—ये दोनों बहुत कठोर, भारी और घने रेशों की मज़बूत व लचकदार लकड़ियाँ हैं। दोनों साथ ही साथ पाई जाती हैं। इनके पेड़ छोटे होते हैं और दोनों एक ही प्रकार के कामों में लाई जाती हैं। इसलिये इस पुस्तक में दोनों लकड़ियों का वर्णन साथ ही कर देना उचित समझा गया। औलिव की कच्ची लकड़ी कुछ गुलाबी या हल्के सलेटी रंग की होती है। पक्की भूरे रंग की कुछ हरा गुलाबीपन लिये हुए होती है। पैरोशिया की पक्की लकड़ी सदा गहरे सलेटी रंग की होती है। दोनों लकड़ियों के रेशे बारीक और सीधे होते हैं। इन लकड़ियों में कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। औलिव की पक्की लकड़ी अति सुन्दर होती है परन्तु ये लकड़ियाँ बहुत कम मिलती हैं। इसलिये इनसे कोई बड़ा नुमायशी काम नहीं लिया जा सकता।

सुखाईः—औलिव को बहुत धीरे-धीरे सुखाना चाहिये जिससे कि लकड़ी फटने न पाये। इसके सिरों पर मसाला लगाकर चट्टे को ढक देना चाहिये। चट्टा घना लगाना चाहिये जिससे नमी धीरे-धीरे निकले।

पैरोशिया किसी अंश तक सरलता से सूखती है और इसके चट्टे को ढकने की आवश्यकता नहीं होती परन्तु दूसरी सावधानियाँ, जो औलिव के लिये बताई गई हैं, इसके लिये भी आवश्यक हैं। दोनों लकड़ियाँ किल्न में धीरे-धीरे भली प्रकार सुखाई जा सकती हैं।

मज़बूती:—औलिव और पैरोशिया दोनों मज़बूत, पायदार, कठोर और लचकदार लकड़ियाँ होने के कारण भली प्रकार चोट सहन कर सकती हैं, इसलिये औज़ारों के दस्तों के लिये इनका प्रयोग किया जाता है। औलिव इस काम के लिए बढ़िया से बढ़िया "ऐश" विदेशी लकड़ी की तुलना कर सकती है और पैरोशिया "ऐश" से भी अच्छी अर्थात् "हिकरी" के समान है।

पायदारी:—औलिव बहुत दिनों तक चलनेवाली लकड़ी है परन्तु पैरोशिया इससे कम आयु पाती है। क्योंकि यह अधिक टिकाऊ कामों में प्रयुक्त नहीं होती इसीलिए इसका इतना महत्त्व नहीं है।

औज़ारों से अनुकूलता:—दोनों लकड़ियाँ काम करने और चिराई-कटाई के विचार से सरल हैं। खरादी काम के लिये भी अच्छी हैं। इन पर खूब सफ़ाई आती है और पालिश भी अच्छी चढ़ती है।

प्रयोग:—ये दोनों लकड़ियाँ औज़ारों के दस्तों और दूसरे कठोर कामों के लिये बहुत उत्तम हैं परन्तु ये छोटे नाप में मिलती हैं। पैरोशिया तो केवल छोटे डंडों के रूप में ही मिलती है। रेलवे कार्यालय और दूसरे कारखानों में इन लकड़ियों का औज़ारों के दस्तों आदि में काफ़ी प्रयोग हो रहा है और खरादी चीज़ें भी इनसे अच्छी बनती हैं। औलिव के पुलिस के सिपाहियों की वर्दी में लगनेवाले डंडे भी बनाये जाते हैं। क्योंकि इसके रेशे बहुत साफ़ और महीन होते हैं इसलिये यह लकड़ी पच्चीकारी के काम

के लिये बहुत अच्छी समझी गई है। इसके खिलौने भी अच्छे बनते हैं।

मिलने का स्थानः—औलिव अल्प मात्रा में मिलनेवाली लकड़ी है। पंजाब के रावलपिंडी डिवीज़न और काश्मीर के रामबन डिवीज़न से इसके २-२½ फ़ीट तक गोलाई के छोटे लट्ठे मिल सकते हैं। पैरोशिया इसकी तुलना में कुछ अधिक मात्रा में मिल जाती है परन्तु नाप में यह औलिव से कम अर्थात् छोटे कुन्दों के रूप में मिलती है। उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त (जो अब पाकिस्तान में है) तथा काश्मीर से ये काफ़ी मिल सकती हैं।

दरः—इनकी क़ीमतों के बारे में चीफ़ कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट पंजाब व काश्मीर या कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त को (जो अब पाकिस्तान में है) लिखना चाहिये।

ओजीनिया डलबरजिऑइडीज़ (Ougeinia dalbergioides)

व्यापारिक नामः—सांदन। देसी नाम—वंधन, पंजन (बिहार), टिनसा सी० पी० (मध्य प्रदेश)

वज़नः—लगभग ५४-५५ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी हल्के भूरे रंग की और कम चौड़ी होती है और पक्की कुछ कालापन लिये हुए भूरे रंग की होती है। जिसमें कभी-कभी कम गहरी धारियाँ सी होती हैं जिनकी बनावट भद्दी और मोटी होती है।

सांदन के बड़े लट्ठे आमतौर पर बीच से ख़राब निकलते हैं। चिरान के समय उस हिस्से को निकाल देना चाहिये।

सुखाईः—यद्यपि यह हवा में धीरे-धीरे सूखनेवाली लकड़ी है परन्तु सूखते समय कोई दोष नहीं आने पाता। यदि अधिक सावधानी न बरती जाय तो बाहरी सतह पर से महीन-महीन

चिटक जाती है इसलिये सांदन को गीला ही चिरवा कर गोदाम के अन्दर सावधानी से चट्टा लगाकर ढक देना और धीरे-धीरे सुखाने का उपाय करना चाहिये। यह किल्न में बिना किसी कठिनाई के सूखती है।

मज़बूतीः—सांदन एक कठोर लकड़ी है। सागोन से कहीं अधिक कठोर है। रेशों के घुमाव के कारण यह अपने आपको फटने से रोकने में भी बहुत मज़बूत है। दूसरी शक्तियों में यह सागोन के बराबर हैं और वज़न में उससे कहीं अधिक भारी है।

पायदारीः—सांदन स्वभावतः अधिक टिकाऊ लकड़ी है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके ६ टुकड़ों में से प्रत्येक सात वर्ष के बाद भी सुरक्षित रूप में पाये गये। उनमें नाममात्र को दीमक का प्रभाव हुआ। सब लोग सांदन को एक बहुत दिन चलनेवाली लकड़ी मानते हैं। इस पर रक्षात्मक मसालों का प्रयोग अभी तक नहीं किया गया है। विचार किया जाता है कि इसके छेदों में एक प्रकार का गोंद भरा होने से यह रक्षात्मक मसालों को भली प्रकार नहीं सोखेगी।

औज़ारों से अनुकूलताः—एक कठोर लकड़ी होने के कारण सांदन चिराई, कटाई और काम करने में अधिक परिश्रम लेती है। रेशों के घुमाव के कारण इस पर रन्दा मुश्किल से चलता है परन्तु जैसी चाहो वैसी सफ़ाई आती है और पालिश खूब चढ़ती है। प्लाईउड के लिये सांदन पर प्रयोग नहीं किया गया। अधिक कठोर होने के कारण यह इस काम के लिये ठीक न होगी।

प्रयोगः—सांदन बहुत कठोर और मज़बूत होने से बैलगाड़ियों, औज़ारों के दस्तों, खेतीबाड़ी और इमारती कामों के लिये उपयुक्त है। इसके कुप्पे भी अच्छे बनते हैं। फ़र्नीचर के लिये सांदन अधिक भारी होने के कारण अनुपयुक्त है। फिर भी कुछ न कुछ फ़र्नीचर बनाने में भी प्रयोग की जाती है और इसके कोई-

कोई टुकड़े बहुत सुन्दर और सजावटी निकल जाते हैं। यह लकड़ी अपनी उपज के क्षेत्रों में बहुत प्रसिद्ध है।

मिलने का स्थानः—यह हिन्दुस्तान के मैदानी जंगलों में आम तौर पर होती है। परन्तु जहाँ इसके मोटे पेड़ होते हैं वहाँ इसकी स्थानीय माँग भी बहुत होती है। परन्तु जिन भागों में इसके पेड़ छोटे होते हैं वहाँ से यह छोटे लट्ठों के रूप में प्रचुर मात्रा में बाहर भेजे जा सकते हैं। बम्बई के पच्छिमी तट के जंगलों से आये हुए सांदन के लट्ठे सबसे अच्छे होते हैं। सी० पी० (मध्य प्रदेश), बिहार, उड़ीसा और यू० पी० (उत्तर प्रदेश) से भी यह मिल सकते हैं। जानकारी के लिये इन प्रान्तों के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखना चाहिये।

दरः—बम्बई में इसके उत्तम प्रकार के लट्ठे १४५ रु० प्रति टन, सी० पी० (मध्य प्रदेश) में ७५ रु० से १२५ रु० प्रति टन और बिहार उड़ीसा में ३० रु० से ६० रु० प्रति टन और यू० पी० (उत्तर प्रदेश) में छोटे पेड़ होने के कारण २५ रु० प्रति टन तक मिल जाते हैं [सन् १९३७]

फ़ीबी की लकड़ियाँ (Phoebe species)

(१) फ़ीबी हेन्सियाना (Phoebe hainesiana)

(२) फ़ीबी ऐटेन्यूएटा (Phoebe attenuata)

(३) फ़ीबी गोअलपारेनसिस (Phoebe goalparensis)

व्यापारिक नामः-बोनसम। देसी नाम—मकरोई, अंगारी(नैपाल)

नोटः—कभी-कभी इन लकड़ियों को भ्रम से आसाम टीक भी कहते हैं क्योंकि ये सागोन के रंग की होती हैं परन्तु इनका 'टीक' से कोई सम्बन्ध नहीं है।

वज़नः—३० से ३४ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—बंगाल और आसाम में फ़ीबी की बहुत

सी क़िस्में होती हैं। फ़ीबी हेन्सियाना, फ़ीबी पेटेन्यूएटा और फ़ीबी गोलपारेनसिस विशेषरूप से प्रसिद्ध हैं। इनकी कच्ची लकड़ी हल्के भूरे रंग की होती है और पक्की ताज़ी कटी हुई कुछ पीलापन लिए हुए बादामी रंग की, जो जल्दी ही गहरे बादामी रंग में बदल जाती, और सागोन के रंग पर आ जाती है। इसी कारण बोनसम को "आसाम टीक" भी कहते हैं।

फ़ीबी हेन्सियाना इनमें सबसे हल्की होती है। इसमें कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। इसके रेशे कुछ आड़े परन्तु एक विशेष क्रम से होते हैं। बोनसम उत्तम प्रकार की हल्की लकड़ियाँ हैं जो प्रत्येक काम में लाई जाती हैं।

सुखाई:—बोनसम सूखने में सहल और सूखने के बाद स्थिर रहनेवाली लकड़ियाँ हैं। देहरादून में इनसे जो फ़र्नीचर बनाया गया उसमें कई वर्षों तक कोई दोष नहीं पैदा हुआ। इनकी "वीनियर" अर्थात् प्लाईउड के लिये एक-एक तह को ६० प्रतिशत नमी से ४ प्रतिशत तक लाने में एक मामूली ड्रायर मशीन में केवल १५ मिनट लगे। बोनसम को गीला चिरवाकर हवादार गोदाम के अन्दर चट्टा लगाकर छोड़ देना ही इसको सुखाने का एक उचित उपाय है। यह किलन में भी सरलता से सूखती है।

मज़बूती:—फ़ीबी हेन्सियाना शक्ति में सागोन से २० प्रतिशत कम है और कठोरता में सागोन का ८० प्रतिशत है। फ़ीबी की और लकड़ियों पर अभी तक देहरादून में शक्ति सम्बन्धी प्रयोग नहीं किये गये हैं। विचार किया जाता है कि वह फ़ीबी हेन्सियाना से कुछ अच्छी होंगी।

पायदारी:—फ़ीबी हेन्सियाना देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में सफल रही। इसके ६ टुकड़ों में से ५ साढ़े पाँच वर्ष के बाद भी स्थिर रहे, यद्यपि दीमक और बदरंगी (कुकुरमुत्ता) का कुछ असर हुआ था। इसलिये बोनसम को मध्यम श्रेणी की टिकाऊ

लकड़ियाँ कहा जा सकता है। बिना रक्षात्मक मसाला दिये इनका बाहरी प्रयोग असुरक्षित होगा।

औज़ारों से अनुकूलताः—इनकी चिराई-कटाई और इन पर काम करना सरल है। थोड़ी मेहनत से काफ़ी सफ़ाई आ जाती है और यद्यपि ये बहुत सजावटी लकड़ियों में से नहीं हैं फिर भी मोमी पालिश के बाद कुछ सुन्दरता आ जाती है। फ़ीबी हेन्सियाना प्लाईउड बनाने में भी सफल रही। इसकी प्लाईउड से बनाये गये चाय के बक्स बहुत मज़बूत सिद्ध हुए। इस विचार से बोनसम एक उत्तम लकड़ी है।

प्रयोगः—पिछले कुछ वर्षों तक बोनसम इतनी प्रसिद्ध लकड़ी नहीं थी परन्तु अब लोग इसे जानने लगे हैं। और इसको अच्छी लकड़ी समझते हैं। यह सन्दूक़ बनाने, हलके प्रकार के फ़र्नीचर, और ग्रामोफ़ोन बाजों के कैबिनट (बक्स) के लिये अच्छी लकड़ी है। सेना-विभाग में सिपाहियों के लिये इसके बने हुए सन्दूक़ बहुत पसन्द किये गये। यह ढलाई के साँचे इत्यादि के लिये भी बहुत पसन्द की जाती है।

मिलने का स्थानः—बोनसम बंगाल के अतिरिक्त आसाम प्रांत से अधिक मिल सकती है। परन्तु इसकी माँग दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसके २४ फ़ीट तक लम्बे और ५ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे मिल जाते हैं। अधिक जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाईज़ेशन अफ़सर, आसाम को लिखना चाहिये।

दरः—आसाम में इसके लट्ठों का भाव ४५ रु० से ५० रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी १ रु० ८ आ० और १ रु० १० आ० प्रति घनफ़ुट तक मिल जाती है। (सन् १९३७)

पीसिया की लकड़ियाँ (Picea species)

"पीसिया मेरिन्डा" और "पीसिया स्मिथियाना"

व्यापारिक नामः—स्प्रस। देसीनामः—राई, काचल परतल (पंजाब)

वज़नः—२१ से ३६ पौं० प्रतिघनफुट—साधारणतया २६ पौंड।

लकड़ी की दशाः—सफ़ेद या कुछ अंश तक बादामी रंग की होती है। कच्ची और पक्की लकड़ी में थोड़ा सा अन्तर होता है इसलिये कुछ पेड़ों की अन्दर की लकड़ी कुछ लालीपन लिये होती है जिसे भूल से पक्की लकड़ी समझा जाता है। इन लकड़ियों में राल के समान गंध होती है। रेशे सीधे और समान होते हैं। रंग सूखने पर पक्का बादामी हो जाता है। स्प्रूस हलके प्रकार की एक उत्तम लकड़ी है।

सुखाईः—स्प्रूस सावधानी से हवा में सरलतापूर्वक सुखाई जा सकती है। इसको गोदाम के अन्दर सूर्य की सीधी किरणों और गरम हवाओं से बचाते हुए खुले चट्टे के रूप में लगाना चाहिये। यदि जल्दी सुखाने की चेष्टा की जायगी तो लकड़ी फटने लगेगी। स्प्रूस पर जल्दी बदरंगी (कुकुरमुत्ता) का प्रभाव होता है इसलिये चिराई के बाद तुरन्त ही ज़मीन से काफ़ी ऊँचा चट्टा लगा देना चाहिये। यह किल्न में भी सरलतापूर्वक सूखने-वाली लकड़ी है।

मज़बूतीः—वज़न में हलकी होने के कारण स्प्रूस हिन्दुस्तान की अधिक मज़बूत लकड़ियों में से नहीं है। अपने वज़न के विचार से इसको अवश्य एक उत्तम और मज़बूत लकड़ी का पद दिया जा सकता है और जहाँ एक हलके प्रकार की मज़बूत लकड़ी की आवश्यकता हो वहाँ स्प्रूस बहुत उत्तम लकड़ी है। यह सागोन से ३० से ३५ प्रतिशत हलकी और शक्ति में उसके ६५ से ७५ प्रति-शत के बराबर है। बदरंगी (कुकुरमुत्ता) से रक्षा करते हुए स्प्रूस हवाई जहाज़ में काम आनेवाली उत्तम हिन्दुस्तानी लकड़ी है।

पायदारीः—यह अधिक टिकाऊ लकड़ी नहीं है। गीली दशा में यह जल्दी कुकुरमुत्ता से कमज़ोर हो जाती है। इसके

अतिरिक्त दूसरी कमी इस लकड़ी में यह है कि यह रक्षात्मक मसालों को नहीं सोखती और अधिक से अधिक मशीनी दबाव के साथ भी केवल चौथाई इञ्च की गहराई तक मसाला कठिनता से खपाती है। इस विचार से स्प्रूस के रेल के स्लीपरों को ठीक नाप में काट लेने के बाद मसाला लगाना चाहिये जिससे कि मसाला दी हुई लकड़ी कटाई में न निकल जाय।

औज़ारों से अनुकूलताः—चिराई-कटाई और काम करने के विचार से स्प्रूस बहुत सहल लकड़ी है परन्तु चीड़ इत्यादि के समान कभी-कभी इसमें गाँठें अधिक होती हैं। इसलिये यह बढ़ई के काम की एक अच्छी लकड़ी नहीं हो सकती। प्लाईउड बनाने के लिये भी यह अच्छी सिद्ध नहीं हुई, क्योंकि गाँठ और गोंद के कारण इसके अच्छे "वीनियर" नहीं बनते।

प्रयोगः—उत्तरी भारत के लकड़ी के व्यापारिक क्षेत्रों में स्प्रूस काफ़ी प्रसिद्ध है। इसका छतगिरी, फ़र्श के तख़्तों, सस्ते और हलके फ़र्नीचर, पैकिंग बक्स और पेटियों में बहुत प्रयोग किया जाता है। स्प्रूस अधिकतर रेल के स्लीपरों में काम आ जाती है। इससे काग़ज़ भी अच्छा बनता है। हलके प्रकार के सन्दूकों के लिये भी यह एक अच्छी लकड़ी हो सकती थी, परन्तु इसकी प्राप्ति इतनी नहीं कि कलकत्ता और बम्बई जैसे व्यापारिक शहरों की बढ़ी हुई आवश्यकता को पूरा कर सके।

मिलने का स्थानः—स्प्रूस और "फर" अधिकतर मिलेजुले स्लीपरों के रूप में बिकती हैं। काश्मीर से इसके कुछ लट्ठे झेलम में भी (जो अब पाकिस्तान में है) आते हैं, नहीं तो प्रत्येक स्थान पर स्लीपरों ही के रूप में ही पाई जाती हैं। स्प्रूस उत्तरी भारत की लकड़ी है। जानकारी के लिये चीफ़ कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट पंजाब, यू० पी० (उत्तर प्रदेश) या काश्मीर को लिखना चाहिये।

दरः—पंजाब में नदी किनारे के समीप के "डिपोज़" पर स्प्रूस ८ आ० से ११ आ० प्रति घनफ़ुट बिकती है। लट्ठे २५ रु० से ३५ रु० प्रति टन बिकते हैं (सन् १९३७)

पाइनस की लकड़ियाँ (Pinus species

पाइनस लाँजीफ़ोलिया और पाइनस एक्सेलसा

(Pinus longifolia and Pinus excelsa)

व्यापारिक नामः—चीड़ (पाइनस लाँजीफ़ोलिया के लिये) ब्लयू पाइन (पाइनस एक्सेलसा के लिये)

देसी नामः—चील (पाइनस लाँजीफोलिया), कैल, परतल, निश्तर (पाइनस एक्सेलसा)

वज़नः—चीड़ का औसत वज़न ३८ पौं० और ब्लयू पाइन का ३२ पौं० प्रति घनफ़ुट है।

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी कुछ पीलापन लिये हुए सफ़ेद और पक्की बादामी रंग की होती है। इन लकड़ियों में बिरोज़ा या राल की सी गंध आती है। रेशे अधिकतर सीधे होते हैं परन्तु किसी-किसी स्थान की चीड़ के रेशे कुछ घूमे हुए भी होते हैं। परन्तु इस प्रकार की चीड़ की लकड़ी बड़ी मात्रा में प्राप्य नहीं होती। चीड़ के रेशे बनावट और क्रम के विचार से मोटे और महीन दोनों प्रकार के होते हैं। लकड़ी में जगह-जगह छोटी-बड़ी गाँठें पाई जाती हैं। उत्तरी भारत में देवदार के बाद चीड़ ही ऐसी लकड़ी है जिसका अधिकतर प्रयोग होता है। ब्लयू पाइन चीड़ से कुछ अच्छी होती है।

सुखाईः—ये सरलता से सूखनेवाली लकड़ियाँ हैं। गोदाम या शेड के अन्दर हवादार जगहों में इनका छीदा चट्टा लगाना चाहिये क्योंकि शेड के अन्दर चट्टा न लगाने से लकड़ी के फटने का डर रहता है। इसी प्रकार बन्द और सीली जगह पर चट्टा लगाने से

बदरंगी (कुकुरमुत्ता) लगने का भय रहेगा। ये लकड़ियाँ किल्न में भी बहुत सरलता से सूखती हैं।

मज़बूतीः—मज़बूती के विचार से चीड़ और ब्ल्यू पाइन दोनों समान हैं। ब्ल्यू पाइन कुछ हलकी होती है। यह वज़न में 'टीक' के ७५ प्रतिशत के लगभग होती है। शक्ति सम्बन्धी प्रयोगों में पंजाब का चीड़ यू० पी० के चीड़ से किसी अंश तक मज़बूत सिद्ध हुआ है। दोनों लकड़ियाँ अपने हलके वज़न के विचार से काफ़ी मज़बूत कही जा सकती हैं।

पायदारीः—चीड़ और ब्ल्यू पाइन दोनों कम टिकाऊ लकड़ियाँ हैं। इसलिये रेल के स्लीपरों और दूसरे बाहर के कामों में इन्हें रक्षात्मक मसाले के बिना प्रयोग में न लाना चाहिये। चीड़ की कच्ची लकड़ी मसाला खूब सोखती है परन्तु पक्की कम। ब्ल्यू पाइन इससे भी कम मसाला सोखती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—औज़ारों के लिये ये बिलकुल नर्म लकड़ियाँ हैं और बढ़ईखाने की आम आवश्यकताओं में ये बहुत काम आती हैं। इन पर सफ़ाई भी अच्छी आती है परन्तु पालिश अच्छा नहीं होता, यद्यपि रंग (पेन्ट) इन पर भली प्रकार होता है।

प्रयोगः—चीड़ और ब्ल्यू पाइन पंजाब और यू० पी० (उत्तर प्रदेश) में आम हलके कामों, बक्सों और सामान की पेटियों में बहुतायत से प्रयुक्त होती हैं। रक्षात्मक मसाले के साथ रेलवे स्लीपरों के लिये भी ठीक हैं जो १६ से १७ वर्ष तक चलते हैं। इनकी खपरैलें भी बनाई जाती हैं। हलके फ़र्नीचर और बहुत सी घरेलू आवश्यकताओं में भी काफ़ी काम आती है।

मिलने का स्थानः—चीड़ और ब्ल्यू पाइन दोनों हिमालय के जंगलों से स्लीपरों के रूप में लाई जाती हैं। परन्तु नदी किनारे के "डिपोज़" पर इनके लट्ठे भी मिल सकते हैं। जानकारी के

लिये चीफ़ कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट पंजाब और यू० पी० (उत्तर प्रदेश) को लिखना चाहिये।

दरः—ब्ल्यू पाइन के १२ फ़ीट लम्बे स्लीपर ५ रु० प्रति स्लीपर के हिसाब से मिलते हैं। लट्ठों के दाम २५ रु० से ४० रु० प्रति टन होते हैं। चीड़ के ६ फ़ीट के स्लीपर ३ रु० ४ आ० स्लीपर के हिसाब से मिलते हैं (सन् १९३८)

टेरोकारपस डलबरजिऑइडीज़ (Pterocarpus dalbergioides)

व्यापारिक नामः—अंडमान पडाक। देसी नामः—पडाक।

वज़नः—४३ से ४८ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी बादामी या मटियाले सफ़ेद रंग की होती है। पक्की गहरे लाल रंग की कभी खुलते हुए लाल रंग की या पीले रंग की भी होती है। लकड़ी में कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। इस लकड़ी में कभी कुछ गहरे रंग की धारियाँ भी होती हैं। रेशे मोटे और घूमे हुए होते हैं। यह बहुत मज़बूत, सुन्दर और टिकाऊ लकड़ी है।

सुखाईः—अण्डमान पडाक को सुखाने में कोई कठिनाई नहीं होती। शेड के अन्दर हवादार जगह पर नियमित रूप से खुला हुआ चट्टा लगाना इसके सुखाने का सरल उपाय है। पडाक किल्न में भी सुविधा से सूखती है।

मज़बूतीः—अण्डमान पडाक सागोन से कुछ भारी और उसी अनुपात से कठोरता और मज़बूती में भी अधिक है। इसमें मुख्य बात यह है कि प्रयोग में आने के बाद यह अपना रूप स्थिर बनाये रखती है और यही एक ऐसी लकड़ी है जो इस गुण के कारण सागोन से भी अच्छी कही जा सकती है और कोई हिन्दुस्तानी लकड़ी इस मामले में सागोन के समान भी नहीं है।

पायदारीः—यह बहुत टिकाऊ लकड़ी है। बहुत दिनों तक इस पर दीमक का कोई प्रभाव नहीं होता और बदरंगी (कुकुरमुत्ता)

से भी सुरक्षित रहती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके ६ टुकड़ों में से प्रत्येक ७ वर्ष बाद भी सुरक्षित और अच्छी दशा में पाये गये। इसकी कच्ची लकड़ी रक्षात्मक मसाले को सोख लेती है परन्तु पक्की नहीं।

औज़ारों से अनुकूलताः—अण्डमान पडाक काम करने और चिराई-कटाई में अधिक मेहनत नहीं लेती। यदि रेशों में घुमाव के कारण सफ़ाई लाने में कुछ कठिनाई होती है, किन्तु छेदों को भर देने के बाद इस पर मोमी पालिश बहुत अच्छा चढ़ता है। यह लकड़ी प्लाईउड के लिये उपयुक्त नहीं परन्तु इसकी बारीक चिरी हुई तख़्तियाँ बहुत अच्छी होती हैं। पडाक बहुत सुन्दर रंगवाली और सजावटी लकड़ी है।

प्रयोगः—अण्डमान पडाक हिन्दुस्तान और यूरप में बहुत प्रसिद्ध लकड़ी है। यह उत्तम प्रकार की इमारती लकड़ी है जिससे कि बढ़िया फ़र्नीचर भी बनाया जाता है। इसकी बिलियर्ड खेलने की भारी मेज़ें, रेलगाड़ियाँ, जहाज़ों के कमरे (केबिन), फ़र्श और लकड़ी का कुल सजावटी सामान बहुत अच्छा बनता है।

मिलने का स्थानः—पडाक अण्डमान के टापुओं की मुख्य लकड़ी है जहाँ से इसके बड़े चौरस लट्ठे अधिक संख्या में मिल सकते हैं। जानकारी के लिये चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर पोर्ट ब्लेयर अण्डमान को लिखना चाहिये।

दरः—अण्डमान में चौकोर लट्ठे ६५ से १०० रु० प्रति टन और चिरान की हुई लकड़ी १५० रु० प्रति टन तक बिकती है। (सन् १९३७) पडाक की क़ीमत बाज़ार की दशा के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है।

'पडाकबर' अण्डमान पडाक के पेड़ों से एक प्रकार की लकड़ी, जो 'बर' कहलाती है, काफ़ी निकलती है। इसकी क़ीमत और नमूने के लिये चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर अण्डमान को लिखिये।

टेरोकारपस मार्सूपियम (Pterocarpus marsupium)

व्यापारिक नामः—बीजासाल। देसी नामः—पियासाल (बिहार), बेंगाई (तामिल), होनि (कुर्ग)

वज़नः—४८ से ५० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी सफ़ेदी लिये हुए और पक्की भूरे रंग की होती है जिसमें कि कहीं-कहीं गहरे चिह्न भी होते हैं। इस लकड़ी में कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। बीजासाल मध्यम श्रेणी की घने रेशोंवाली लकड़ी है जो बहुधा घूमे हुए होते हैं। यह इमारती आवश्यकताओं की बढ़िया और वज़नी लकड़ी है परन्तु इसमें कोई विशेष सुन्दरता नहीं होती।

सुखाईः—यह बड़ी सरलता से सूख जाती है परन्तु सूखने की दशा में बाहर की सतह पर कुछ महीन महीन फटती है। इसके अतिरिक्त और कोई दोष नहीं पैदा होता। इसकी गीली दशा में ही चिराई कराके शेड के अन्दर खुला चट्टा लगाना चाहिये। इसके बीच का भाग खराब होता है जिसे चिराई के समय निकलवा देना अच्छा है। यह किल्न में बहुत अच्छी तरह सूखती है और सूखने पर इसका रंग भी अच्छा निकलता है।

मज़बूतीः—बीजासाल खूब भारी, कठोर और मज़बूत लकड़ी है। यह सागोन से १० प्रतिशत भारी, ३५ प्रतिशत कठोर और ३५ प्रतिशत चोट और धक्का सहने में अधिक है। दूसरी शक्तियों में यह सागोन के बराबर है परन्तु अपना रूप स्थिर बनाये रखने में यह पहले बताई हुई टेरोकारपस डलबरजिऑइडीज़ के समान अच्छी नहीं।

पायदारीः—बीजासाल अधिक टिकाऊ लकड़ी है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके ६ टुकड़े ६ वर्ष तक सुरक्षित रहे जिनमें से केवल ३ को दीमक से कुछ हानि पहुँची थी। दक्षिणी भारत में बीजासाल एक बहुत पायदार लकड़ी समझी जाती है। इसकी

कच्ची लकड़ी रक्षात्मक मसाले को सोख लेती है परन्तु पक्की नहीं।

औज़ारों से अनुकूलता:— जहाँ तक चिराई-कटाई का सम्बन्ध है, बीजासाल कोई कष्ट नहीं देती, परन्तु रेशों के घुमाव के कारण इस पर सफ़ाई लाना अवश्य कठिन है। छेदों को भर देने के बाद इस पर पालिश अच्छा चढ़ता है। इसकी प्लाईउड अच्छी नहीं बनती परन्तु महीन सीधी चिरी हुई तख़्तियाँ काफ़ी अच्छी होती हैं।

प्रयोगः—दक्षिणी भारत में बीजासाल का पेड़ यथेष्ट बड़ा होता है जिससे बहुत अच्छी लकड़ी निकलती है। 'टीक' और 'रोज़-उड' के बाद अच्छी लकड़ियों में इसकी गिनती है परन्तु मध्य भारत में बीजासाल का पेड़ छोटा होता है जिसकी लकड़ी अधिकतर इमारती आवश्यकताओं और कृषि उपकरण आदि के कामों में लाई जाती है। इसकी कुछ लकड़ी फर्नीचर, अनाज नापने के पैमानों, बैलगाड़ियों और रेलों में भी काम आती है। इस पर खुदाई का काम भी अच्छा होता है। बीजासाल के बने हुए बर्तनों और प्यालों में खाना-पीना डाइबिटीज़ (ज़याबतीस) के रोगियों के लिये बहुत लाभदायक है। यद्यपि लकड़ी की रसायनिक छानबीन से यह बात सिद्ध नहीं होती, परन्तु कुछ डाक्टर इस बात को सच मानते हैं।

मिलने का स्थानः—बीजासाल सी० पी० (मध्य प्रदेश), बम्बई, कुर्ग, मद्रास, उड़ीसा और यू० पी० (उत्तर प्रदेश) से काफ़ी मिल सकती है। दक्षिणी भारत के बीजासाल की लकड़ी उत्तरी भारत के बीजासाल से अच्छी होती है। जानकारी के लिये ऊपर बताये हुए प्रान्तों के किसी कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दरः—बम्बई में अच्छी बीजासाल १३० रु० प्रति टन और मद्रास में ३० रु० से ६० रु० प्रति टन, सी० पी० में ६० रु० से ७५ रु० प्रति टन, उड़ीसा में २० रु० से ७५ रु० प्रति टन और उत्तर प्रदेश में ३७ रु० प्रति टन मिलती है। (१६३७)

टेरोकारपस सैन्टैलीनस—(Pterocarpus santalinus)

व्यापारिक नामः—लाल सन्दल।

वज़नः—७६ पौ० प्रति घनफुट। यह इसी वंश की एक और लकड़ी है जो रूपरंग में पडाक से मिलती-जुलती है परन्तु उससे अधिक भारी और कठोर होती है। यह बहुत मज़बूत और टिकाऊ लकड़ी है। अधिक भारी और कठोर होने के कारण यह फ़र्नीचर के लिये उपयुक्त नहीं है। परन्तु दक्षिणी भारत में यह उत्तम प्रकार के मकानों में सुन्दर खम्भों के रूप में प्रयुक्त होती है और खरादी चीज़ों व लकड़ी में खुदाई के काम की भी अच्छी लकड़ी है। इसके सुखाने में भी कोई कठिनाई नहीं होती। परन्तु यह मिलती कम है और अधिकतर कडापा के ज़िले में पैदा होती है। क़ीमत ४० रु० से १७५ रु० प्रति टन तक होती है।

शीमा वालिशाई (Schima wallichii)

व्यापारिक नामः—चिलौनी। देसी नामः—नीडल उड, कनक (बंगाल)

वज़नः—४३ से ४६ पौ० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशा—कच्ची लकड़ी धुँधले सफ़ेद रंग की और पक्की कुछ सुर्ख़ी लिये हुए भूरे रंग की होती है जो कहीं-कहीं गहरा होता है। लकड़ी में कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे घूमे हुए, परन्तु समतल नहीं होते जो बनावट में मध्यम श्रेणी के घने होते हैं। चिलौनी एक औसत दर्जे की वज़नी और अच्छी लकड़ी है।

सुखाईः—यह लकड़ी सूखने में मुड़ती, फटती और ऐंठती है। इसलिये सुखाने में बहुत सावधानी की आवश्यकता है। लकड़ी को गीला चिरवाकर घना चट्टा लगाकर ढक देना चाहिये। देहरादून में चिलौनी किलन में बिना किसी दोष के सुगमता से सुखाई गई।

मज़बूती:—वज़न में यह सागोन के बराबर परन्तु अपने आप को फटने से बचाने में यह उससे अधिक मज़बूत है। दूसरी विशेषताओं में उससे कम है। कठोरता में भी चिलौनी, सागोन से १५ प्रतिशत कम है।

पायदारी:—यह अधिक टिकाऊ लकड़ी नहीं है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके सब टुकड़ों में ५ वर्ष के अन्दर दीमक लग गई थी। चिलौनी रक्षात्मक मसाला भी ठीक प्रकार से नहीं ग्रहण करती, यहाँ तक कि उसकी कच्ची लकड़ी भी अच्छी तरह मसाला नहीं लेती।

औज़ारों से अनुकूलता:—चिलौनी की कटाई-चिराई सरल है और सफ़ाई इस पर अच्छी आती है परन्तु यह हाथों में खुजली पैदा कर देती है जिससे काम करनेवाले इसे पसन्द नहीं करते।

प्रयोग:—अपनी उपज के क्षेत्रों में चिलौनी बहुत कुछ इमारती कामों में लगती है और खेतीबाड़ी के औज़ारों और खानों के अन्दर की लकड़ियों में भी काम आती है। यदि यह सरलता से सूखने-वाली लकड़ी होती तो इसका प्रयोग अधिक हो सकता था। फिर भी किल्न द्वारा सुखाई हुई चिलौनी अच्छी होती है और इमारती आवश्यकताओं में वर्गों इत्यादि के रूप में भली प्रकार प्रयोग की जा सकती है।

मिलने का स्थान:—चिलौनी आसाम और बंगाल में होती है जहाँ से उसके २० फ़ीट लम्बे और ६ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे आसानी से मिल जाते हैं। जानकारी के लिये यूटिलाईज़ेशन अफ़सर आसाम और बंगाल को लिखना चाहिये।

दर:—बंगाल में इसके लट्ठे २० रु० से ३० रु० प्रति टन और चिरान की हुई लकड़ी २५ रु० से ६५ रु० प्रति टन बिकती है। आसाम में लट्ठे ३८ रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी १ रु० ४ आ० प्रति घनफ़ुट बिकती है। (सन् १६३७)

शिलीशिरा ट्राइजुगा (Schleichera trijuga)

व्यापारिक नामः—कुसुम। देसी नामः—कुसुम, सागाडे (कुर्ग), पूवुम (मालाबार)

वज़न—५६ से ६८ पौ० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी धुँधले सफ़ेद रंग की और पक्की सुर्खी लिये हुए पक्के भूरे रंग की होती है। लकड़ी में कोई गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे मध्यम श्रेणी के घने और कहीं-कहीं घूमे हुए होते हैं। कुसुम हिन्दुस्तान की बहुत कठोर और भारी लकड़ियों में से है।

सुखाईः—यह कठिनता से सूखनेवाली लकड़ी है और सूखते समय फटती और चिटकती है इसलिये इसे सावधानी से धीरे-धीरे सुखाने की आवश्यकता है। इसको गीला ही चिरवाकर घना चट्टा लगा कर ढक देना चाहिये जिससे शुष्क हवाओं से रक्षा होती रहे। कुसुम किल्न में भली प्रकार नहीं सूखती इसलिये इसको हवा ही में सावधानी से सुखाना चाहिये।

मज़बूतीः—कुसुम बहुत कठोर, भारी और मज़बूत लकड़ी है। वज़न में यह सागोन से लगभग ६० प्रतिशत अधिक और मज़बूती में ४० प्रतिशत बढ़ी हुई है। अपने को फटने से बचाने में यह सागोन से ८५ प्रतिशत (अधिक मज़बूत और कठोरता में उससे १६५ प्रतिशत) बढ़ी हुई है।

पायदारीः—इतनी कठोर और मज़बूत होते हुए भी कुसुम कुछ अधिक दिनों तक टिकनेवाली लकड़ी नहीं है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यह लगभग ६ वर्ष चली। कुसुम रक्षात्मक मसाले को भी नहीं ग्रहण करती।

औज़ारों से अनुकूलताः—अधिक भारी और कठोर होने के कारण कुसुम चिराई, कटाई और काम करने में बहुत मेहनत लेती है। सूखने पर इसकी चिराई और भी कठिन हो जाती है।

फिर भी इन कठिनाइयों को पार करने के बाद इस पर खूब सफ़ाई आती है और खरादी काम में भी यह ठीक उतरती है।

प्रयोगः—कुसुम कई एक कामों के लिये एक उत्तम लकड़ी है। मिलों में पहियों, चर्खियों, कोल्हू की ठोस लकड़ियों और औज़ारों के दस्तों में बहुत प्रयुक्त होती है।

खानों के अन्दर की लकड़ियों और छज्जों में भी इसका प्रयोग होता है। रक्षात्मक मसालों के साथ कुसुम बहुत अच्छी इमारती लकड़ी होती है। परन्तु अभी तक इसको मसाला देने में सफलता नहीं मिली है। मिलों और गोदामों इत्यादि में यह फ़र्श की लकड़ियों और सड़कों के लिये भी काम में लाई जाती है। ईंधन के लिये भी कुसुम एक अच्छी लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—यह बम्बई, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश से मिलती है। मध्यप्रदेश, बिहार और मद्रास में भी होती है। परन्तु किसी एक स्थान से अधिक नहीं मिल सकती। इसके पेड़ को "लाख" प्राप्त करने के लिये लगाया जाता है। जानकारी के लिये उपरोक्त प्रान्तों में से किसी के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये।

दरः—बम्बई में लकड़ी के नाप और उसकी दशा के अनुसार १० रु० से ४५ रु० प्रति टन, उड़ीसा में २८ रु० प्रति टन और उत्तर प्रदेश में २५ रु० प्रति टन मिलती है। (सन् १९३७)

शोरिया की लकड़ियाँ (Shorea species)

(१) शोरिया रोबस्टा (Shorea robusta)

(२) शोरिया आसामिका (Shorea assamica)

व्यापारिक नामः—(१) साल (२) मकाई।

देसी नामः—(१) साल (२) मकाई।

लकड़ी की दशाः—साल की लकड़ी इतनी प्रसिद्ध है कि उसके बारे में अधिक बताने की आवश्यकता नहीं। यह भूरे रंग की और

तिरछे रेशोंवाली अधिक भारी, कठोर और मज़बूत लकड़ी है। रेशे बनावट में मध्यम श्रेणी के घने और घूमे हुए होते हैं। साल उत्तरी भारत की सबसे अधिक प्रयोग में आनेवाली लकड़ी है। मकाई इसकी अपेक्षा कुछ हलकी और कमज़ोर होती है। इसका रंग कुछ बादामी और रेशे सीधे होते हैं। यह भी अपने स्थान पर एक उपयोगी लकड़ी है, परन्तु साल से भिन्न।

सुखाईः—साल बहुत धीरे-धीरे और कठिनाई से सूखनेवाली लकड़ी है। यहाँ तक कि कई-कई वर्ष के बाद भी यह भीतर से काफ़ी गीली निकलती है। सूखने में यह ऊपर की सतह से कुछ फटती भी है। परन्तु इससे लकड़ी को कोई विशेष हानि नहीं पहुँचती। फिर भी यदि सावधानी से काम न लिया जाय और लकड़ी धूप में या तेज़ गर्म और शुष्क हवाओं में पड़ी रहे तो उसके अधिक फटने और ऐंठने का भय रहता है। साल को गीली दशा में चिरवा कर शेड के अन्दर चट्टा लगाकर ढक देना चाहिए।

साल की अपेक्षा मकाई का सुखाना सरल है और यह उससे जल्दी सूखती है।

मज़बूतीः—साल बहुत मज़बूत और टिकाऊ लकड़ी है। यह सागौन से वज़न में ३० प्रतिशत अधिक, कठोरता में ५० प्रतिशत और २० से ३० प्रतिशत के लगभग मज़बूती में अधिक है। चोट सहने में यह सागौन से ४० प्रतिशत बढ़कर है। देहरादून में साल की शक्ति के बारे में जो जाँच हुई उससे पता चला कि उत्तर प्रदेश और बंगाल का साल मध्य प्रदेश के साल से मज़बूत होता है। मकाई साल की अपेक्षा बहुत कमज़ोर लकड़ी है। कठोरता और मज़बूती में यह सागौन से २०-२५ प्रतिशत कम है।

पायदारीः—साल बहुत दिनों तक चलनेवाली लकड़ी है। इसके रेलवे स्लीपर १६ से १८ साल तक चलते हैं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में साल के ६ टुकड़े ६ वर्ष तक ठीक रहे जिनमें

से ४ पर कुछ कुकुरमुत्ता (बदरंगी) का असर हुआ था। इसकी कच्ची लकड़ी बहुत जल्द नष्ट हो जाती है। इसलिए इसे रक्षात्मक मसाले के बिना काम में न लाना चाहिये। इसकी पक्की लकड़ी मसाले को नहीं सोखती। मकाई कम पायदार लकड़ी है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके सब टुकड़े ५ वर्ष के भीतर नष्ट हो गये। यह रक्षात्मक मसाले को ग्रहण कर लेती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—साल की सूखी लकड़ी चीरने और काम करने में अवश्य मेहनत लेती है, परन्तु गीली लकड़ी की चिराई-कटाई अधिक कठिन नहीं। साल के रेशे मोटे और भद्दे होते हैं और काम करने में खुरदुरे लगते हैं। क्योंकि साल अधिकतर मोटे कामों और इमारती आवश्यकताः की लकड़ी है जिनमें सफ़ाई और चमक की इतनी आवश्यकता नहीं। मकाई की चिराई और कटाई सरल है। इस पर सफ़ाई भी साल से अच्छी आती है और यह बारीक कामों में भी प्रयोग की जा सकती है।

प्रयोगः—साल का इस्तेमाल बहुत है। साल ही के रेलवे स्लीपर ऐसे होते हैं जिन्हें रक्षात्मक मसाले के बिना भी पूरे विश्वास के साथ इस्तेमाल किया जाता है। यह बड़े-बड़े इमारती कामों में भी लाई जाती है। इसमें से शहतीर, कड़ियाँ, बर्गे, बल्लियाँ, पुलों और गाड़ियों की लकड़ी अच्छी निकलती है। औज़ारों के दस्ते और खेमों की खूटियाँ भी अच्छी बनती हैं। यह उत्तरी भारत, पूर्वी भारत और मध्यभारत की एक बहुत ही काम आनेवाली और खेतीबाड़ी के काम की लकड़ी है। इसके विपरीत मकाई अपने पैदावारी क्षेत्रों से दूर बहुत कम प्रसिद्ध है। "नार्थ आसाम टिम्बर मिल्स" मकाई के शहतीर, बर्गे और तख़्ते बाहर काफ़ी सप्लाई करती है जो इमारती कामों और फ़र्नीचर में ख़र्च होते हैं। मकाई की प्लाईउड भी अच्छी बनती है जिससे चाय के पैकिंग बक्स बनाये जाते हैं।

मिलने का स्थानः—साल की लकड़ी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बंगाल, आसाम और बिहार उड़ीसा से लट्ठों, स्लीपरों, शहतीरों, वर्गों और बल्लियों के रूप में बहुत मिलती है।

जानकारी के लिये समीप के किसी कंसर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये। मकाई केवल आसाम में पैदा होती है। इसके बारे में फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन अफ़सर, आसाम को लिखना चाहिये।

दरः—साल की लकड़ी विभिन्न नापों में कम और ज्यादा क़ीमत पर बिकती है जो २५ रु० प्रति टन से लेकर १२५ रु० प्रति टन तक हो सकती है। अच्छे लट्ठे आमतौर पर ५० रु० से ६० रु० प्रति टन बिकते हैं। रैलवे स्लीपर ५ रु० प्रति स्लीपर के हिसाब से मिलते हैं।

मकाई के लट्ठे आसाम में ५० रु० प्रति टन मिलते हैं। चिरी हुई लकड़ी १ रु० ८ आ० प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मिल सकती है (सन् १९३७)

स्टरक्यूलिया कैमपेन्युलाटा (Sterculia campanulata)

व्यापारिक नामः—पपीता।

देसी नामः—पपीता, साविया (बर्मा)

वज़नः—२१ से २५ पौ० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—पपीते की लकड़ी का असली रंग सफ़ेदी लिये हुए बादामी होता है। यदि पेड़ को गिराने के बाद तुरन्त ही चिरवा कर न सुखा लिया जाय तो इसमें जल्दी कुकुरमुत्ता का प्रभाव हो जाता है। और नीले रंग की बदरंगी पैदा हो जाती है। इस लकड़ी में कोई विशेष गंध या स्वाद नहीं होता। यह लकड़ी बहुत हलकी, सीधी और मोटे रेशों की होती है। यह हलके पैकिंग बक्सों और दियासलाइयाँ इत्यादि बनाने के लिये उपयुक्त लकड़ी है।

सुखाईः—पपीते की लकड़ी को गलने और बदरंगी से बचाने

के लिये जल्दी से जल्दी सुखाने का उपाय करना चाहिये इसलिये इसको किल्न में सुखाना अच्छा है। यदि किल्न में सुखाना सम्भव न हो तो लकड़ी को गर्म और शुष्क मौसम में चिरवा कर खूब हवादार जगह में चट्टा लगाना चाहिये और अच्छा तो यह होगा कि लकड़ी का चट्टा लगाने से पहले लकड़ी को दो एक दिन धूप दिखा देनी चाहिये। यह बात नर्म लकड़ियों को सुखाने के बारे में पहले बताई जा चुकी है। यदि पपीते की लकड़ी को जल्दी से सुखाया जाय तो फटने का कोई डर नहीं रहता परन्तु सीले मौसम में बदरंगी (कुकुरमुत्ता) और कीड़े का डर अवश्य होता है।

मज़बूती:--पपीता मज़बूत लकड़ी नहीं है और जहाँ कठोरता और टिकाऊपन की आवश्यकता हो, इसे प्रयोग में न लाना चाहिये। पपीता शक्ति में लगभग सेमल के समान है और इससे साधारण आवश्यकताओं के पैकिंग बक्स बनाये जा सकते हैं। मोटी प्लाईउड के बीच में भराव करने के लिये भी यह बहुत हल्की और अच्छी लकड़ी है।

पायदारी:—पपीता जल्दी नष्ट हो जानेवाली लकड़ी है परन्तु अच्छी तरह सुखा लेने के बाद रक्षात्मक मसालों के साथ भीतरी कामों में यह अधिक समय तक चल जाती है। यह मसाले को अच्छी तरह सोखती है, यहाँ तक कि साधारण ब्रुश से लेप करने से भी काफ़ी मसाला पी लेती है।

औज़ारों से अनुकूलता:—औज़ारों के लिये पपीता एक सरल लकड़ी है। इस पर सफ़ाई भी अच्छी आती है परन्तु पालिश के स्थान पर रंग अच्छा चढ़ता है।

प्रयोग:—पपीता पैकिंग बक्स और दियासलाई बनाने के लिये उपयुक्त लकड़ी है और यह प्लाईउड में भराव की लकड़ी के रूप में भी अच्छी रहती है। यह "बालसा" के स्थान पर काम में लाने के लिये अच्छी लकड़ी है, यद्यपि उतनी हलकी और कोमल नहीं

होती। इस समय तक पपीते की लकड़ी अधिकतर दियासलाइयाँ बनाने और पैकिंग बक्सों में प्रयोग की जाती है।

मिलने का स्थानः—यह अधिकतर अण्डमान से प्राप्त होती है। बर्मा में भी काफ़ी होती है परन्तु सब दियासलाई के कारबार में वहीं की वहीं ख़त्म हो जाती है। कलकत्ते में आमतौर पर इसके लट्ठे आते हैं। परन्तु चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर पोर्ट ब्लेयर अण्डमान को लिखने से यह चिरी हुई लकड़ी के रूप में भी मिल सकती है।

दरः—पपीते की क़ीमत (पोर्ट ब्लेयर के बन्दरगाह पर) ३० रु० प्रति टन है (सन् १९३८)। स्टरक्युलिया अलाटा पपीते से मिलती-जुलती एक दूसरी लकड़ी है जो मद्रास और बंगाल में पाई जाती है। मज़बूती और सफ़ाई में यह पपीते से कुछ अच्छी होती है।

स्विनटोनिया फ़्लोरीबन्डा (Swintonia floribunda)

व्यापारिक नामः—सिविट। देसी नामः—सिविट, टाँग थाएट या शिटिल (बर्मा)

वज़नः—३८ से ४१ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह लकड़ी सफ़ेदी लिये हुए भूरे रंग की होती है जिसमें कहीं-कहीं कुछ लाली की झलक होती है। कच्ची और पक्की लकड़ी में कोई विशेष अन्तर नहीं होता। इसमें कोई विशेष गंध और स्वाद भी नहीं होता। यह औसत दर्जे के घने और सीधे रेशों की लकड़ी है। देखने में बहुत कुछ आम की लकड़ी से मिलती-जुलती है। यह मध्यम श्रेणी की भारी और प्रत्येक कामों की अच्छी लकड़ी है।

सुखाईः—सिविट के सुखाने में कोई कठिनाई नहीं होती। गीली दशा में रोके रखने से इसको कुकुरमुत्ता (बदरंगी) और बीभन लगने लगती है इसलिये इसको जल्दी सुखाना चाहिये। लट्ठों को गीला ही चिरवा कर एक अच्छे हवादार गोदाम में छीदा

छोटा चट्टा लगवा देना चाहिये। ऐसी लकड़ी किल्न में भली प्रकार सूखती है।

मज़बूती:—सिविट सागोन से कुछ हलकी और उससे लगभग ३० प्रतिशत नर्म है। इसी प्रकार और शक्तियों में भी यह सागोन से २० से २५ प्रतिशत कम है। यह मध्यम श्रेणी की मज़बूत और हलकी लकड़ी है।

पायदारी:—यह अधिक टिकाऊ लकड़ी नहीं है और देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके सबके सब टुकड़े १½ वर्ष में दीमक से नष्ट हो गये। परन्तु रक्षात्मक मसालों द्वारा यह अच्छी लकड़ी हो सकती है, क्योंकि मसालों को यह भली प्रकार सोख लेती है।

औज़ारों से अनुकूलता:—औज़ारों के लिये यह नर्म और सरल लकड़ी है। इस पर सफ़ाई काफ़ी आती है और यह कील को भी खूब पकड़ती है। इसकी प्लाईउड भी अच्छी बनती है। परन्तु शर्त इसकी यह है कि लट्ठों को कीड़े और बदरंगी से सुरक्षित दशा में कारखाने तक पहुँचा दिया जाय।

प्रयोग:—सिविट कई एक कामों के लिये एक अच्छी लकड़ी है। यह सन्दूकों के लिये उत्तम प्रकार की लकड़ी नहीं, क्योंकि इसका रंग इस काम के लिये अधिक उपयुक्त नहीं। चटगाँव (बंगाल) में सिविट नावें बनाने की प्रसिद्ध लकड़ी है और मकान बनाने में काफ़ी प्रयोग में लाई जाती है। दियासलाइयाँ बनाने की भी यह अच्छी लकड़ी है। और रक्षात्मक मसाले के साथ हर प्रकार से विश्वसनीय सिद्ध हो सकती है।

मिलने का स्थान:—सिविट चटगाँव और बर्मा के जंगलों से प्राप्त होती है और ८ फ़ीट तक की गोलाई के अच्छे लम्बे लट्ठे मिल जाते हैं। जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन अफ़सर बंगाल और बर्मा को लिखना चाहिये।

दरः—बंगाल में २५ रु० से ३८ रु० प्रतिटन और बर्मा में इससे कुछ कम भाव पर यह मिल जाती है (सन् १६३७)।

टेक्टोना ग्रान्डिस (Tectona grandis)

व्यापारिक नामः—टीक। देसी नामः—सागोन, सागवान, टीकू इत्यादि।

वज़नः—३८ से ४३ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी भुसैली सफ़ेद और पक्की हलकी सुनहरी भूरे रंग की होती है। बर्मा और दक्षिणी भारत का सागोन रंग में कुछ हलका और सीधे रेशोंवाला होता है।

मध्य प्रदेश और बम्बई की टीक गहरे रंग की और बहुधा काले रंग की धारियाँ लिये होती है। सागोन की लकड़ी चिराई के बाद हवा लगने और सूखने पर गहरा रंग पकड़ती जाती है। इस लकड़ी में एक विशेष प्रकार की गंध होती है परन्तु कोई स्वाद नहीं होता। लकड़ी छूने में चिकनी मालूम होती है, यद्यपि रेशे मोटे होते हैं।

सुखाईः—टीक हवा और किल्न में दोनों प्रकार सरलता से सूख जाती है। अच्छे हवादार गोदाम में नियमानुसार खुला चट्टा लगा देना इसको सुखाने का अच्छा ढंग है।

मज़बूतीः—पुस्तक के अंत में दिये हुए नक़शे में सागोन की लकड़ी की विशेषताओं को १०० का दर्जा देते हुए दूसरी लकड़ियों की उससे तुलना की गई है जिससे पता चल सकता है कि कौनसी लकड़ी सागोन की तुलना में कैसी है। सागोन को इसलिये चुना गया है कि वह अधिक भारी न होते हुए भी मज़बूती, पायदारी और अपना रूप ज्यों का त्यों बनाये रखने में सबसे उत्तम लकड़ी है।

पायदारीः—सागोन की पक्की लकड़ी प्राकृतिक रूप से बहुत दिनों चलनेवाली सिद्ध हुई है। अधिक समय तक इस पर दीमक या

और किसी प्रकार के कीड़े का कोई प्रभाव नहीं होता। फिर भी कुकुरमुत्ता (बदरंगी) सागौन पर भी अपना असर डाले बिना नहीं रहती, बिशेष रूप से गीली दशा में। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में टीक के ६ टुकड़े ६ वर्ष के भीतर सब कुकुरमुत्ते से ख़राब हो गये। फिर भी अच्छे प्रकार की टीक सब बातों को देखते हुए अधिक टिकाऊ लकड़ी है। कच्ची लकड़ी अवश्य दीमक इत्यादि से जल्दी नष्ट हो जाती है। परन्तु रक्षात्मक मसाले से इसकी रक्षा की जा सकती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—सागौन औज़ारों के बहुत अनुकूल और हर काम में एक आराम देनेवाली लकड़ी है। इसीलिए बढ़ईख़ाने में यह सर्वप्रिय लकड़ी समझी जाती है। इस पर सफ़ाई खूब आती है और पालिश भी अच्छा खिलता है। इसकी प्लाईउड भी बहुत अच्छी बनती है और बारीक चिरी हुई तख़्तियों (veneers) का यूरप में सजावटी कामों में अधिक प्रयोग है। अब हिन्दुस्तान में भी इनका काफ़ी चलन हो गया है।

प्रयोगः—टीक बहुत से कामों में लाई जाती है। फ़र्नीचर के लिये यह एक उत्तम लकड़ी है और रेलगाड़ियाँ बनाने के लिये भी यह विशेष रूप से उत्तम है। जहाज़ों के बनाने के लिये भी यह बहुत अच्छी लकड़ी समझी जाती है। इसकी सर्वप्रियता का मुख्य कारण यह है कि सागौन अपना रूप ज्यों का त्यों स्थिर रखती है। बर्मा और दक्षिणी भारत की टीक मध्य प्रदेश और बम्बई के सागौन से मज़बूत होती है, यद्यपि सुन्दरता में उससे कम होती है।

मिलने का स्थानः—मद्रास, बम्बई, कुर्ग, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बंगाल, बर्मा और कई एक मध्य भारत की रियासतों में टीक काफ़ी पैदा होती है। जानकारी के लिये किसी समीप के कन्सर्वेटर को लिखिये।

दरः--टीक की क़ीमत बाज़ार की दशा और माँग के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। बल्कि यह समझना चाहिये कि टीक ही के भाव से आप दूसरी लकड़ियों की क़ीमतों का अन्दाज़ा कर सकते हैं। साधारणतया अच्छे प्रकार की लकड़ी १२० रु० से १५० रु० प्रति टन बिकती है (सन् १६३७)।

टर्मिनेलिया अर्जुना (Terminalia arjuna)

व्यापारिक नामः--अर्जुन। देसी नामः—वेला मरुतू (मलाबार)

वज़नः--४७ से ५० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः--कच्ची लकड़ी हल्के गुलाबी और पक्की भूरे रंग की होती है जिसमें कुछ गहरे रंग की धारियाँ भी होती हैं। लकड़ी में कोई विशेष गंध व स्वाद नहीं होता। रेशे अनियमित घूमे हुए और मोटे होते हैं। अर्जुन मध्यम श्रेणी की भारी और सजावटी कामों की लकड़ी है। अच्छी तरह छाँटी हुई लकड़ी अलमारियाँ इत्यादि बनाने के लिये बहुत बढ़िया होती है, नहीं तो आमतौर पर यह एक इमारती लकड़ी है।

सुखाईः—अर्जुन कुछ कठिनता से सूखती है और सूखने में पेंठती और फटती है। इसलिये इसको गीली दशा में चिरवाकर गोदाम के भीतर खुला चट्टा लगाकर ऊपर से भारी शहतीरों से दबा देना चाहिये जिससे कि लकड़ी पेंठ न सके। यह किल्न में भली प्रकार सूखती है।

मज़बूतीः--अर्जुन सागोन की तुलना में १०-१५ प्रतिशत अधिक भारी और ३५ प्रतिशत अधिक कठोर है। चोट सहने में भी यह उससे ३५ से ४० प्रतिशत अच्छी है परन्तु दूसरी शक्तियों में यह सागोन से २५ प्रतिशत कम है।

पायदारीः—अर्जुन की कच्ची लकड़ी बहुत जल्दी नष्ट हो जाती है और बिना मसाला दिये इसे काम में न लाना चाहिये। पक्की लकड़ी अवश्य टिकाऊ होती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग

में इसके कुछ टुकड़े ७ वर्ष बाद भी अच्छी दशा में पाये गये। इसकी पक्की लकड़ी रक्षात्मक मसाले को कम ग्रहण करती है।

औज़ारों से अनुकूलता:—औज़ारों के लिये यह लकड़ी कुछ सख़्त है, परन्तु यदि थोड़ी मेहनत सहन कर ली जाय तो इस पर अच्छी सफ़ाई आ सकती है। ख़रादी चीज़ों के लिये भी यह ठीक है और पालिश भी इस पर ख़ूब चढ़ता है। प्लाईउड के लिये अभी इस पर प्रयोग नहीं किया गया। परन्तु विचार किया जाता है कि प्लाईउड की अपेक्षा इसकी बारीक चिरी हुई तख़्तियाँ अच्छी बन सकेंगी।

प्रयोग:—अभी तक अर्जुन की लकड़ी को अधिकतर बैल-गाड़ियाँ या कृषि-उपकरण बनाने में प्रयोग किया जाता है। फ़र्नीचर के लिये अभी इसको काम में नहीं लाया गया है। इसकी अच्छी लकड़ी अवश्य फ़र्नीचर के काम आ सकती है। कपड़ा बुनने के कारख़ानों के लिये इसकी ढरकियाँ (शटल) भी अच्छे बनेंगे।

मिलने का स्थान:—बिहार, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश से अर्जुन काफ़ी मिलती है। दक्षिणी भारत में भी यह पश्चिमी किनारे पर पाई जाती है। आमतौर पर ७ फ़ीट तक गोलाई के लट्ठे मिलते हैं। जानकारी के लिये उपरोक्त प्रान्तों से पूछना चाहिये।

दर:—१५-१६ रु० प्रति टन (सन् १६३७)

टर्मिनेलिया बेलेरिका (Terminalia belerica)

व्यापारिक नाम:—बहेड़ा। देसी नाम:—बहेड़ा, थारी (कुर्ग)

वज़न:—३७ से ४८ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशा:—यह पीलापन लिये हुए बादामी रंग की लकड़ी है। जिसकी कच्ची और पक्की लकड़ी में कोई अन्तर नहीं होता। लकड़ी में कोई गंध या स्वाद भी नहीं होता। रेशे सीधे और मोटे होते हैं। यह अधिक मज़बूत लकड़ी है, परन्तु बहुत दिन नहीं चलती। इस पर जल्दी कीड़ों और कुकुरमुत्ते (बदरंगी)

का प्रभाव हो जाता है। इसलिये यदि इस लकड़ी को रक्षात्मक मसाले द्वारा शोधित कर लिया जाय तो यह अवश्य एक उत्तम लकड़ी हो सकती है।

सुखाईः—यह सूखने में आसान है, परन्तु यदि इसे जल्दी न सुखाया जाय तो बदरंगी ले आती है और खराब होने लगती है। इसलिये इसको गीली दशा में चिरवा कर गोदाम में छीदा चट्टा लगवाकर जल्द सुखा लेना चाहिये। यह किल्न में अधिक सरलता से सूखती है।

मज़बूतीः—इस पर देहरादून में जो शक्ति सम्बन्धी प्रयोग हुए उनसे पता चलता है कि लोग इसे जितनी कमज़ोर लकड़ी समझते थे उससे यह कहीं अधिक मज़बूत है। कदाचित् इसके बारे में यह विचार इसलिये हो कि यह कुकुरमुत्ते और कीड़े से सुरक्षित नहीं रहती, नहीं तो यह और कई शक्तियों में सागौन के बराबर है।

पायदारीः—जैसा कि ऊपर बताया गया है। यदि गीली दशा में हो तो बहेड़े की लकड़ी पर कीड़े और कुकुरमुत्ते का प्रभाव होने लगता है, परन्तु यदि जल्दी से सुखा ली जाय तो इस दोष से बच सकती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके टुकड़े ४½ वर्ष रहे। यह रक्षात्मक मसाले को बड़ी अच्छी तरह सोखती है और मसाले द्वारा इसकी आयु बढ़ाई जा सकती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—बहेड़े की लकड़ी चिराई-कटाई में सरल है, परन्तु इस पर सफ़ाई कठिनता से आती है। क्योंकि इसके रेशे बारीक नहीं होते इसलिये इसकी प्लाईउड अच्छी बनती है।

प्रयोगः—जिन जगहों में अच्छी लकड़ियाँ सरलता से प्राप्त नहीं होतीं वहाँ बहेड़ा उत्तम इमारती लकड़ी समझी जाती है। इसके तख़्ते बहुत साफ़ होते हैं। पैकिंग बक्स बनाने के लिये भी यह ठीक रहती है और रक्षात्मक मसाले के साथ और भी कई कामों के लिये अच्छी सिद्ध हो सकती है।

मिलने का स्थानः—बहेड़ा सारे दक्षिणी भारत, मध्य भारत और पूर्वी भारत में थोड़ा-थोड़ा हर जगह पाया जाता है। इसके लगातार जंगल नहीं होते। इसके लट्ठे काफ़ी बड़े और मोटे होते हैं। मद्रास प्रान्त के पच्छिमी किनारे पर यह एक अच्छी व्यापारिक लकड़ी समझी जाती है। और उधर के सब बंदरगाहों पर मिलती है। जानकारी के लिये बम्बई, मद्रास, आसाम, बंगाल और उत्तर प्रदेश के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखना चाहिये।

दरः—बम्बई में इसका भाव २५ रु० से ७० रु० प्रति टन तक है। आसाम और बंगाल में २० से ४० रु० प्रति टन और यू० पी० (उत्तर प्रदेश) में लगभग २५ रु० प्रतिटन तक है (सन् १६३७)।

टर्मिनेलिया बायलाटा (Terminalia bialata)

व्यापारिक नामः—चुगलम (सिलवर ग्रेउड)

देसी नामः—चुगलम।

नोट—इस पेड़ की कच्ची लकड़ी को व्हाइट चुगलम और पक्की को सिलवर ग्रेउड कहते हैं।

वज़नः—४२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—इसकी बाहर की (कच्ची) लकड़ी पीलापन लिये हुए बादामी रंग की होती है। अधिकतर लट्ठों में अन्दर की लकड़ी, जो बहुधा अधिक चौड़ी और सुन्दर गहरे ब्राउन रंग की होती है, भूल से पक्की लकड़ी समझी जाती है। इसको इन्डियन सिलवर ग्रेउड कहते हैं। कुछ लट्ठों में यह बिलकुल मालूम नहीं होती।

इसके रेशे सीधे और मोटे होते हैं। इसमें कोई गंध या स्वाद नहीं होता। यह एक बहुत काम आनेवाली मध्यम श्रेणी की लकड़ी है। सजावटी चीज़ों के लिये और दूसरी आवश्यकताओं के लिये अच्छी लकड़ी है।

सुखाईः—यदि धीरे-धीरे और नम हवा में सुखायें तो चुगलम

बिना किसी दोष के भली प्रकार सूखती है। परन्तु इसको बहुत ज्यादा सुखा लेने के बाद प्रयोग में लाया जाय। गर्म और शुष्क स्थानों में तो यह सतह पर से और सिरों से फट जाती है। यही दोष सिलवर ग्रेउड को फर्नीचर के लिये अनुपयुक्त बना देता है। इसको गोला ही चिरवाकर ढके हुए चट्टे के रूप में सुखाना चाहिये। बल्कि यह किल्न में अधिक सरलता से सुखाई जा सकती है, क्योंकि किल्न में आवश्यकतानुसार गर्मी और नमी को घटा बढ़ा सकते हैं।

मज़बूतीः—ह्वाइट चुगलम सागोन के समान अपना रूप ज्यों का त्यों बनाये रखने में असमर्थ है, परन्तु दूसरी विशेषताओं में उसके बराबर है और किसी शक्ति में यह सागोन की अपेक्षा ५ से १० प्रतिशत से अधिक अन्तर नहीं रखती। वज़न में यह बिलकुल उसके बराबर है। इस विचार से हम कह सकते हैं कि चुगलम एक अच्छी और मज़बूत लकड़ी है।

पायदारीः—चुगलम कम टिकाऊ लकड़ी है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके ६ टुकड़े ४½ वर्ष के भीतर दीमक और कुकुरमुत्ते से नष्ट हो गये। यह रक्षात्मक मसाले को अच्छी तरह ग्रहण कर लेती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—चिराई-कटाई के विचार से चुगलम औज़ारों के अनुकूल है और इस पर काम करना सरल है। हाथ से या मशीन पर दोनों प्रकार सफ़ाई अच्छी आती है। और पालिश भी खूब चढ़ता है। मोमी पालिश इसके लिये ठीक है। इसकी प्लाईउड तो कुछ अच्छी नहीं होती, परन्तु बारीक चिरी हुई तख्तियाँ (veneers) अच्छी बनती हैं। सिलवर ग्रेउड सजावटी कामों के लिये यूरप में बहुत प्रयोग की जाती है।

प्रयोगः—सिलवर ग्रेउड हिन्दुस्तान की बहुत सुन्दर लकड़ियों में से है और यदि सावधानी से सुखाई जाय तो मकानों के अन्दर

सजावटी चीज़ों के लिये उत्तम लकड़ी है, परन्तु ह्वाइट चुगलम सजावटी काम की लकड़ी नहीं, बल्कि इमारती आवश्यकताओं में छत और फ़र्श के लिये तख़्तों के रूप में, सन्दूक़ इत्यादि बनाने, लारियों की बाडी (ढाँचे) बनाने और रेलवे के काम की लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—चुगलम अण्डमन के टापुओं से प्राप्त होती है। इसके लट्ठे अच्छे बड़े नाप के होते हैं। जानकारी के लिये चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर अण्डमन को लिखिये।

दरः—ह्वाइट चुगलम आमतौर पर ६० रु० प्रति टन बिकती है, परन्तु जिन लट्ठों में सिलवर ग्रेउड अधिक होगी उसके दाम बढ़ जायँगे (सन् १६३७)

टर्मिनेलिया मीरिओकारपा (Terminalia myriocarpa)

व्यापारिक नामः—हौलोक । देसी नामः—पानीसाज हौलोक ।

वज़नः—३६ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी हल्के बादामी रंग की और पक्की बादामी रंग की होती है जिसमें कुछ गहरी धारियाँ होती हैं, अधिक पुरानी लकड़ी और गहरा रंग पकड़ लेती है। इसमें कोई गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे सीधे और मोटे होते हैं। यह एक मध्यम श्रेणी की भारी और उपयोगी लकड़ी है। जिन टुकड़ों में लहरिया रेखाएँ हों वह फ़र्नीचर के काम की अच्छी लकड़ी है। यह दो प्रकार की होती हैं, सफ़ेद हौलोक और काली हौलोक, परन्तु दोनों लकड़ियों में अन्तर मालूम करने के लिये देहरादून में अभी अलग-अलग प्रयोग नहीं किये जा सके।

सुखाईः—टर्मिनेलिया की दूसरी लकड़ियों के समान इसका सुखाना भी कठिन नहीं। इसको गीला ही चिरवाकर अच्छे हवादार गोदाम में खुले चट्टे के रूप में लगा देना चाहिये। हौलोक किल्न में भी भली प्रकार सुखाई जा सकती है।

मज़बूतीः—यह लकड़ी वज़न में सागोन के बराबर परन्तु

मज़बूती और कठोरता में उसके ७५ से ८० प्रतिशत के लगभग है।

पायदारीः—हौलोक अधिक टिकाऊ लकड़ी नहीं है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में सफ़ेद हौलोक के सब टुकड़े ३ वर्ष बाद बेकार हो गये; परन्तु काले हौलोक के ६ टुकड़ों में से ५ तीन वर्ष बाद भी ठीक दशा में पाये गये। इससे मालूम होता है कि काली हौलोक सफ़ेद से कुछ अधिक टिकाऊ है। ये लकड़ियाँ रक्षात्मक मसाले को भली भाँति सोख लेती हैं।

औज़ारों से अनुकूलताः—इसकी चिराई-कटाई और इस पर काम करना सरल है, यद्यपि बहुत से आराकश इसकी सूखी लकड़ी को हाथ से चीरना पसन्द नहीं करते। इस पर सफ़ाई भी खूब आती है और छेदों को भर लेने के बाद पालिश भी अच्छा चढ़ता है। आसाम प्लाईउड मिल्स इनको चाय की पेटियों के लिये, प्लाईउड बनाने के लिये अधिकतर प्रयोग में लाती है। देहरादून में भी जो प्रयोग किये गये उनसे भी यही सिद्ध हुआ कि हौलोक प्लाईउड बनाने की अच्छी लकड़ी है कदाचित् इसकी चौफाड़ की हुई लकड़ी से निकाली हुई बारीक तख्तियाँ (slices) सजावटी आवश्यकताओं में भी काम आती हैं।

प्रयोगः—हौलोक स्थानीय आवश्यकताओं में, अधिकतर इमारती कामों में तख़्ते, वर्ग व शहतीरियों के रूप में बहुत खर्च होती है।

आसाम प्लाईउड मिल्स में चाय के बक्स बनाने के लिए इसकी प्लाईउड भी सफल रही है। इसका फ़र्नीचर भी अच्छा बनता है। यदि रक्षात्मक मसाला लगा दिया जाय तो रेल के स्लीपरों के लिये भी उपयोगी लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—हौलोक मुख्यतः आसाम ही से प्राप्त होती है। परन्तु कुछ बंगाल में भी होती है। इसके लट्ठे २० फ़ीट लम्बे और

८ फ़ीट तक गोल होते हैं। जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाइ-ज़ेशन अफ़सर आसाम या बंगाल को लिखना चाहिये।

दरः—आसाम में लट्ठे ४५ रु० प्रति टन और १८ इंची चौरस शहतीरियाँ १ रु० ६ आ० प्रति घनफ़ुट के हिसाब से बिकती है।

बंगाल में लट्ठों के दाम ५० रु० प्रति टन और चिरी हुई लकड़ी १०० रु० प्रति टन तक बिकती है (सन् १९३७)

टर्मिनेलिया पैनिक्युलेटा (Terminalia paniculata)

व्यापारिक नामः—किन्डल। देसी नामः—किन्डल।

पिलामारूडू (मालाबार) पूलूवे (कुर्ग)

वज़नः—४८ से ४९ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी मैले सफ़ेद या हलके भूरे रंग की होती है और पक्की गहरे बादामी रंग की। लकड़ी में कोई गंध या स्वाद नहीं होता। रेशे सीधे और मध्यम श्रेणी के घने होते हैं। यह एक अच्छी इमारती लकड़ी है जो दक्षिणी भारत में अति प्रसिद्ध और प्रचलित है। यद्यपि उत्तरी भारत में यह विशेष प्रचलित नहीं। कारण यह है कि यह लकड़ी कुछ कठिनता से सूखने वाली है जिससे नम जलवायु वाले स्थानों में तो इसको सुखाने में सरलता रहती है, परन्तु शुष्क स्थानों में इसमें दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

सुखाईः—गरम स्थानों में किन्डल को यदि सावधानी से न सुखाया जाय तो वह फटती और चिटकती है, परन्तु नम जलवायु में यह ठीक सूखती है। इसको गीला ही चिरवाकर गोदाम के भीतर चट्टा लगाना और ढक कर धीरे-धीरे सुखाना चाहिये। गर्म और शुष्क स्थानों में यह लकड़ी किल्न में अच्छी प्रकार सुखाई जा सकती है।

मज़बूतीः—किन्डल सागोन से कुछ भारी और १० से २० प्रति-शत अधिक कठोर है। देहरादून में इसके शक्ति संबंधी प्रयोगों में

मद्रास से आई हुई किन्डल, बम्बई वाली से अच्छी साबित हुई। "मद्रास किन्डल" के परीक्षाफल सागोन से ५ से १० प्रतिशत अधिक अच्छे थे और बम्बई किन्डल के नतीजे सागोन से १०-१५ प्रतिशत कम थे। फिर भी अपने भारीपन के विचार से यह एक अच्छी और मज़बूत लकड़ी है।

पायदारी—किन्डल द्वितीय श्रेणी की टिकाऊ लकड़ियों में से है। इसके बिना मसाला दिये हुए रेल के स्लीपर ५ से १० वर्ष तक चले। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में यह ५ वर्ष तक दीमक इत्यादि से सुरक्षित रही। किन्डल रक्षात्मक मसाले को कम सोखती है (केवल ४ से ५ पौं० प्रति घनफुट के लगभग)।

औज़ारों से अनुकूलताः—किन्डल की चिराई-कटाई में अधिक कठिनाई नहीं होती परन्तु रेशे मोटे होने के कारण इस पर सफ़ाई लाने में कुछ मेहनत अवश्य पड़ती है। इस पर पालिश भी अच्छा चढ़ता है। यह प्लाईउड बनाने के लिये अच्छी नहीं।

प्रयोगः—भारत के दक्षिण पश्चिमी तट पर किन्डल अच्छी इमारती लकड़ी समझी जाती है और लोग इसे निश्चिन्तता के साथ सागोन के स्थान पर प्रयोग में लाते हैं। रेलगाड़ियाँ और नाव बनाने में भी बहुत काम आती है, परन्तु उत्तरी भारत में इसको एक फटनेवाली लकड़ी समझा जाता है जो किसी अंश तक मिथ्या है। यदि किन्डल को किसी स्थान के उपयुक्त जलवायु के अनुसार सुखाया जाय तो वह फटने से सुरक्षित रह सकती है और बहुत अच्छी इमारती लकड़ी सिद्ध हो सकती है।

मिलने का स्थानः—यह बम्बई और मद्रास के दक्षिण पश्चिमी प्रान्तों से पर्याप्त मात्रा में मिल सकती है। इसके लट्ठे लम्बे और मोटे होते हैं। जानकारी के लिये चीफ़ कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट पूना और बम्बई या फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन अफ़सर चीपाक (मद्रास) को लिखना चाहिये।

दर:—इसके लट्ठे बम्बई के फ़ारेस्ट डिपो से ३६ से ५० रु० प्रति टन और मद्रास के पश्चिमी फ़ारेस्ट डिपो से २० से ३० रु० प्रति टन तक मिल सकते हैं (सन् १९३७)।

टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा (Terminalia tomentosa)

व्यापारिक नाम:—लारेल। देसी नाम:—असना सैन, आसन मुत्ती (कुर्ग), साजर (मध्य प्रदेश), करिमारादु (तामिल), पकासाज (बंगाल)।

वज़न:—४६ से ६० पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशा:—कच्ची लकड़ी कुछ बादामी सफेद और पक्की, कभी हलके भूरे रंग की कभी लालीपन लिये हुए भूरे रंग की होती है जिसमें गहरे रंग की धारियाँ भी होती हैं। लकड़ी में कोई स्वाद या गन्ध नहीं होता। रेशे सीधे और कुछ मोटे होते हैं। यह भारत में हर जगह मिलनेवाली लकड़ियों में से है जो देश के बहुत से भागों में अत्यन्त प्रसिद्ध है। यह खूब मज़बूत, कठोर और टिकाऊ लकड़ी है। अपनी गहरे रंग की धारियों के कारण यह बहुत सुन्दर और सजावटी मालूम होती है। यदि इसके सूखने में कठिनाई न होती तो यह भारत की एक बहुत ही उत्तम लकड़ी समझी जाती। अपनी सुन्दरता के कारण लारेल संसार भर में प्रसिद्ध है।

सुखाई:—दुख है कि लारेल कठिनाई से सूखनेवाली लकड़ी है और विशेषतः मोटे नाप में। गर्म और शुष्क मौसम में सुखाने या सुखाने में जल्दी करने से यह सतह पर से फटती और ऐंठती है। इसलिये अच्छा तो यह है कि इसको सम जलवायु बल्कि नम मौसम में गीला ही चिरवा कर सावधानी से गोदाम में चट्टा लगा-कर ढक देना चाहिये और धीरे-धीरे सुखाने का प्रयत्न करना चाहिये। इस प्रकार यदि उचित सावधानी से काम लिया जाय तो लारेल बिना किसी दोष के भली प्रकार सूखती है जैसा कि देहरादून में प्रयोग किया गया है।

किल्न में यह बहुत अच्छी तरह सूखती है और यदि अधिक चौड़े तख्ते भी हों तो कोई दोष उत्पन्न नहीं होता।

मज़बूती:—लारेल सागौन से २५ से ३० प्रतिशत भारी और ५० से ६० प्रतिशत अधिक कठोर है। दूसरी शक्तियों में यह सागौन से ५ से १० प्रतिशत के लगभग कम है। चोट सहने में यह सागौन से बहुत बढ़-चढ़कर है। तात्पर्य यह है कि यह एक अच्छी और मज़बूत लकड़ी है।

पायदारी:—इसकी पक्की लकड़ी बहुत दिन चलनेवाली होती है। अच्छे वातावरण में यह बहुत दिनों तक दीमक और फफूँदी से अपनी रक्षा कर सकती है, परन्तु प्रतिकूल अवस्था में अवश्य जल्दी खराब होने लगती है। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में लारेल के टुकड़े ७½ वर्ष तक स्थिर रहे और इसके रेलवे स्लीपर भी बिना किसी मसाले के ५ से ८ वर्ष तक चले। लारेल दबाव द्वारा काफ़ी मसाला सोख सकती है अर्थात् १७५ पौंड प्रति वर्ग-इंच के दबाव पर ८ से ९ पौं० प्रति घनफुट तक रक्षात्मक मसाला खपा लेती है।

औज़ारों से अनुकूलता:—लारेल के साफ़ और सीधे टुकड़ों पर तो काम करना कुछ कठिन नहीं, परन्तु बहुत कठोर और आड़े रेशोंवाली लकड़ी पर अवश्य बहुत मेहनत पड़ती है और सफ़ाई लाने में बहुत कुछ हाथ से रन्दा करने की आवश्यकता होती है, परन्तु खराद के लिये यह अच्छी लकड़ी है। सफ़ाई के बाद इस पर पालिश अच्छी होती है। यह प्लाईउड के लिये उपयुक्त लकड़ी नहीं है, परन्तु गहरी धारियोंवाले अच्छे लट्ठों में से चिरी हुई बारीक तख़्तियाँ सजावटी कामों के लिये बहुत सुन्दर होती हैं। इस बात में यह लकड़ी सुन्दर से सुन्दर वालनट की तुलना कर सकती है।

प्रयोग:—लारेल लगभग समस्त भारत में गृह-निर्माण कार्य के लिये बरगे, कड़ी, बत्ते और तख़्ते बनाने में काम आती है। यह

बैलगाड़ियाँ, कृषि उपकरण, खानों में काम आनेवाले खम्भे, रेलगाड़ी के फ़र्श, औज़ारों के दस्ते, बिजली के केसिंग, रेलवे स्लीपर्स आदि अनेक अन्य कामों में भी बरती जाती है। छाँटी हुई धारीदार लकड़ी योरुप में कैबिनट बनाने की विशेष सुन्दर लकड़ी समझी जाती है। जब लकड़ी के टुकड़े जोड़-जोड़कर बनी हुई तख़्ती पर परत (veneers) चिपकाकर लैमिनेटेड वुड बनाई जाती है तो सुन्दरता में प्रायः अन्य कोई लकड़ी धारीदार लारेल की समता नहीं कर सकती।

मिलने का स्थानः—यह भारत की आम लकड़ियों में से है और लगभग देश के प्रत्येक भाग में पाई जाती है। पंजाब, आसाम और सिन्ध के अलावा हर प्रान्त से इसकी काफ़ी सप्लाई हो सकती है और भिन्न-भिन्न स्थानों की लारेल में भी भिन्नता पाई जाती है। जानकारी के लिये किसी समीप के कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट को लिखिये। बहुत से प्रान्तों में लारेल प्रचुर मात्रा में मिल सकती है। कुछ प्रान्तों से यह प्रबन्ध किया गया है कि वह धारीदार चुने हुए सुन्दर लट्ठे व कुन्दे भेजें।

दरः—इस लकड़ी की क़ीमत इसकी सजावटी विशेषताओं के विचार से ५० रु० प्रति टन से २५० रु० प्रति टन तक हो सकती है। बहुत से ज़िलों में अच्छी लारेल की लकड़ी ३० से ५० रु० प्रति टन तक मिल जाती है।

टेट्रामेलिस न्यूडिफ़्लोरा (Tetrameles nudiflora)

व्यापारिक नामः—बैंग। देसी नामः—भेलू (आसाम), मैनाकाट (बंगाल), पोन्थाम चीनी (मालाबार), पीरूमारा (कुर्ग), थिटपोक (अण्डमान)

वज़नः—२२ पौं० प्रति घनफुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह एक पीले बादामी रंग की लकड़ी है। इसकी पक्की और कच्ची लकड़ी में कोई अन्तर नहीं होता। इसमें न

तो कोई स्वाद होता है और न गंध। रेशे मोटे और घूमे हुए होते हैं। यह एक बहुत हलकी और नर्म लकड़ी है जो सामान बन्द करने की हलकी पेटियाँ बनाने के लिये बहुत अच्छी होती है।

सुखाईः—बैंग आसानी से सूख जाती है परन्तु इसको जल्दी ही सुखा लेना चाहिये, नहीं तो गीली दशा में यह बदरंगी और धब्बे ले आती है। इसलिये इसको गीला ही चिरवा कर तुरन्त बाहर हवा में खड़ा कर देना चाहिये जिससे अतिरिक्त नमी निकल जाय। इसके बाद पूरी सुखाई के लिये गोदाम के अन्दर छोटा और हवादार चट्टा लगा देना चाहिये। बैंग किलन में भली प्रकार सूखती है।

मज़बूताः—यह मज़बूत लकड़ी नहीं है। इसलिये इसे उन कामों में, जिनमें मज़बूती की आवश्यकता होती है, नहीं प्रयोग करना चाहिये। बैंग सेमल के समान होती है परन्तु कठोरता में उससे कुछ अधिक होती है। यह कीलों को खूब पकड़ती है इसलिये पैकिंग बक्सों के लिये बहुत उपयुक्त है।

पायदारीः—बैंग अधिक टिकाऊ लकड़ी नहीं है। इसे जल्दी कीड़ा और कुकुरमुत्ता लग जाता है, फिर भी अच्छी तरह सुखा लेने के बाद घरों में प्रयोग करने में कोई भय नहीं। यह रक्षात्मक मसाले को भी खूब सोखती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—नर्म होने के कारण बैंग औज़ारों के लिये सरल और काम करने में कम मेहनत लेने वाली लकड़ी है। यह प्लाईउड बनाने की भी एक अच्छी लकड़ी है जिससे चाय के अच्छे पैकिंग बक्स बनते हैं। आसाम में बैंग इस प्रयोजन के लिये बहुत प्रयुक्त हो चुकी है।

प्रयोगः—पैकिंग बक्सों के अतिरिक्त बैंग छतगिरी के हलके तख्तों और दूसरे घरेलू कामों के लिये एक अच्छी लकड़ी है। इससे दियासलाई भी अच्छी बनती है।

मिलने का स्थानः—बैंग आसाम, बंगाल, मद्रास और अण्डमान की एक आम लकड़ी है परन्तु हल्के कामों की एक अच्छी लकड़ी होने के कारण इसकी बहुत माँग रहती है। अण्डमान द्वीपों से यह ६०० टन और आसाम से २०० टन प्रतिवर्ष आती है। जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन अफ़सर आसाम, मद्रास या चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर पोर्ट ब्लेयर अण्डमान को लिखना चाहिए।

दरः—आसाम में इसके लट्ठे ३० रु० प्रतिटन और चिरे हुए १८ इंची चौकोर २५ फ़ीट लम्बे वर्गे १ रु० प्रति घनफ़ुट के भाव से बिकते हैं (सन् १९३७)

ट्रेविया न्यूडिफ़्लोरा (Trewia nudiflora)

व्यापारिक नामः—गुटेल। देसी नामः—गुटेल पिटाली (बंगाल)

वज़नः—लगभग २२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—यह एक हल्के बादामी रंग की लकड़ी है। इसकी कच्ची और पक्की लकड़ी में अन्तर नहीं होता। इस पर बहुधा कहीं-कहीं भूरे रंग के कुकुरमुत्ते के धब्बे पड़े होते हैं। कोई विशेष गंध या स्वाद लकड़ी में नहीं होता। यह सीधे और मध्यम श्रेणी के घने रेशोंवाली लकड़ी है। गुटेल एक हल्की पैकिंग बक्स बनाने की उपयुक्त लकड़ी है।

सुखाईः—यह सरलता से सूखनेवाली लकड़ी है। यदि जल्दी न सुखाई जाय तो इस पर बदरंगी और कुकुरमुत्ते का जल्दी प्रभाव हो जाता है। इसलिए गुटेल को चिराई के बाद जल्दी से किल्न द्वारा सुखाने का प्रबन्ध करना अधिक उचित है। किल्न में यह लकड़ी भली प्रकार सुखाई जा सकती है। परन्तु किल्न यदि न हो तो फिर ऐसा करना चाहिये कि लकड़ी को गर्म और शुष्क मौसम में कटवाया और चिरवाया जाय और बाहर एक दूसरे के सहारे खड़ा करके अतिरिक्त नमी को जल्दी से निकल जाने का अवसर

दिया जाय। इसके बाद खूब हवादार गोदाम में छीदा-छीदा चट्टा लगाकर सुखाना चाहिये और हवा के आने-जाने का पूरा पूरा प्रबन्ध होना भी आवश्यक है।

मज़बूतीः—गुटेल मज़बूत लकड़ी नहीं है। इसे मज़बूती के लिए प्रयोग में न लाना चाहिये। फिर भी यह सेमल की लकड़ी से ठोस है, और अपने क़िस्म की एक बहुत काम की लकड़ी है।

पायदारीः—यह लकड़ी टिकाऊ भी नहीं है। इसमें कुकुरमुत्ता और कीड़ा जल्दी लग जाता है। परन्तु रक्षात्मक मसाले के साथ इसकी आयु अवश्य बढ़ाई जा सकती है। क्योंकि यह मसाले को अच्छी तरह सोखती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—इसकी चिराई-कटाई और इस पर काम करना बहुत सरल है। सफ़ाई भी खूब आती है। प्लाईउड के लिये अभी गुटेल को काम में नहीं लाया गया है जिसके लिये यह अवश्य ही ठीक सिद्ध होगी।

प्रयोगः—यह पैकिंग बक्स और सन्दूक़ बनाने की एक उत्तम लकड़ी है। यदि इस पर कुकुरमुत्ते और कीड़े का प्रभाव जल्दी न पड़ता होता तो गुटेल का प्रयोग और भी अधिक होता।

फिर भी लकड़ी को किल्न में सुखाने से किसी अंश तक इस दोष से बचाया जा सकता है। कई प्रान्तों में इसको दियासलाई बनाने में भी सफलतापूर्वक प्रयोग में लाया जा रहा है। भारत में इस लकड़ी को किल्न द्वारा सुखाने का चलन जितना बढ़ता जायगा उतनी ही इस लकड़ी की माँग भी बढ़ती जायगी।

मिलने का स्थानः—गुटेल यू० पी० (उत्तर प्रदेश) और बंगाल से अच्छे बड़े नाप में प्रचुर मात्रा में मिल सकती है। उससे कुछ कम बम्बई और आसाम से भी मिलती है। जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाइज़ेशन यू० पी० (उत्तर प्रदेश), बंगाल और

आसाम या चीफ़ कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट, बम्बई को लिखना चाहिये।

दर:—यू० पी० (उत्तर प्रदेश) से गुटेल के लट्ठे लगभग १५ रु० प्रतिटन और बंगाल से १६ रु० से ४० रु० प्रतिटन लकड़ी की दशा के अनुसार मिल सकते हैं। बम्बई से ५० रु० प्रतिटन के हिसाब से मँगाये जा सकते हैं। (सन् १६३७)

वेटीरिया इन्डिका (Vateria indica)

व्यापारिक नामः—बेलापाइनी। देसी नामः—धूपा बैल्था पाइनी (कुर्ग) इसको कभी-कभी "मालाबार ह्वाइट पाइन" भी कहते हैं।

वज़नः—३६ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशाः—कच्ची लकड़ी हलके बादामी और पक्की कुछ पीलापन लिये हुए बादामी रंग की होती है। सूखने पर इसका रंग गुलाबीपन लिये हुए भूरा हो जाता है। लकड़ी में कोई गंध या स्वाद नहीं होता, रेशे मध्यम श्रेणी के घने और घूमे हुए होते हैं। बेलापाइनी एक अच्छे प्रकार की हलकी लकड़ी है जो कई एक कामों में प्रयोग की जाती है।

सुखाईः—यह भली प्रकार सूखती है, यद्यपि गीली दशा में बदरंगी और कीड़ों का प्रभाव इस पर जल्दी हो जाता है। परन्तु सावधानी से सुखा लेने पर यह अपनी दशा ठीक रख सकती है। पहले बताई गई दो लकड़ियों के समान इसे भी गीला चिरवाने के बाद कुछ दिनों तक बाहर हवा में खड़ा कर देना चाहिये जिससे कि लकड़ी की बाहरी सतह से अतिरिक्त नमी निकल जाय। इसके बाद गोदाम के अन्दर खूब फैला हुआ चट्टा लगाना चाहिये जिससे हवा अच्छी तरह आ जा सके। बेलापाइनी किल्न में अच्छी तरह सूखती है।

मज़बूतीः—अपने वज़न के विचार से बेलापाइनी अच्छी मज़बूत

लकड़ी है। यह सागोन से १५ प्रतिशत के लगभग हल्की और लचक में उसके बराबर है। दूसरी शक्तियों में यह सागोन से कम है, विशेषतया सख़्ती में उससे ४० प्रतिशत कम है।

पायदारीः—बेलापाइनी अधिक पायदार लकड़ी नहीं है इसलिये बाहरी प्रयोग में कुकुरमुत्ते और दीमक से बचाव के लिये इस पर रक्षात्मक मसाला लगा देना चाहिये। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में बिना रक्षात्मक मसाले के यह केवल दो वर्ष तक चली। इसकी पक्की लकड़ी भली प्रकार मसाला नहीं सोखती और दबाव द्वारा भी अन्दर तक मसाला नहीं पहुँचता।

औज़ारों से अनुकूलताः—काम करने के विचार से बेलापाइनी एक अच्छी लकड़ी है। इसकी चिराई सरल है और इस पर सफ़ाई भी अच्छी आती है। परन्तु रेशों के घुमाव के कारण थोड़ा हाथ से काम करने की आवश्यकता है। इस पर पालिश अच्छी चढ़ती है। इसकी प्लाई-उड भी अच्छी बनती है। दक्षिणी भारत के एक निपुण प्लाई-उड के व्यापारी के कथनानुसार इसकी प्लाई-उड इटली की प्रसिद्ध लकड़ी "गैबून" की प्लाई-उड से मिलती-जुलती है।

प्रयोगः—बेलापाइनी दक्षिणी भारत में पश्चिमी तट के साथ-साथ काफ़ी प्रसिद्ध है जहाँ यह चाय के बक्सों, पेटियों और मकानों में भीतरी कामों में प्रयोग की जाती है और तख़्तों इत्यादि के लिये भी यह प्रसिद्ध है। यह जहाज़ों द्वारा बम्बई और करांची (जो अब पाकिस्तान में है) भेजी जाती है जहाँ यह "मालाबार व्हाइट पाइन" के नाम से विलायती पाइन और "डील-उड" के स्थान पर ख़रीदी जाती है। यह दियासलाई के काम की भी अच्छी लकड़ी है।

मिलने का स्थानः—बेलापाइनी मद्रास के दक्षिण-पश्चिम कुर्ग और ट्रावनकोर में बहुतायत से पाई जाती है और अच्छे मोटे नाप

के लम्बे लट्ठों के रूप में मिलती है। जानकारी के लिये फ़ारेस्ट यूटिलाईज़ेशन अफ़सर मद्रास या चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर कुर्ग को लिखिये।

दर:—मद्रास और कुर्ग में २६ से ३१ रु० प्रति टन तक मिलती है (सन् १९३७)।

ज़ाइलिया ज़ाइलोकारपा (Xylia xylocarpa)

व्यापारिक नाम:—इरूल। देसी नाम:—इरूल, सुरया सी० पी० (मध्यप्रदेश) और बिहार।

वज़न:—५२ से ५६ पौं० प्रति घनफ़ुट। (हवा में सूखने के बाद)

लकड़ी की दशा:—कच्ची लकड़ी सुर्ख़ी लिये हुए सफ़ेद रंग की और कम चौड़ी होती है। पक्की लकड़ी का रंग भूरा होता है जो हवा लगने पर और गहरा हो जाता है। लकड़ी में कोई विशेष गंध और स्वाद नहीं होता। रेशे महीन बनावट के और कहीं-कहीं घुमे हुए होते हैं। इरूल एक उत्तम प्रकार की वज़नी और कठोर लकड़ी है।

सुखाई:—यह कठिनाई से सूखने वाली लकड़ी है और सूखने में सतह पर से चिटकने और ऐंठने लगती है इसलिये इसको धीरे-धीरे सावधानी के साथ सुखाना चाहिये। जिसका उचित ढंग यह है कि इरूल के पेड़ को बरसात के अंत में गिरवा कर तुरंत ही लट्ठों को चिरवा लिया जाय और लकड़ी को गोदाम के अन्दर ढककर चट्टा लगाना चाहिये ताकि धूप और गर्म और शुष्क हवाओं से रक्षित रह सके। इरूल को गरम व शुष्क मौसम में न चिरवाना चाहिये बल्कि लट्ठों को पानी के अन्दर या कहीं ढककर अनुकूल मौसम की आशा में रोक रखना चाहिये। यह लकड़ी किल्न में भी थोड़े टेम्परेचर पर सरलता से सुखाई जा सकती है।

मज़बूती:—इरूल बहुत कठोर और मज़बूत लकड़ी है। यह

सागोन से लगभग दुगुनी कठोर और फटने में उससे डयोढ़ी शक्ति चाहती है। दूसरी शक्तियों में यह सागोन से कुछ ही बढ़ी हुई है, जब कि वज़न में उससे २५ प्रतिशत अधिक है।

पायदारीः—इरूल अधिक समय चलनेवाली लकड़ी है। इसके बिना मसाला दिये हुए रेलवे स्लीपर ८ से १० वर्ष तक चलते हैं। देहरादून के क़ब्रिस्तानी प्रयोग में इसके ६ टुकड़े ४ वर्ष बाद भी बहुत अच्छी दशा में पाये गये। इसकी कच्ची लकड़ी सरलता से मसाले को ग्रहण करती है, परन्तु पक्की बहुत कठोर है और केवल एक से दो पौं० प्रति घनफ़ुट के हिसाब से मसाला सोखती है।

औज़ारों से अनुकूलताः—कठोर होने के कारण इरूल चिराई-कटाई में कठिन है परन्तु थोड़ी मेहनत सहन की जाय तो इस पर अच्छी सफ़ाई आती है। इसके पुराने पेड़ बीच से कुछ ख़राब निकलते हैं और सूखते समय लकड़ी बहुधा उसी स्थान से ख़राब होती है इसलिये यह उचित है कि चिराई के समय लट्ठों को उस ख़राब हिस्से से बचा कर निकाला जाय। इरूल के कोई-कोई लट्ठे बहुत सुन्दर रेशों वाले निकल आते हैं और सजावटी कामों के लिये अच्छे होते हैं।

प्रयोगः—दक्षिणी भारत में इरूल बहुत प्रसिद्ध लकड़ी है। यह बहुधा रेलवे स्लीपरों, भारी इमारती कामों, पुश्तों, रेलगाड़ियों के फ़र्श और ऐसे ही भारी कामों में लगाई जाती है। सावधानी से सुखा लेने पर इरूल एक अच्छी मज़बूत व पायदार लकड़ी सिद्ध होती है। बम्बई में इसको रक्षात्मक मसाला लगाकर सड़क पर ईंटों के स्थान पर लगाया गया और यह इस काम के लिये सफल रही।

मिलने का स्थानः—यह लकड़ी मद्रास, बम्बई और कुर्ग के प्रांतों में बहुतायत से पैदा होती है और यह सी० पी० (मध्य प्रदेश) और उड़ीसा के जंगलों में भी पाई जाती है जो दक्षिणी भारत के इरूल से घटिया समझी जाती है। जानकारी के लिये

चीफ़ कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट मद्रास, बम्बई और सी० पी० (मध्यप्रदेश) या कन्सर्वेटर आफ़ फ़ारेस्ट उड़ीसा व चीफ़ फ़ारेस्ट अफ़सर, कुर्ग को लिखना चाहिये।

दरः—मद्रास में २५ से ३४ रु० प्रति टन, बम्बई में ३२ से ५० रु० प्रति टन, सी० पी० (मध्यप्रदेश) में ५० से ७५ रु० और उड़ीसा में ३० से ४० रु० प्रति टन के भाव पर प्राप्त हो सकती है। (सन् १९३७)

छठा अध्याय

विभिन्न कार्यों के लिये उपयुक्त लकड़ियाँ

भारतवर्ष के हरेभरे जंगलों में ४,००० से अधिक प्रकार के पेड़ पाये जाते हैं। इसका यह अर्थ है कि विभिन्न कामों के लिये उपयुक्त लकड़ियों को चुनने के लिये बड़ा क्षेत्र है। गत वर्षों में काम और लकड़ी के गुणों का विचार किये बिना किसी भी लकड़ी को काम में ले लिया जाता था, जो उस प्रदेश में पैदा होती थी और सरलता से मिल जाया करती थी, क्योंकि लोगों को उन लकड़ियों के बारे में कोई जानकारी और उनसे कोई सम्बन्ध न होता था जो देश के दूसरे भागों में पैदा होती थीं चाहे वे उनकी अपनी लकड़ियों से अच्छी ही क्यों न हों।

किसी काम के लिये ठीक लकड़ी ढूँढने के लिये यह आवश्यक है कि पहले तो हम यह जानें कि उस काम में प्रयोग करने के लिये लकड़ी में क्या विशेषता होनी चाहिये, फिर इस बात के जानने की आवश्यकता है कि वे विशेषताएँ किन लकड़ियों में हो सकती हैं और इन बातों का अनुभव सरलता से नहीं किया जा सकता। लकड़ी की विशेषताएँ मालूम करने के लिए हमें उसकी शक्ति, सूखने की दशा, टिकाऊपन और औज़ारों से अनुकूलता आदि का ठीक ज्ञान अवश्य प्राप्त कर लेना चाहिये। ये चीज़ें लगातार वैज्ञानिक खोज और कार्यरूप से लकड़ी का प्रयोग और बहुत कुछ जाँच-परताल इत्यादि चाहती हैं। इसी प्रयोजन से फ़ारेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट देहरादून की यूटिलाइज़ेशन ब्रांच

स्थापित की गई है जिसमें पिछले २५ वर्षों से इन खोजों को कार्य-रूप देने के लिये बहुत से काम किये जा रहे हैं। इन जानकारियों में प्रतिदिन वृद्धि होती जा रही है, फिर भी हिन्दुस्तान में पैदा होने वाली लकड़ियों की संख्या इतनी अधिक है कि जल्दी ठीक परिणाम निकाल लेना कठिन काम है। ऐसे प्रयोगों के लिये लगातार प्रयत्नों की आवश्यकता है।

फिर भी अब तक जो जानकारी प्राप्त की जा सकी है, उसके अनुसार अब पुस्तक के शेष भाग में विभिन्न कामों के लिये उप-युक्त लकड़ियों का वर्णन किया जाता है जो लकड़ी के व्यवसाय के लिये अवश्य लाभदायक सिद्ध होगा।

(१) हवाई जहाज़ों के लिये लकड़ियाँ

हवाई जहाज़ के काम में लकड़ियों के प्रयोग के लिये कठोर नियम हैं। अभी तक केवल एक ही लकड़ी "सिटका स्प्रूस" इस काम के लिये उपयुक्त समझी गई है जो भारतवर्ष में नहीं पैदा होती। फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट में वर्षों से प्रयत्न किये जा रहे हैं कि हवाई जहाज़ के लिये कोई हिन्दुस्तानी लकड़ी ढूँढ़ी जाय। बहुत खोज करने के बाद यह मालूम हुआ है कि भारतवर्ष में पैदा होने वाली कोई-कोई "स्प्रूस" और "फ़र" की लकड़ी इस काम के लिये उपयुक्त रहेगी परन्तु अब यह प्रश्न है कि इस प्रकार के "स्प्रूस" और "फ़र" की लकड़ियाँ भारतवर्ष में कहाँ-कहाँ पाई जाती हैं और उसमें भी लकड़ी को छाँटने के क्या उपाय होने चाहियें। जैसे लकड़ी के रेशों की बनावट, सालाना बढ़ोतरी के चिह्न और आयु इत्यादि अभी विवादग्रस्त है। इन समस्याओं के हल हो जाने के बाद यह आशा की जा सकती है कि अंत में हवाई जहाज़ बनाने वाले अफ़सर इस बात पर सहमत हो जायँगे कि ये दोनों लक-ड़ियाँ विशेष ब्योरे के साथ हवाई जहाज़ के उद्योगधन्धों के लिये

उपयुक्त हैं। दूसरी लकड़ियाँ जिन पर विचार किया जा रहा है ये हैं:—बोनसम, चम्पक, पोलिपलथिया। हवाई जहाज़ के पंखों के लिये अण्डमन पडाक एक उत्तम लकड़ी मानी जा चुकी है। बाकली, धामन और लारेल हवाई जहाज़ के पीछे के ढाँचे (फ्रेम) के लिये अच्छी लकड़ियाँ हैं।

(२) कृषि उपकरण

खेतीबाड़ी के औज़ारों के आधीन बहुत चीज़ें आती हैं। परन्तु विशेषरूप से उदाहरणतया हल, दन्दानेदार सिरावन और मैड़ा आदि हैं। इन चीज़ों के लिये बहुत कठोर और मज़बूत लकड़ी की आवश्यकता होती है। बबूल, एक्सिल उड, राजबर्ख, साटिन-उड, जामुन, शीशम, धामन, तेंदू सांदन, मेसुआ, कुसुम, साल, हरूल और बेर इत्यादि कठोर लकड़ियाँ खेतीबाड़ी की हर प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा करती हैं।

(३) कुल्हाड़ी और दूसरे औज़ारों के दस्ते

इस अभिप्राय के लिये उन लकड़ियों की आवश्यकता होती है जो कठोर होने के अतिरिक्त चोट सहने में भी विश्वसनीय हों। 'ऐश' और 'हिकरी' इस काम की दो उत्तम लकड़ियाँ हैं। इन लकड़ियों के बने हुए औज़ारों के दस्ते प्रति वर्ष प्रचुर मात्रा में विलायत से हिन्दुस्तान में मँगाये जाते हैं जो काफ़ी महँगे पड़ते हैं। देहरादून में औज़ारों के दस्तों के लिये जो शक्ति सम्बन्धी प्रयोग देसी लकड़ियों पर किये गये उनसे सिद्ध हुआ कि नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ 'ऐश' और 'हिकरी' की तुलना कर सकती हैं।

योन, एक्सिल उड, धामन, चूई और कुसुम इनमें से योन और एक्सिल उड अधिक उत्तम हैं। भारतवर्ष के रेलवे विभाग ने इनको औज़ारों के दस्तों के लिये उत्तम लकड़ियों की सूची में

रख लिया है। "सुन्दरी" भी इस काम के लिये एक अच्छी लकड़ी है परन्तु अधिक भारी है और यदि नियमानुसार न सुखाई गई हो तो सतह पर से बारीक-बारीक फटने लगती है। इनके अतिरिक्त और देसी लकड़ियाँ, जो दस्तों के लिये कुछ अच्छी हो सकती हैं, ये हैं:—

बबूल, कच, लेंडी, सांदन, पिंग, बुलेट-उड, साल, करधाई इत्यादि।

करधाई एक बहुत मज़बूत लकड़ी है परन्तु यह बड़े नाप में नहीं मिलती। बढ़ई के काम के छोटे औज़ारों के लिये ये लकड़ियाँ अधिक उपयुक्त हैं:—

बौक्स उड, बर्च, शीशम, रोज़उड, गमारी और सांदन इत्यादि। दस्तों पर चिकनाहट और सफ़ाई के विचार से इनको बना लेने के बाद अलसी के तेल या मोम में डुबा लेना चाहिये। इससे लकड़ी में कुछ अधिक मज़बूती आ जाती है और उसमें ऋतु-परिवर्तन का सामना करने की शक्ति भी बढ़ जाती है।

(४) लकड़ी को मोड़कर बनी हुई चीज़ें

खेल के सामान जैसे "हाकी स्टिक" या "टेनिस रेकिट" के अतिरिक्त भारतवर्ष में लकड़ी को भाप द्वारा मोड़कर बनाई जाने वाली चीज़ों की रीति बहुत कम है। मलबरी और सेल्टिस आस्ट्रेलिस दो प्रकार की लकड़ियाँ अधिकतर उत्तरी भारत के खेलकूद का सामान बनाने वाले कारखानों द्वारा मोड़कर बनाई जाने वाली चीज़ों के लिये प्रयोग में लाई जाती हैं। कभी-कभी शीशम की लकड़ी भी इस काम में लाई जाती है। यह तीनों भाप द्वारा मोड़ी जाने वाली उत्तम लकड़ियाँ हैं।

इनके अतिरिक्त और लकड़ियाँ भी भाप द्वारा मोड़ी जा सकती हैं जैसे कि रोज़उड गमारी, लेंडी, मैंगो (आम), बीजासाल, तुन, झींगन और सिरस इत्यादि।

(५) नाव तथा पोत-निर्माण

नदियों के रास्ते और समुद्रतट पर व्यापार अधिकतर लकड़ी की देसी ढंग की बनी हुई नावों द्वारा होता है। नाव और जहाज़ बनाने के लिये बहुत पायदार, मज़बूत, लचकदार और हर प्रकार से दोषरहित लकड़ी होनी चाहिये, नहीं तो पानी की लहरों से वह बहुत जल्दी नष्ट हो जाती हैं। इन्हीं कारणों से सागोन को इस काम की उत्तम लकड़ी समझा गया है, क्योंकि सागोन बहुत ही कम घटने और बढ़ने वाली लकड़ी है। बर्मा की सबसे अच्छी सागोन 'एडमिरेलटी टीक' है जो कि जहाज़ बनाने और दूसरी सामुद्रिक आवश्यकताओं के लिये ब्रिटेन को भेजी जाती है।

विलायती 'ओक' भी जहाज़ बनाने के काम की अच्छी लकड़ी है। परन्तु इसमें एक प्रकार का तेज़ाब (टैनिक एसिड) पाया जाता है जो लोहे को खा जाता है। सागोन भी कुछ अंश तक लोहे को खाती है जिसके कारण अब लोहे वाले भाग जस्ते की कलई करके बनाये जाने लगे हैं जिन पर तेज़ाब बहुत कम असर करता है।

नीचे दी हुई लकड़ियाँ भारत की नाव बनाने की उत्तम लकड़ियों में से हैं:—

(अ) नावों के ढाँचे (फ्रेम) के लिये:—

एकेशिया अरेबिका—	जो उत्तरी और पच्छिमी भारत में नाव के लगभग प्रत्येक भाग के लिये उपयुक्त समझी जाती है।
एकेशिया केटेच्यू—	नाव के तले और बैठने के हिस्सों के लिये।
आर्टोकारपस हिरसूटा—	दक्षिणी भारत में नाव बनाने की एक उत्तम लकड़ी है।

कैलोफ़िलम इनोफ़िलम— दक्षिणी भारत में नाव बनाने की एक प्रचलित लकड़ी है।

डलबर्जिया लेटिफ़ोलिया— नाव के नुकीले भाग बनाने के लिये एक मज़बूत लकड़ी है।

डलबर्जिया सिसू— नाव के ढाँचे और नुकीले भागों के लिये उत्तम लकड़ी है।

डिपटेरोकारपस टर्बिनेटस—चटगाँव और बर्मा में नाव बनाने की प्रसिद्ध लकड़ी है।

हेरिटाइरा माइनर— पूर्वी भारत में नाव बनाने की प्रसिद्ध लकड़ी है।

होपिया की लकड़ियाँ— ये अधिक मज़बूत और टिकाऊ लकड़ियाँ हैं। होपिया पार्विफ़्लोरा ट्रावनकोर में नाव बनाने की लोकप्रिय लकड़ा है।

लेजर्स्ट्रोमिया लैन्सियोलाटा—दक्षिणी भारत में नाव बनाने की मुख्य लकड़ी है।

मैन्जीफ़ीरा इन्डिका— नाव की दीवारों के तख़्तों के लिये अच्छी लकड़ी है।

टेरोकारपस डलबरजिओॉइडीज़—नाव बनाने के लिये मज़बूत लकड़ी है।

शोरिया की लकड़ियाँ— ये नाव बनाने की मज़बूत और टिकाऊ लकड़ियाँ हैं।

थेसपेसिया पोपुलनिया— नाव के नुकीले भागों और अन्दर की पट्टियों के लिये अच्छी लकड़ी है।

ज़ाइलिया की लकड़ियाँ— नाव के निचले भागों के लिये अच्छी लकड़ियाँ हैं।

(ख) नाव के मस्तूल या स्तून

नोटः—इसके लिये सीधी, मज़बूत, लचकदार और लम्बी लकड़ी की आवश्यकता होती है।

कैलोफ़िलम टोमेन्टोसम— दक्षिणी भारत में नाव के मस्तूल के लिये काम में लाई जाती है।

कैलोफ़िलम इनोफ़िलम— यह मस्तूल के लिये अच्छी लकड़ी है।

सीडरस देवदारा— इस काम के लिये केवल उत्तरी भारत में इस्तेमाल होती है।

कैजुआरिना इक्विज़ेटीफ़ालिया—बम्बई के आसपास नाव के मस्तूल बनाने में काम आती है।

लैर्जस्ट्रोमिया लैन्सियोलाटा—दक्षिणी भारत में पच्छिमी घाट पर मस्तूल के काम की प्रसिद्ध लकड़ी है।

(ग) पतवार और चप्पू

नोटः—इस काम के लिये सीधे रेशों वाली मज़बूत, हलकी और लचकदार लकड़ी की आवश्यकता है। नीचे दी हुई लकड़ियाँ इस काम के लिये ठीक हैं:—

कैजुआरिना इक्विज़ेटीफ़ोलिया—अपनी पैदावार की जगहों में इस काम में आती है।

सीडरस देवदारा— चप्पूओं के लिये अच्छी हलकी लकड़ी है।

डिप्टेरोकारपस की लकड़ियाँ—ये भी चप्पूओं के लिये अच्छी हलकी लकड़ियाँ हैं।

फ्रेग्ज़िनस फ्लोरिबन्डा— पच्छिमी देशों की चप्पूत्रों की लकड़ी है।

ग्रेविया की लकड़ियाँ— सेनाविभाग में चप्पूत्रों के लिये मज़बूत व उत्तम लकड़ियाँ मानी गई हैं।

लैर्जस्ट्रोमिया पार्विफ्लोरा—चप्पूत्रों की अच्छी लकड़ी है।

पाइन्स की लकड़ियाँ— हलके चप्पूत्रों के लिये ठीक हैं जिनसे अधिक भारी काम न लिया जाय।

(घ) लट्ठों के बेड़े इत्यादि

इस काम के लिये सबसे अच्छी लकड़ी बालसा (ओकरोमा) है जो अमेरिका के जंगलों की एक बहुत हलकी लकड़ी है। इसका वज़न केवल ८-१० पौं० प्रति घनफ़ुट होता है परन्तु यह कम मिलती है और इसके स्थान पर अण्डमान की एक लकड़ी बकोटा (एण्डोसपरमम मेलासेन्स) इसकी अच्छी बदल हो सकती है। यद्यपि यह बालसा के समान हलकी नहीं होती फिर भी यह बहुत हलकी लकड़ियों में से है और विशेषता यह है कि यह बालसा के समान एकदम पानी को नहीं सोख लेती।

(ङ) डोंगे या लकड़ी में खोदी हुई छोटी नावें

निम्नलिखित लकड़ियाँ हिन्दुस्तान के विभिन्न भागों में इस काम में लाई जाती हैं:—

बाम्बेक्स मालाबारीकम— इसके डोंगे उसी वक्त ठीक रह सकते हैं जब कि उससे काम न लिया जाय तो उन्हें पानी में डूबा हुआ रखा जाय।

डुआबंगा सोनिरेटिऑयडीज़, मिलाइना आरबोरिया, मैंजीफ़ेरा इण्डिका, टेट्रामेलिस न्युडीफ़्लोरा और ट्रीविया न्युडीफ़्लोरा (खारे पानी में इनके डोंगे पायदार रहते हैं)।

(६) कपड़ा बुनने के बाबिन

बहुत सी देसी लकड़ियाँ बाबिन बनाने के लिये जाँची जा चुकी हैं जिनको कि "बर्च" और "बीच" की विलायती लकड़ियों के स्थान पर प्रयोग में ला सकें। परन्तु केवल एक लकड़ी हल्दू (अडाइना कार्डिफ़ोलिया) इस काम में उपयोगी सिद्ध हुई है। यह यद्यपि "बीच" के बराबर अच्छी नहीं है परन्तु भली प्रकार सुखा लेने पर विभिन्न प्रकार के बाबिनों के लिये ठीक लकड़ी है। हल्दू के अतिरिक्त और भी कई एक लकड़ियाँ बाबिनों के लिये प्रयोग में लाई जा रही हैं। "कैम" (मिट्रागाइना पार्विफ़ोलिया) और "केवड़ा" (सोनेरेशिया एपेटाला) इत्यादि अमृतसर में हाथ की बनी हुई रीलों इत्यादि के लिये "पियर उड" का प्रयोग किया जाता है। इनके अतिरिक्त और लकड़ियाँ जो बाबिनों के लिये ठीक समझी गई हैं ये हैं:—

दूधी (राइटिया टिंक्टोरिया और राइटिया टोमेन्टोसा), हूम (सैकोपिटेलम टोमेन्टोसम), कूरा (होलरहिना एंटीडाइसेन्टेरिका), झींगन (लेनिया ग्रेन्डिस), मलबरी (मोरस एल्बा और मोरस इन्डिका), कदम (एन्थोसिफ़ेलस कदम्बा), गमारी (मिलाइना आरबोरिया), चिकरासी (चुकरासिया टेबूलेरिस), साटिन उड (क्लोरौक्ज़िलन स्विटिनिया), बनाती (लोफ़ोपिटेलम वाइटिएनम), इण्डियन पॉपलर (पापुलस यूफ़्रेटिका), सलाई (बासवेलिया सराटा), अमूरा की लकड़ियाँ, ज़ेन्थोग्ज़ाइलम की लकड़ियाँ, मैलोटस फ़िलिपाइनेनसिस, मोरिन्डा टिंक्टोरिया गार्डीनिया लूसिडा, और पोंगेमिया ग्लेब्रा, इत्यादि। बाबिन बनाते समय इस

बात का ध्यान रखना चाहिये कि जो लकड़ियाँ क़ीमती हैं उनके पतले डंडों में से बाबिन निकाल ली जायँ और मोटे तने बड़े नाप की चीज़ों में काम आ जायँ अर्थात् मोटी लकड़ी में से बाबिन न बनाई जायँ जब कि वे पतली लकड़ी में से बनाई जा सकती हों। यह लकड़ी का सदुपयोग होगा और यही तरीक़ा विलायत में काम में लाया जाता है। इसके अतिरिक्त ढूँढ़ने से बाबिनों के लायक़ उम्दा लकड़ी किसी-किसी उन छोटे अनजान और अप्रसिद्ध पेड़ों से भी मिल जाती हैं जिन्हें लकड़ी की हैसियत से कोई विशेष महत्त्व प्राप्त नहीं होता और जो साधारण पौधों के रूप में उगते हैं।

(७) जूतों के फ़र्मे और एड़ियाँ

जूतों के लिये लकड़ी के फ़र्मों की हिन्दुस्तान में बहुत आवश्यकता होती है और (विशेष रूप से ज़नाने जूतों में) एड़ियाँ भी लकड़ी ही की लगाई जाने लगी हैं।

जूतों के फर्मों के लिये बहुत मज़बूत लकड़ी, अधिक कठोर और झट से टूटनेवाली भी न होनी चाहिए जिससे कि वह कीलों के बारबार ठोकने और निकालने को सहन कर सके। इस विचार से बहुत कम लकड़ियाँ ऐसी हैं जिनमें ये विशेषताएँ हों। फिर भी उत्तरी भारत में इस काम के लिये शीशम (डलबर्जिया सिसू) को बहुत पसन्द किया जाता है। इसके अतिरिक्त झींगन (लेनिया-ग्रेन्डिस), जामुन (यूजिनिया गार्डिनरी), बेर (ज़िज़ीफ़स जुजुबा), (पोलिएलथिया सीरासाइडीज़), कैम (मिट्रागाइना पार्विफ़ोलिया), गमारी (मिलाइना आरबोरिया), इहरेशिया लेविस, जारूल (लेजस्ट्रोमिया फ़्लासरेजिनि) और एसर की लकड़ियाँ जूतों के फ़र्मों के लिए अच्छी हैं।

एड़ियों के लिए आम (मेन्जीफ़ेरा इण्डिका) बहुत उपयुक्त

समझी गई है। इसके अतिरिक्त "कैम" (मिट्रागाइना पार्विफ़ोलिया), कांजू (होलोपटिलिया इन्टिग्रीफ़ोलिया), नीम चमेली (मिलिंगटोनिया हौरटेन्सिस), इन्डियन पॉपलर (पापुलस यूफ्रेटिका), सलाई (बासवेलिया सराटा), भींगन (लैनिया ग्रेन्डिस), जामुन, राइटिया और किडिया केलिसिना भी अच्छी लकड़ियाँ हैं।

हल्दू (अडाइना कार्डिफ़ोलिया) को भी एड़ियों के लिये प्रयोग में लाया जाता है परन्तु इसमें सूखा और भुरभुरापन अधिक है जिससे इसकी एड़ियाँ कील को नहीं सहन करतीं और अधिक लम्बाई में टूट भी जाती हैं।

(८) ब्रुश की लकड़ियाँ

ब्रुश कई प्रकार के बनाये जाते हैं। सिर के बालों के ब्रुश, कपड़े साफ़ करने के ब्रुश, दाँतों और हजामत के ब्रुश, फ़र्श झाड़ने के ब्रुश, वार्निश और रंग करने के ब्रुश और धातुओं को साफ़ करने के ब्रुश। हरएक ब्रुश में किसी न किसी तरह लकड़ी का प्रयोग अवश्य होता है। सजावट के ब्रुशों में एबोनी (डाइस्पायरस एबेनम), साटिन उड (क्लोरोग्ज़िलन स्विटिनिया), रोज़उड (डलबर्ज़िया लेटीफ़ोलिया), सिसू (डलबर्जिया सिसू), अण्डमन पडाक (टेरोकारपस डलबर्जिआइडीज़), चिकरासी (चुकरासिया टेबूलेरिस) इत्यादि। इससे साधारण लकड़ियों की आवश्यकता हो तो हल्दू (अडाइना कार्डिफ़ोलिया), तुन (सिडरेला तुना) मैंगो (मैञ्जीफ़ेरा इन्डिका) और कुठान (हाइमिनोडिक्टियन एक्सेलसम) ठीक हैं। दूसरे ब्रुशों के लिये नीम चमेली (मैलिंगटोनिया हौरटेन्सिस) उत्तम लकड़ी है, क्योंकि यह सुखाने और काम करने में सरल है। इस पर सफ़ाई भी अच्छी आती है। इसके बाद कुठान (हाईमिनोडिक्टियन

एक्सेलसम), "कैम" (मिट्रागाइना पार्विफ़ोलिया) और आम उपयुक्त लकड़ियाँ हैं। हजामत के ब्रुशों के लिये "कैम" ही अच्छी रहती है।

(६) गाड़ियों के लिये लकड़ियाँ

गाड़ी के विभिन्न भागों पर अलग अलग ज़ोर और दबाव पड़ता है। इसलिये गाड़ी में कई प्रकार की लकड़ियाँ लगाई जाती हैं। देहाती आवश्यकता की बैलगाड़ियों में वही लकड़ियाँ लगाई जाती हैं जो अधिकतर उसी स्थान में मिलती हैं, चाहे वे ठीक हों या न हों। बैलगाड़ी के विशेष भाग, उसका ढाँचा, धुरा, पहिये और नहा अर्थात् हब (जो पहिये के बीच का भाग है) होते हैं। ढाँचे के लिये ये लकड़ियाँ ठीक समझी जाती हैं।

यूजिनिया डलबर्जिआइडीज, डलबर्जिया सिसू, डिपटेरोकारपस, डाइसाग्ज़िलम मालाबारिकम यूजिनिया जम्बोलाना, लेजर्स्ट्रोमिया की लकड़ियाँ और टरमिनेलिया बाइलाटा इत्यादि जो मध्यम श्रेणी की मज़बूत लकड़ियाँ हैं और अधिक भारी भी नहीं हैं।

नहे, अर्थात् पहिये के बीच के हिस्से पर बहुत बोझ पड़ता है इसलिये उसको अधिक मज़बूत और कठोर लकड़ी का बनाना चाहिये, यूजिनिया डलबर्जिआइडीज़, एकेसिया अरेबिका, एकेसिया कैटेचू, हार्डविकिया बिनेटा, शोरिया रोबस्टा, मेसुआ फ़ेरिया, श्लीशिरा ट्राइजुगा, क्लोरोग्ज़िलन स्विटिनिया, होपिया पार्विफ़्लोरा और हेरिटाइरा माइनर इत्यादि नहे और धुरों की उत्तम लकड़ियाँ हैं।

पहिये के अरे, जिन्हें स्पोक्स भी कहते हैं, सीधे रेशोंवाली लकड़ी के बनाने चाहियें। इस काम के लिये उत्तम लकड़ियाँ ये हैं—

डलबर्जिया सिसू, डलबर्जिया लेटीफ़ोलिया, ग्रीविया टिलिफ़ोलिया और टेरोकारपस मारसूपियम इत्यादि। इसके अतिरिक्त

एकेसिया अरेबिका, हेरीटाइरा माइनर, एनोगाइसस लेटीफ़ोलिया, शोरिया रोबस्टा, हार्डविकिया बिनाटा और डाइस्पायरस की लकड़ियाँ भी उपयुक्त हैं।

पहियों के घेरे भी बहुत दबाव सहन करते हैं और नर्मी गर्मी, ऊबड़खाबड़, धूप और पानी इत्यादि का उन्हें बराबर सामना करना पड़ता है। इन बातों का सामना करने के लिये पहियों के घेरे कठोर, मज़बूत, टिकाऊ और लचकदार लकड़ी के बनाये जाने चाहियें। यदि संयोगवश प्राकृतिक रूप से घूमी हुई लकड़ी मिल जाय तो वह बना कर घुमाई हुई लकड़ी से अच्छी होती है। इस काम के लिये साल और बबूल को बहुतायत से प्रयोग में लाया जाता है परन्तु अच्छी लकड़ियाँ डलबर्जिया सिसू, डलबर्जिया लेटीफ़ोलिया, टेरोकारपस मारसूपियम और ग्रीविया टिलिफ़ोलिया हैं।

गाड़ी का धुरा भी मज़बूत और लचकदार लकड़ी का होना चाहिये। ग्रीविया और एनोगाइसस की लकड़ियाँ इस काम के लिये अच्छी होती हैं। साल का भी धुरा लगा लेते हैं। परन्तु साल धुरे के लिये बहुत अच्छी लकड़ी नहीं कही जा सकती। नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ उससे अच्छी हैं:—

आर्टोकारपस हिरसूटा (ऐनी), ब्राइडेलिया रेटूसा, होपिया, लेजस्ट्रोमिया, टरमिनेलिया और अलबिजिया की लकड़ियाँ।

(१०) इमारती लकड़ियाँ

इमारती लकड़ियों से आशय उन लकड़ियों से है जो मकानों के बनाने में कड़ी, तख़्तों, सरदलों और शहतीरों के काम आती हैं। ये पुलों और दूसरे इमारती कामों में भी लगती हैं। स्पष्ट है कि भारत जैसे बड़े देश में, जहाँ जंगलों की कमी नहीं, इस काम में बहुत लकड़ी खर्च होती होगी, बल्कि यह कहिये कि देश की अधिक लकड़ी इसी काम में खर्च हो जाती है।

इमारती कामों के लिये लकड़ी को मज़बूत होने के अतिरिक्त अधिक दिन चलनेवाली होने की भी आवश्यकता है। यदि ऐसा न हो तो रक्षात्मक मसाले के बिना काम में नहीं लाना चाहिये। मज़बूती और टिकाऊपन के साथ-साथ यदि लकड़ी कुछ कम भारी हो तो और भी अच्छा है। फर्शों और तख्तों के लिये लकड़ी ऐंठने, सिकुड़ने या बढ़नेवाली न होनी चाहिये और कुछ कुछ सजावटी और सुन्दर भी होनी चाहिये। ऐसी लकड़ियाँ भारत में बहुत हैं, विशेष रूप से सागौन, साल और देवदार बहुत प्रसिद्ध हैं। तीनों अच्छी मज़बूत और बहुत अंश तक दीमक का सामना करनेवाली हैं जो इस देश में लकड़ी का सबसे बड़ा शत्रु है।

इसके अतिरिक्त नीचे दी हुई उम्दा इमारती लकड़ियाँ ये हैं:—

एबीज़ पिन्ड्रो (हिमालियन सिलवर फ़र) जो वज़न में ३३ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) एक नर्म और सफ़ेद रंग की लकड़ी है। इस पर काम करना और सफ़ाई लाना आसान है। परन्तु लकड़ी में गाँठें अधिक होती हैं। यह "डील" के समान हलके काम की एक अच्छी लकड़ी है और अन्दर के कामों के लिये विश्वास योग्य है। फिर भी क्योंकि यह टिकाऊ लकड़ी नहीं है इसलिये कीड़ा और कुकुरमुत्ते से रक्षा करने के लिये इस पर रक्षात्मक मसाला लगा लेना चाहिये।

एकेसिया अरेबिका (बबूल)–वज़न ५२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह एक बहुत कठोर और बहुत दिन चलनेवाली लकड़ी है। यह खम्भों और फ़र्श में लगाने के टुकड़ों के लिये अच्छी है।

अडाइना कार्डिफ़ोलिया (हल्दू)–वज़न ४० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह घने और बारीक रेशों की लकड़ी है जो भीतरी कामों के लिये उत्तम है। जैसे गुसलखानों के अन्दर लकड़ी की चीज़ें और अँगीठी इत्यादि के आसपास लगाने के लिये,

रसोईघर, डेयरी और बेकरी से सम्बन्ध रखनेवाली लकड़ियों की चीज़ों के लिये यह एक बढ़िया और सुन्दर रंग वाली लकड़ी है। इसे आवश्यकतानुसार धोकर आसानी से साफ़ कर सकते हैं।

अलबिज़िया लेबक (कोको)—वज़न ४४ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह इमारती कामों के लिये एक मज़बूत और अधिक समय तक चलने वाली लकड़ी है। इसके टुकड़े बहुधा सजावटी और सुन्दर होते हैं और अपने सुन्दर गहरे बेलबूटों के विचार से बढ़िया फ़र्नीचर के लिये उपयुक्त लकड़ी है।

अलबिज़िया ओडोरेटिस्सिमा (ब्लैक सिरिस)—कोको ही के समान दूसरी लकड़ी है परन्तु उससे कुछ भारी और कठोर होती है।

अलबिज़िया प्रोसेरा (ह्वाइट सिरिस)—यह भी इसी प्रकार की लकड़ी है परन्तु कुछ हल्की और कोको से अधिक मज़बूत और ध्यान देने योग्य लकड़ी है।

आर्टोकारपस की लकड़ियाँ (चपलाश, ऐनी, जैक, और लकूच)— वज़न ३४ से ४० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) ये भी अच्छी इमारती लकड़ियाँ हैं। इनमें से चपलाश भीतरी सजावटी कामों के लिये उपयुक्त है। ऐनी भारत में सागोन का बदल मानी जा चुकी है। यह अधिक टिकाऊ होने के अतिरिक्त एक आसानी से सूखने वाली लकड़ी है। यह ऐंठती और तड़कती भी नहीं है और दूसरी शक्लियों में सागोन के लगभग समान है। वज़न में सागोन से कुछ हल्की है।

जैक भी एक टिकाऊ लकड़ी है और जहाँ मिल सकती है वहाँ पूर्ण रूप से हर प्रकार के भीतरी कामों में लाई जा सकती है।

लकूच इन चारों में भारी लकड़ी है और अधिक मज़बूत और टिकाऊ होने के कारण मकानों के खम्भों और शहतीरों के लिये

एक अच्छी लकड़ी है। दीमक और दूसरे नष्ट करने वाले कीड़ों का सामना कर सकती है।

बिशोफ़िया जवानिका (बिशप उड)—वज़न ३५ से ४८ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह उपयोगी इमारती लकड़ी है जो यद्यपि अधिक मज़बूत नहीं होती परन्तु बहुत दिन चलने वाली होने के कारण तराई के स्थानों में और पानी से मिले हुए तर स्थानों में इमारती काम की एक सफल लकड़ी है।

कैलोफ़िलम की लकड़ियाँ (पून)—इन लकड़ियों में विशेषता यह है कि इनके लट्ठे अधिक लम्बाई और मोटाई में मिल जाते हैं।

वज़न ४१ से ४८ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) इसी विचार से इञ्जीनियर आदि और दूसरे लोग जिन्हें बड़े नाप के लट्ठों की आवश्यकता होती है उनके लिये ये लकड़ियाँ ध्यान देने योग्य हैं। बड़ा नाप होने के अतिरिक्त ये अधिक मज़बूत और टिकाऊ हैं। फिर भी बाहरी प्रयोग के लिये इन्हें रक्षात्मक मसाला अवश्य दे लेना चाहिये।

सिडरेला तुना (तुन)—वज़न ३० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह भी भारत की एक विशेष प्रचलित और बाज़ार में मिलने वाली लकड़ी है। सस्ती, हल्की, आसानी से मिलने वाली और इमारती आवश्यकताओं में अनेक प्रकार से काम आने वाली है और सरलता से सुखाई जा सकती है।

सीडरस देवदारा (देवदार)—वज़न ३५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह भी भारत की उपयोगी लकड़ियों में से है जो सूखने, चिराई-कटाई और काम करने के लिये बहुत सहल है। इस पर सफ़ाई भी अच्छी आती है और दीमक का सामना करने की शक्ति रखती है। इसमें बिरोज़े के समान तेज़ गंध होती है और सूखने के बाद इसकी गाँठों में से गोंद निकलता है जिसके

कारण यह लकड़ी भीतरी प्रयोग और बढ़िया पालिश किये जाने के योग्य नहीं परन्तु इमारती कामों के लिये अच्छी है।

चुकरासिया टेबुलेरिस (चिकरासी)—वज़न ४२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह इमारती कामों में अन्दर की सजावटी चीज़ों के लिये एक बढ़िया और सुन्दर लकड़ी है जिसमें गहरे रंग की धारियाँ होती हैं।

डलबर्जिया लेटिफ़ोलिया (रोज-उड)—वज़न ५५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) फ़र्नीचर के लिये यह भारत की प्रसिद्ध लकड़ियों में से है जो साधारण इमारती कामों के लिये तो एक बहुमूल्य लकड़ी होगी परन्तु भीतरी कामों के लिये विशेष सुन्दर है।

डलबर्जिया सिसू (सिसू)—वज़न ५० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह उत्तरी भारत की एक प्रसिद्ध लकड़ी है जिसे फ़र्नीचर बनाने के लिये बहुत काम में लाया जाता है। यह बहुत मज़बूत, लचकदार और टिकाऊ लकड़ी है जो बड़े इमारती कामों के लिये बहुत उपयोगी है।

डिपटेरोकारपस की लकड़ियाँ (गुर्जन, केनीन, एन्ग और होलांग इत्यादि)—वज़न ४५ से ५३ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) ये लकड़ियाँ विशेष रूप से इमारती आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। दाम मुनासिब, अधिक मज़बूत और टिकाऊ हैं। रक्षात्मक मसाले के साथ और अधिक मज़बूत हो जाती हैं।

डुआबंगा सोनिरेटिआइडीज़ (लम्पाती)—वज़न २८ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह साधारण इमारती आवश्यकताओं की लकड़ी है। परिमाण मात्रा में मिलने के कारण साधारण लोगों में यह अधिक प्रसिद्ध नहीं है। प्रयोग में लाये जाने के बाद यह मुड़ती और ऐंठती नहीं, स्थिर रहती है।

हार्डविकिया की लकड़ियाँ (पिने और अंजन)—पिने का वज़न ४३ पौं० और अंजन का ४६ से ६७ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) दोनों अच्छी इमारती लकड़ियाँ हैं और शहतीरों और खम्भों के लिये ठीक सिद्ध होती हैं। अंजन बहुत भारी, कठोर और टिकाऊ लकड़ी है।

हेरिटाइरा माइनर (सुन्दरी)—वज़न ६५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह एक भारी मज़बूत और टिकाऊ लकड़ी है जो बड़े इमारती कामों में खम्भों इत्यादि के लिये उत्तम सिद्ध हुई है। होपिया की लकड़ियाँ (होपिया या अण्डमन थिंगन)—वज़न ३९ से ७३ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) ये साधारण इमारती कामों के लिये अच्छी लकड़ियाँ हैं।

लेजरस्ट्रोमिया की लकड़ियाँ (जारुल, बेनटीक, व अण्डमन पिन्मा)—वज़न ४० से ५० पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) ये सीधे रेशों की मज़बूत व लोचदार इमारती लकड़ियाँ हैं।

मैंजीफ़ेरा इन्डिका (मैंगो)—यानी आम की लकड़ी। वज़न ४२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह एक सस्ती इमारती लकड़ी है परन्तु रक्षात्मक मसाले के बिना अधिक दिन तक नहीं चलती।

मेसुआ फ़ेरिया (मेसुआ)—वज़न ५४ से ७५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह बहुत कठोर, मज़बूत और टिकाऊ है जो हर प्रकार के इमारती काम के लिये ठीक सिद्ध होती है।

यूजीनिया डलबर्जिआइडीज़ (सांदन)—वज़न ५५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) यह भी एक बहुत मज़बूत और लचकदार लकड़ी है जो इमारती कामों के लिये उत्तम है।

पीसिया मोरेन्डा (स्प्रूस)—वज़न २९ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में

सूखने के बाद) यह हल्की इमारती आवश्यकताओं में "डील" के स्थान पर एक अच्छी लकड़ी है।

पाइनस लोंगीफ़ोलिया (चीड़)—वज़न ३५ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) देवदार के बाद उसी प्रकार की दूसरी प्रसिद्ध लकड़ी है और उत्तरी भारत में बहुतायत से प्रयुक्त होती है। यह भी "डील" के स्थान पर एक सस्ती और अच्छी लकड़ी है जो हल्के भीतरी कामों के लिये उपयुक्त है। परन्तु रक्षात्मक मसाले के बिना बहुत दिन तक चलने वाली नहीं है।

पाइनस एक्सेलसा (ब्ल्यू पाइन)—वज़न ३२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) चीड़ से कुछ अच्छी लकड़ी है जो "डील" का अच्छा बदल कही जा सकती है। और हल्के इमारती कामों के लिये अच्छी है।

टेरोकारपस की लकड़ियाँ (अण्डमान और बर्मा पडाक व बीजासाल इत्यादि)—वज़न ४५ से ५४ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद)—ये भारत की बहुमूल्य लकड़ियाँ हैं। ये बहुत दिन चलनेवाली, सुन्दर और मज़बूत होती हैं इसलिये अधिक नुमायशी और उत्तम इमारती कामों के लिये उपयुक्त हैं।

शोरिया की लकड़ियाँ (साल, थिटिया, मकाई)—वज़न ३७ पौं० (मकाई), ६५ पौं० (थिटिया), ५० से ५६ पौं० (साल) (हवा में सूखने के बाद) ये भारत की साधारण प्रसिद्ध लकड़ियों में से हैं। ये अधिक टिकाऊ तथा दीमक इत्यादि का सामना करती हैं। ये साधारण इमारती लकड़ियाँ हैं। थिटिया इन सबसे अधिक भारी और अधिक दिन चलने वाली है।

मकाई—हल्के भीतरी काम के लिये उपयुक्त है क्योंकि यह हल्की होती है।

टेक्टोना ग्रेन्डिस (टीक)—वज़न ३८ से ४३ पौं० प्रति घनफ़ुट

(हवा में सूखने के बाद) यह भारत की मुख्य लकड़ी है। बर्मा और मालाबार की टीक अधिक सीधे और समान रेशों वाली होती है और मध्यभारत की टीक अपनी धारियों की सुन्दरता और सजावटी विशेषताओं के लिये प्रसिद्ध है। परन्तु यह बर्मा या मालाबार के सागोन के बराबर मज़बूत नहीं होती। फिर भी टीक सब बातों को देखते हुए एक बढ़िया इमारती लकड़ी है।

टरमिनेलिया की लकड़ियाँ (लॉरेल, किन्डल, व्हाइट चुगलम, बादाम, और हौलोक)—वज़न ३६ पौं० प्रति घनफ़ुट (बादाम और हौलोक) और ५३ पौं० प्रति घनफ़ुट (लारेल) (हवा में सूखने के बाद) ये अच्छी इमारती लकड़ियाँ हैं और जिन ज़िलों में इनकी प्राप्ति आसानी से हो सकती है वहाँ इनका प्रयोग अधिक होता है।

ज़ाइलिया की लकड़ियाँ (पिनकैडो और इरूल)—वज़न पिनकैडो ५७ पौं० प्रति घनफ़ुट, इरूल ५२ पौं० प्रति घनफ़ुट (हवा में सूखने के बाद) पिनकैडो बर्मा की लकड़ी है और इरूल दक्षिणी भारत की। दोनों अधिक मज़बूत और अच्छी लकड़ियाँ हैं। इरूल पिनकैडो से कुछ कम समय तक चलनेवाली लकड़ी है। परन्तु इमारती आवश्यकताओं के लिये दोनों उपयोगी हैं यद्यपि कठोर होने के कारण चिराई-कटाई में कुछ कठिनाई होती है। गीली दशा में सरलता से वश में आ जाती हैं।

पुलों के लिये मुख्य लकड़ियाँ

पुलों में लगाई जाने वाली लकड़ी को साधारण इमारती कामों की लकड़ियों से अधिक मज़बूत और टिकाऊ होने की आवश्यकता है जो गाड़ियों के आने-जाने और ऋतु परिवर्तन को सहन कर

सकें। यदि पुल की सतह भी लकड़ी की ही बनी हो तो उस जगह विशेष रूप से कठोर लकड़ी की आवश्यकता होती है जिससे वह जल्दी न घिस जाय। कुछ लकड़ियों का नाम नीचे तालिका में दिया जा रहा है जो पुलों के बनाने के लिये उपयुक्त हैं।

लकड़ी का नाम	वज़न सागोन=१००	शहतीरी शक्ति सागोन=१००	शहतीरी कठोरता सागोन=१००
एकेसिया अरेबिका	१२०	११५	६०
सीडरस देवदारा	८०	७५	७५
डलबर्जिया की लकड़ियाँ	१२०	६०	८५
डिपटेरोकारपस की लकड़ियाँ	१०५	१०५	११०
होपिया ओडोरेटा	१०५	१०५	६५
मेसुआ फ़ेरिया	१३५	१४०	१४५
टेरोकारपस की लकड़ियाँ	११५	१२०	१०५
शोरिया की लकड़ियाँ	१३०	१२५	१३०
टरमिनेलिया टोमेन्टोसा	१२०	१००	१००
ज़ाइलियाडोलेब्रिफ़ॉरमिस	१३०	१३०	१३०

ऊपर की तालिका में एक जाति के अंतर्गत उसकी सभी क़िस्मों के औसत आँकड़े अंकित किये गये हैं; वे केवल उसी नाम के लिये सही न समझे जाने चाहिये उदाहरणतः डिपटेरोकारपस जाति जिसमें बहुत सी क़िस्में आती हैं। जिनका वज़न भिन्न भिन्न होता है और मज़बूती में भी अंतर होता है।

पुल के फ़र्श के लिये अधिक कठोर और उपयुक्त लकड़ियाँ नीचे दी गई हैं।

लकड़ी का नाम	कठोरता (सागौन=१००)
एकेसिया अरेबिका	१८०
एलबिज़िया की लकड़ियाँ	११५
होपिया की लकड़ियाँ	१६०
मेसुआ फ़ेरिया	१८५
टेरोकारपस मैक्रोकार्पस	२००
शोरिया की लकड़ियाँ	१८०
टरमिनेलिया टोमेन्टोसा	१३०
ज़ाइलिया की लकड़ियाँ	१८०

मुख्य इमारती कामों में जो लकड़ियाँ पुलों के लिये बताई गई हैं उन्हीं का प्रयोग करना चाहिये और जो पहले इमारती लकड़ियों के लिये बताई गई हैं उनमें कुछ लकड़ियाँ अधिक मज़बूत और टिकाऊ हैं। जहाँ लकड़ी के अधिक समय तक चलने का विचार हो वहाँ उसमें रक्षात्मक मसाला लगा देना उचित है और अच्छा तो यह है कि ऐसे कामों में जहाँ तक हो सके लकड़ी को गोल दशा में प्रयोग करना चाहिये; क्योंकि गोल बल्लियाँ चौरस लकड़ी की अपेक्षा अधिक मज़बूत होती हैं। दूसरे यह कि गोलाई में बाहर की ओर कच्ची लकड़ी होने से रक्षात्मक मसाला भली प्रकार सोख लेती हैं। पक्की लकड़ी कम मसाला लेती है।

(११) पीपों और कुप्पों के लिए लकड़ियाँ

लकड़ी के पीपे दो प्रकार के बनाये जाते हैं (१) वह जो तरल पदार्थों के रखने के लिये होते हैं और जिनके ढकनों इत्यादि का ठीक बैठाना बहुत आवश्यक है। (२) वे जो सूखी चीज़ों जैसे

सीमेन्ट इत्यादि भरने के लिये हों—जिनके जोड़ इत्यादि का उतना सही होना आवश्यक नहीं जितना कि पहले बताये हुए पीपों के लिये होता है। पहली प्रकार के लिये ओक, धामन और सांदन उपयुक्त लकड़ियाँ हैं, जिनके पीपों में बहुत ही पतली चीज़ें जैसे मदिरा इत्यादि भी ले जा सकते हैं। गाढ़े तरल पदार्थ जैसे तेल या वार्निश ले जाने के लिये सेमल, गमारी और बैंग के पीपे ठीक रहते हैं।

दूसरी क़िस्म के लिए मैंगो, स्प्रूस, सलाई, कुठान, सेमल और बैंग अच्छी लकड़ियाँ हैं। सीमेन्ट के पीपों के लिये सलाई अच्छी लकड़ी है। टाटा नगर (बिहार) में कीलें भेजने के गोल बक्स भी सलाई ही की लकड़ी के होते हैं। सी० पी० (मध्य प्रदेश) और मद्रास की ओर सीमेन्ट के बड़े पीपे "ब्लैक सिरस" और "कैम" के भी बनाये जाते हैं। जल्लो (Jallo) (पाक०) में राल के पीपे स्प्रूस की लकड़ी के बनाये जाते हैं जो इस काम के लिये बहुत अच्छी है। फर भी इसके लिये ठीक रहती है। क्लटरबकगंज (बरेली) में आम की लकड़ी का भी इस कार्य के लिये प्रयोग किया जाता है। डाइसाग्जिलम मालाबारीकम (व्हाइट सीडर), आर्टोकारपस हिरसूटा (पेनी) और लेजरस्ट्रोमिया लन्सियोलेटा तेल के पीपों के लिये बहुत अच्छी लकड़ियाँ हैं। इसलिये पहले बताई हुई लकड़ियाँ भारत के पश्चिमी तट की ओर पीपों के लिये बहुत प्रयुक्त होती हैं। बर्मा में सागोन के पीपे उन मदिरा आदि जिनके लिये लकड़ी की गंध का विरोध न हो बहुतायत से बनाये जाते हैं। देवदार और साल की लकड़ी से तरल पदार्थों अर्थात् मदिरा आदि के संग्रह के लिये पीपे बनाये जाते हैं और मदिरा बनाने के हौज़ (पीपे) कैल व टीक के बनाये जाते हैं।

कपड़ा बुनने के कारखानों में रँगने के लिये टीक के बड़े हौज़ (पीपे) बनाये जाते हैं जो विलायती लकड़ियों के हौज़ों से उत्तम सिद्ध

हुए हैं। शीरे के लिये बड़े पीपे भारत में आम की लकड़ी के बनाये जाते हैं जो कि बहुत सफल रहते हैं।

(१२) बिजली के खम्भों के लिए लकड़ियाँ

खम्भों में जो विशेषताएँ होनी चाहिये वे ये हैं कि वे सीधे हों और जिस काम में प्रयोग किये जायँ उसके लिये अधिक मज़बूत हों। इसके अतिरिक्त धूप और वर्षा किसी मौसमी बदलाव में ज़्यादा फटने वाले न हों। बिजली के खम्भों को गोल दशा में प्रयोग में लाना अच्छा है क्योंकि गोलाई में चारों ओर कच्ची लकड़ी होने से उनको रक्षात्मक मसाला बड़ी सरलता से दिया जा सकता है और न केवल कच्ची ही लकड़ी को मसाला लगाने का ख़्याल होना चाहिए बल्कि हो सके तो खम्भे ऐसी लकड़ी के बनाये जायँ जिसकी पक्की लकड़ी भी अधिक से अधिक मसाला सोखनेवाली हो जिससे कि बाद में खम्भों की फटनेवाली दरारों से दीमक इत्यादि लकड़ी को भीतर से नष्ट न करने लगें और खम्भा खोखला होकर ज़मीन पर गिर पड़े। नीचे दी हुई लकड़ियाँ बिजली के खम्भों के लिये उपयोगी हैं।

पाइनस लोंगीफ़ोलिया (चीड़)—खम्भों के लिये सबसे अच्छी और सीधी लकड़ी समझी गई है परन्तु रक्षात्मक मसाले के बिना प्रयोग में न लाना चाहिये। जंगलों से इसके आने में कठिनाई होने के कारण इस काम में अधिक प्रचलित न हो सकी है।

शोरिया रोबस्टा (साल)—इसकी लकड़ी के अच्छे और सीधे खम्भे मिल जाते हैं और ख़ूब मज़बूत होते हैं परन्तु बिना रक्षात्मक मसाले के इन्हें न लगाना चाहिये क्योंकि इसकी कच्ची लकड़ी जल्दी नष्ट हो जाती है परन्तु पक्की लकड़ी अवश्य अधिक दिन तक चलनेवाली होती है। इस विचार से यदि कच्ची लकड़ी का

छीलकर खम्भे बनाये जायँ तो फिर मसाला देने की भी आवश्यकता नहीं रहती।

पोहोसलोन्युरन इन्डिकम—यह सीधी लकड़ी दक्षिणी भारत में खम्भों के लिये प्रयुक्त की जाती है, परन्तु यह फटने वाली लकड़ी है। इसको भली भाँति मसाला देकर खम्भों के लिये प्रयोग में लाना चाहिये।

होपिया पार्विफ्लोरा—यह भी खम्भों की एक अच्छी और मज़बूत लकड़ी है।

पाइनस इन्सिगनिस—इसके खम्भे अधिकतर सीधे और अच्छे होते हैं। परन्तु यह मद्रास के केवल कोदायकनाल प्लाण्टेशन में होता है।

टेक्टोना ग्रेन्डिस (टीक)—इसके खम्भे भी अच्छे होते हैं। परन्तु इसकी कच्ची लकड़ी पर भली भाँति मसाला लगा लेना चाहिये।

हेरीटाइरा की लकड़ियाँ (सुन्दरी)—इसके खम्भे गाल में आसानी से मिल जाते हैं। परन्तु अधिक लम्बाई में नहीं होते।

कैजुआरिना इक्विज़ेटिफ़ोलिया—इसके सीधे और लम्बे खम्भे बम्बई, मद्रास और उड़ीसा के समुद्री किनारे के उगाये हुए जंगलों से मिलते हैं। यह लकड़ी अधिक मज़बूत होती है परन्तु फटने वाली है। इसे भी भली भाँति मसाला देकर प्रयोग में लाना चाहिये।

ब्रूगेरा जिमनोरिज़ा—यह नदियों के तट पर गर्म जंगलों में कीच में उगने वाला पेड़ है जो बंगाल के सुन्दरबन और अण्डमान में अधिकतर पाया जाता है। इसके खम्भे अधिक मज़बूत और लम्बे होते हैं।

कुछ और लकड़ियाँ भी हैं जो खम्भों के लिये उपयोगी हैं। जैसे टरमिनेलिया टोमेन्टोसा (लारेल), केलोफ़िलम की लकड़ियाँ (पून),

लेजरस्ट्रोमिया लेन्सियोलेटा (वेनटाक), पोलिपलथिया सिमिपरम, क्लाईस्टेनथस कौलिनस, लेजरस्ट्रोमिया पार्विफ्लोरा (लेन्डी), एनोगाइसस लेटिफ़ोलिया (एक्सिल-उड), मेसुआ फ़ेरिया (मेसुआ), सिडरस देवदारा (देवदार), पाइनस एक्सेलसा (केल) और पालमाइरा पाम। अंत में बताई लकड़ी यदि लम्बे नाप में मिल सके तो इसके खम्भे साल के बराबर मज़बूत होते हैं और अधिक विशेषता यह है कि साल की अपेक्षा यह आसानी से रक्षात्मक मसाले को सोख लेती है। देवदार प्रचुर मात्रा में काश्मीर में बिजली और तार के खम्भों के लिये प्रयुक्त किया जा रहा है।

(१३) खुदाई और छपाई के काम की लकड़ियाँ

बहुत समय तक इस काम में केवल विलायती बर्च और बक्स-उड का प्रयोग रहा परन्तु कुछ वर्षों से उनके स्थान पर देशी लकड़ियों को काम में लाया जा रहा है। प्रयोग द्वारा सिद्ध हुआ है कि बंगा (मिट्रागाइना डाइवर्सिफ़ोलिया), कैम (मिट्रागाइना पार्विफ़ोलिया) और चुई (सेगेरिया इलिपटिका) खुदाई और छपाई के काम की अच्छी लकड़ियाँ हैं। सन्दल और भी अच्छी है। इसके अतिरिक्त गार्डिनिया की लकड़ियाँ (रेन्डिया ड्यूमेटोरम) और ओलिया फ़ेरुजिनिया भी अच्छी लकड़ियाँ हैं। राइटिया टिंकटोरिया, होलरहिना एन्टीडाइसेन्टेरिका, केन्थियम डिडीमम और बबूल (एकेसिया अरेबिका) भी यथेष्ट अच्छी हैं। बबूल की लकड़ी कपड़े छापने के ठप्पों के लिये अधिकतर काम में लाई जा रही है। उत्तरी भारत में शीशम और दक्षिणी भारत में रोज-उड भी इस काम की अच्छी लकड़ियाँ हैं। प्रायः तुन और सागौन के भी ठप्पे बनाये

जाते हैं। टमारिन्डस इन्डिका भी इस काम के लिये अच्छी लकड़ी है।

(१४) फ़र्श में लगाने की लकड़ियाँ

लकड़ी के फ़र्श दो प्रकार के होते हैं। एक वह जो घरों में सजावट के लिये लगाया जाता है और दूसरे वह जो साधारण रीति से मामूली लकड़ी के टुकड़ों के रूप में लगाया गया हो, जैसा कि कारखानों और फ़ैक्टियों इत्यादि में होता है। पहिले के लिये लकड़ी सुन्दर, कठोर और स्थिर होनी चाहिये, जैसे टीक और अण्डमन पडाक इत्यादि। बर्मा पडाक कदाचित् इस काम के लिए संसार की सबसे उत्तम लकड़ी है क्योंकि यह अधिक कठोर और स्थिर है। इसका फ़र्श देहरादून में १५ वर्ष से अधिक समय से अब तक अच्छी दशा में है। इसके अतिरिक्त फ़र्श में लगाने के लिये निम्नलिखित लकड़ियाँ भी उपयुक्त हैं:—

इरुल (ज़ाइलिया ज़ाइलोकार्पा) बबूल (एकेसिया अरेबिका) गुर्जन (डिपटेरोकारपस) काला सिरस (अलबिज़िया ओडोरेटिसिमा) चिकरासी (चुकरासिया टेबुलेरिस) शीशम (डलबर्जिया सिसू) अंजन (हार्डविकिया बिनेटा) जारूल (लेजरस्ट्रोमिया फ्लास-रेजिनी) और लारेल (टरमिनेलिया टोमेन्टोसा) इन्हें भली प्रकार सुखा लिया जाना चाहिये।

फ़ैक्टियों और गोदामों के साधारण फ़र्श के लिये कोई भी लकड़ी, जो कुछ कठोर हो, ठीक सिद्ध होती है। परन्तु दीमक से बचाव करने के लिये रक्षात्मक मसाला लगा लेना चाहिये। चीड़ पाइन और ब्लयू पाइन इत्यादि नर्म लकड़ियों को भी मसाला देकर फ़र्श में लगाने के लिये काम में ला सकते हैं।

(१५) फ़र्नीचर के काम की लकड़ियाँ

उत्तम प्रकार के फ़र्नीचर के लिये बहुत सी सुन्दर और सजावटी लकड़ियाँ हैं। चुनाव करते समय नीचे दी हुई विशेषताओं का ध्यान रखना चाहिये—

(१) लकड़ी फटने और चिटकने वाली क़िस्म की न हो।

(२) मौसमी बदलाव के साथ अधिक घटने और बढ़ने वाली न हो।

(३) औज़ारों के लिये काम करने में आसान हो।

(४) रेशे उभरे हुए साफ़ और गहरे रंग के हों।

नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ ऊपर बताई हुई विशेषताओं के अनुसार हैं:—

अलबिज़िया की लकड़ियाँ (कोको, सिरीस इत्यादि)—ये भूरे रंग की स्थिर, सुन्दर और पायदार लकड़ियाँ हैं।

सिडरेला तुना (तुन)—यह सुर्ख़ी लिये हुए पक्के रंग की एक हल्की और साधारण फ़र्नीचर के लिये उपयुक्त लकड़ी है।

चुकरासिया टेबुलेरिस (चिकरासी)—यह एक हल्के बादामी रंग की सुन्दर और गहरे बेलबूटों वाली लकड़ी है जिससे बढ़िया फ़र्नीचर बनता है।

क्लोरोग्ज़िलन स्वीटीनिया (साटिन-उड) डलबर्जिया लेटीफ़ोलिया (रोज-उड) भारत की उत्तम प्रकार की फ़र्नीचर बनाने की लकड़ियों में से हैं। डलबर्जिया सिसू (सिसू) यह रोज़-उड के बाद फ़र्नीचर की दूसरी उत्तम लकड़ी है जो प्लाई-उड और लकड़ी में बेलबूटे काटने के लिये भी उपयुक्त है। जुगलन्स रेजिया (वालनट) फ़र्नीचर के लिये एक उत्तम प्रकार की प्रसिद्ध लकड़ी है जो बेलबूटे काटने के लिये भी बहुत उत्तम है।

फ़ीबी की लकड़ियाँ (बोनसम)—हल्के फ़र्नीचर के लिये अच्छी हैं।

टेरोकारपस डलबर्जिओइडीज़ (अन्डमान पडाक)—यह लाल रंग की फ़र्नीचर की एक उत्तम लकड़ी है।

टेरोकारपस मारसूपियम (बिजासाल)—दक्षिणी भारत में फ़र्नीचर की प्रसिद्ध लकड़ी है।

स्वीटिनिया मैक्रोफिला (महोगनी)—फ़र्नीचर की एक बहुत प्रसिद्ध लकड़ी है परन्तु परिमित मात्रा में मिलती है।

टैक्टोना ग्रेन्डिस (टीक)—मध्य भारत और बम्बई प्रान्त की टीक फ़र्नीचर के लिये बहुत उत्तम है जिसमें गहरी धारियाँ होती हैं जो तय्यार होने पर बहुत सुन्दर लगती हैं। परन्तु बर्मा और दक्षिणी भारत की टीक इतनी सुन्दर नहीं होती।

टरमिनेलिया ग्लाइलाटा (सिलवर ग्रे)—फ़र्नीचर के लिये एक सुन्दर लकड़ी है परन्तु गर्म और शुष्क स्थानों में इसकी सतह पर महीन-महीन दरारें हो जाती हैं।

टरमिनेलिया टोमेन्टोसा (लारेल)—बहुत ही सुन्दर और गहरी धारियों वाली लकड़ी है परन्तु काम में लाने से पहिले इसको अच्छी तरह सुखा लेना उचित है। सस्ते प्रकार के फ़र्नीचर के लिये भारत में बहुत सी साधारण लकड़ियाँ प्रयुक्त की जाती हैं जैसे चीड़, पाइन, कैल, देवदार, स्प्रूस, फ़र, साइप्रस, हल्दू, जैक, चपलाश. ऐनी, मलबरी, वेलापिने, पून, गुर्जन, जारुल, मैंगो, नीम, धूप, ह्वाइट चुगलम, गमारी, ह्वाइट सीडर, हार्डविकिया पिनेटा और हार्स चैस्टनट।

कैम्प फ़र्नीचर के लिये, जहाँ मज़बूती के साथ साथ लकड़ी में हलकापन होने की भी आश्यकता है, नीचे दी हुई लकड़ियाँ उपयुक्त हैं:—

ज़ेन्थोग्ज़ाइलम रेटसा, सफ़री चारपाइयों और कुर्सियों के लिये उत्तम लकड़ी है। डाइसाग्ज़िलम मालाबारिकम, अटलान्टिया मोनोफ़िला, मोरस (मलबरी) इत्यादि भी सफ़री चारपाइयों तथा कुर्सियों के लिये उत्तम लकड़ियाँ हैं।

बेटूला अलनाइडीज़ (बर्च) लेजरस्ट्रोमिया हाइपोल्यूका, अलबिज़िया प्रोसेरा भी सफ़री चारपाइयों और कुर्सियों की लकड़ियाँ हैं।

क्यूप्रेशस टोरूलोसा (साइप्रस) मेज़ों इत्यादि के लिये।

फीबी (बोनसम) भी सफ़री सामान जैसे मेज़ इत्यादि के लिये अच्छी लकड़ी है। सफ़री सामान के लिये विलायती फ़र्नीचर अधिकतर "ऐश" या "बर्च" का बनाया जाता है। "ऐश" के वज़न के बराबर कदाचित् ही कोई हिन्दुस्तानी लकड़ी हो जो मज़बूती और पायदारी में इसकी बराबरी कर सके।

मलबरी किसी अंश तक ऐश का बदल हो सकती है। परन्तु चोट सहने में यह भी ऐश के समान नहीं है।

(१६) बन्दरगाह सम्बन्धी कामों की आवश्यक लकड़ियाँ

इस काम के लिये लकड़ी को हानि पहुँचाने वाले कीड़े "टेरेडो" और दूसरे अवगुणा का सामना करने की शक्ति होनी चाहिये। परन्तु यथार्थ में अभी तक न कोई हिन्दुस्तानी लकड़ी ऐसी मालूम हुई है और न कोई विदेशी लकड़ी ही ऐसी है जो पूर्ण रूप से समुद्री उत्पात को सह सके। टीक, पिनकैडो और अण्डमन पिनमा किसी अंश तक इस मतलब के लिये अच्छी लकड़ियाँ हैं। परन्तु बहुधा बन्दरगाहों में "टेरेडो" कीड़े इतने नष्टकारी होते हैं कि ये लकड़ियाँ भी अधिक दिनों तक उनका सामना नहीं कर पातीं। "ग्रीन हार्ट" को किसी समय "टेरेडो" से सुरक्षित लकड़ी समझते थे। परन्तु यह विचार सन्देहजनक निकला। इसी प्रकार आस्ट्रेलिया की लकड़ियाँ "अराह" और "कड़ी" भी अब इस कार्य में असफल

समझी जाती हैं। अन्डमान में "आर्टोकारपस गोमेज़ियाना" अवश्य "टेरेडो" का सामना करने में सफल सिद्ध हुई है। परन्तु दूसरे समुद्रों में यह न मालूम कैसी रहे। यदि ऐसी लकड़ियों को क्रियोज़ोट लगाकर समुद्री कामों में लाया जाय तो वे काफ़ी दिन चल सकती हैं, विशेषरूप से जब क्रियोज़ोट दबाव द्वारा दिया गया हो। दबाव द्वारा एस्क्यू पिलाई हुई लकड़ियाँ भी बहुत से भारतीय बन्दरगाहों में सफल सिद्ध हुई हैं क्योंकि एस्क्यू क्रियोज़ोट की तुलना में 'टेरेडो' को अधिक सफलतापूर्वक नष्ट करता है। इस समय तक जो प्रयोग किये गये हैं उनसे सिद्ध होता है कि एस्क्यू दी हुई लकड़ी ने वर्षों "टेरेडो" का सामना किया है। दो भारतीय समुद्री इञ्जीनियरों की रिपोर्ट है कि एस्क्यू "टेरेडो" के रोकने में और सब मसालों से अच्छा है।

(१७) दियासलाई के लिये लकड़ियाँ

भारत की दियासलाई बनाने वाली फ़ैक्ट्रियाँ देश की आवश्यकतानुसार दियासलाई बनाती हैं। क्योंकि विदेशी 'एसपन' के समकक्ष उत्तम प्रकार की तीलियाँ बनाने के लिये भारत में आसानी से उपलब्ध होने वाली लकड़ियाँ नहीं हैं इसलिये बहुत सी फ़ैक्ट्रियाँ विशेषतः वे जो बन्दरगाहों के समीप हैं उत्तम प्रकार की तीलियों के लिये विदेशी लकड़ी का प्रयोग करता हैं। और देशी लकड़ियों को मामूली दियासलाई की तीलियों और बक्सों के लिये काम में लाते हैं। अच्छी दियासलाई बनाने के लिये लकड़ी सफ़ेद, नर्म और सस्ती होनी चाहिये। यह बात देसी लकड़ियों में नहीं होती। यहाँ की सस्ते प्रकार की सफ़ेद लकड़ियाँ अधिकतर भद्दे और आड़े तिरछे रेशों वाली होती हैं जिनसे दियासलाई की अच्छी तीलियाँ नहीं बनाई जा सकतीं। परन्तु दियासलाई के बक्सों और मामूली प्रकार की तीलियों के लिये भारत में बहुत सी लकड़ियाँ

हैं। बाम्बेक्स मालाबारिकम (सेमल), एन्थासिफ़ेलस कदम्बा (कदम), कैनेरियम (धूप), एन्डोस्परमम मेलालेन्सी (बकोटा), डाइमिनोडिक्टियन एक्सेलसम (कुठान), स्टरक्यूलिया कैम्पेनूलेटा (पपीता), स्विन्टोनिया फ़्लोरीबन्डा (सिविट), ट्रेविया न्युडीफ़्लोरा (गुटेल), वेटिरिया इन्डिका (वेलापिने), टेट्रामेलिस न्यूडीफ़्लोरा (मैना), इवोडिया राक्सबर्घियाना (मालाबार एसपन), पापुलस नाइग्रा (पोपलर), सेलिक्स (बिलो), साइडिराग्जिलन लांगापेटियोलेटम (लम्बापाती), सिम्पलोकोज़ की लकड़ियाँ, एलेन्थस की लकड़ियाँ, स्पोन्डियस मैंजीफेरा, एक्ज़ीककेरियाएगालोचा (ग्योन) एलसटोनिया स्कोलेरिस। अधिक जानकारी के लिये "लिस्ट आफ़ इन्डियन उड्स टेस्टेड फ़ार मैच मैनुफ़ैकचर (फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टाट्यूट देहरादून)" देखिये।

(१८) गणित सम्बन्धी उपकरण की लकड़ियाँ

उत्तम प्रकार के गणित सम्बन्धी उपकरण जैसे कि ज्योमेट्री और इञ्जीनियरिंग के काम के "सेटस्कायर" और पैमाने इत्यादि बॉक्सउड, वालनट या हॉर्स चेस्टनट की लकड़ी के बनाये जाते हैं। परन्तु स्कूल के लड़कों के मतलब के सस्ते उपकरण हल्दू, तुन, दुधी, गार्डीनिया, कांजू, प्रूनस या और किसी स्थानीय लकड़ी के बना दिये जाते हैं। पंजाब में फ़र और स्प्रूस को सस्ते प्रकार के पैमाने बनाने के काम में लाते हैं। इसी प्रकार मालाबार तट पर मुलिलम और हल्दू इस काम के लिये प्रचलित हैं। नक़्शा बनाने के ड्राइंग बोर्ड्स और दूसरी समतल नाप मेज़ें कैल और साइप्रेस की अच्छी बनती हैं। गमारी, कुठान व नीम चमेली भी इस काम की अच्छी लकड़ियाँ हैं। केलोफ़िलम टोमेन्टोसम, राइटिया टिक्टोरिया, मैंगो और कैम भी इस काम में लाई जा सकती हैं।

क्योंकि बाक्सउड अधिक महँगी है इसलिये उसके स्थान पर अटलांशिया मोनोफ़ला, गार्डीनिया लेटीफ़ोलिया, रैन्डिया डयूमेटोरम और प्रोशिया की लकड़ियाँ प्रयुक्त की जा सकती हैं।

सेट स्क्वायर और पैमानों के लिये कठोर प्रकार की लकड़ियाँ जैसे रोज़उड, शीशम और आबनूस अच्छी हैं।

(१६) खानों में काम आने वाली लकड़ियाँ

खानों के अन्दर चौखटे और खम्भे बहुत मज़बूत और अधिक दिन चलने वाली लकड़ी के बनाये जाते हैं। इसमें असावधानी न होनी चाहिये।

शोरिया रोबस्टा (साल)—हेरीटाइरा माइनर (सुन्दरी)—टरमिनेलिया टोमेन्टोसा (लारेल)—डाइस्पायरस मेलानाग्ज़िलन (तेंदू)—होपिया पार्विफ़्लोरा (बोगम)—पेनोगाइसस लेटीफोलिया (एक्सिलउड)—एकेसिया अरेबिका (बबूल)—ग्रेविया टिलिफोलिया (धामन), टरमिनेलिया अर्जुना (अर्जुन), ज़ाइलिया ज़ाइलोकारपा (इरूल) और मलाइना आरबोरिया (गमारी) इस काम की अच्छी लकड़ियाँ हैं। और भी कई लकड़ियाँ इसके लिये उपयुक्त हो सकती हैं परन्तु जब गोल खम्भों के रूप में कच्ची लकड़ी समेत प्रयुक्त की जानी हों तो रक्षात्मक मसाला लगा लेना उचित है।

(२०) मोटर लारियों और बसों के ढाँचों के लिये लकड़ियाँ

कुछ वर्षों से हिन्दुस्तान में मोटर लारियों के ढाँचे बनाने के लिये उपयुक्त लकड़ियों की बहुत आवश्यकता समझी जा रही है। विशेषरूप से सेनाविभाग की लारियों के ढाँचे इत्यादि

बनाने के लिये सैनिक विभागों में निम्नलिखित लकड़ियाँ इस काम के लिये स्वीकृत की जा चुकी हैं।

फ़र्श और दीवारों के तख़्तों के लिये

देवदार, साइप्रस, कैल, चीड़, टीक, पून, चपलाश, पेनी, गमारी, ह्वाइट सीडर, ह्वाइट बाम्बवे और अण्डमान पिनमा इत्यादि।

ढाँचे के लिये

सिसू, रोज़उड, बर्मा पडाक, अण्डमान पडाक, बिजासाल, टीक, बेनटीक, साल, थिंगन पेनी और धामन।

छत के फ्रेम के लिये

मलबरी, धामन, सिसू, रोज़उड, टीक, बेनटीक, बिजासाल, बर्मा पडाक, अण्डमान पडाक और अण्डमान पिनमा।

और भी कई एक लकड़ियाँ लारियों के ढाँचों के लिये उपयुक्त हो सकती हैं परन्तु आवश्यक है कि इस काम में अच्छी सूखी हुई लकड़ी लगाई जाय जिससे कीलों और पेचों के छेद बाद में ढीले न पड़ जायँ या "छी" न जायँ। यदि गर्म-गर्म क्रियोज़ोट अथवा सालिग्नम के दो गाढ़े लेप लकड़ी पर फेर दिये जायँ तो अधिक अच्छा है।

(२१) वाद्य यन्त्र

यूरप में बाजों के लिये "पाइन" की प्रकार की सीधे और समान रेशों वाली लकड़ियों का प्रयोग किया जाता है। भारत में "ढोलक" "सितार" और "वायलन" बाजों के लिये विभिन्न प्रकार की लकड़ियाँ साधारणतया काम में लाई जाती हैं जैसे टीक, तुन, सिसू, मलबरी, हल्दू, ग्रामोफ़ोन बाजों और रेडियो मशीनों के बक्स कराापा मोल्यूसेन्सिस के अच्छे बनते हैं। आरगन के अंग ओक और सागौन के अच्छे बनते हैं। "रीड और साउन्ड बोर्ड्स" स्प्रूस और कैल के ठीक होते हैं। वायलन के ढाँचे स्प्रूस, कैल

और चीड़ व पाइन के अच्छे होते हैं। शेष भागों में मेपल, सागोन, आबनूस व सुन्दरी लगाई जाती हैं।

सितार का लम्बा ढाँचा टीक का बनाते हैं और खूँटियों में देवदार या शीशम की लकड़ी लगती हैं। "बैंजो" सागोन की लकड़ी का बनाते हैं। ढोलक और बड़े ढोल इण्डियन ऐश, मलबरी, सिसू, बिजासाल और सिरस के बनाये जाते हैं।

(२२) सन्दूक़ों और सामान भरने की पेटियों के लिये लकड़ियाँ

इस काम के लिये लकड़ी कुछ हलकी, काम करने में सरल और कुछ सस्ती होनी चाहिये। लकड़ी ऐसी होनी चाहिये कि वह कील को अच्छी तरह पकड़ ले। यदि उसका रंग सफ़ेद हो तो अधिक अच्छा है। साधारण सन्दूक़ों के लिये बहुत सी लकड़ियाँ हैं परन्तु विशेष कामों के लिये जो सन्दूक़ या बक्स बनाये जायँ उनके लिये उपयुक्त लकड़ी खोजना आवश्यक है। चाय के पैकिंग बक्स, मक्खन और दूसरी खाने की चीज़ें रखने के बक्स बिना किसी गंधवाली लकड़ी के बनाने चाहिये। सागोन और देवदार इस काम के लिये ठीक लकड़ियाँ नहीं हैं। चाय को अब अधिकतर प्लाई-उड के बक्सों में भरते हैं जो मज़बूत, हलके और सस्ते होते हैं। साधारण आवश्यकताओं के लिये बक्स विदेश से आई हुई 'डील उड' के बनते हैं। नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ भी इस काम के लिये उपयुक्त हैं—

सेमल, मैंगो, तुन, चपलाश, सलाई, कांजू, चम्प, धूप, गुटेल कुठान, कदम्ब, लम्पाती, सिविट, गोकुल, मैना, पोलियन्था फ्रेगरेन्स, लोफ़ोपिटेलम विटियानम, बैलापाइनी, अलसटोनिया, स्कोलेरिस, ह्वाइट-सिडर, किडिया केलीसिना, ईल्योकारपस

की लकड़ियाँ, टरमिनेलिया चेबुला, स्पानडियस मैंजीफेरा, स्टरक्यूलिया की लकड़ियाँ, स्प्रस, फ़र, चीड़ और कैल इत्यादि।

अण्डमान के जंगलों में बक्स बनाने की बहुत सी लकड़ियाँ होती हैं जैसे धूप, लम्पाती, ह्वाइट चुगलम, दीदू, पपीता और पेरिशिया, परन्तु इनमें से अधिकतर दियासलाई बनाने के काम आने वाली हैं। दक्षिणी भारत में सिगार रखने के बक्स तून, मेलिया अज़ेडारेच और मेलिया कम्पोज़िटा के बनाये जाते हैं। काफ़ी के बक्सों के लिये टरमिनेलिया चेबुला प्रसिद्ध लकड़ी है। उत्तरी भारत में फलों और अंगूर रखने के बक्स पोपलर की लकड़ी के बनाये जाते हैं। स्विन्टोनिया फ़्लोरिबन्डा (सिविट) को बर्मा आयल कम्पनी तेल के बक्सों के लिये काम में लाती है। लेजरस्ट्रोमिया पार्विफ़्लोरा (लेन्डी) और टरमिनेलिया बैलेरीका मज़बूत बक्सों की अच्छी लकड़ियाँ हैं।

(२३) पेन्सिल और पेनहोल्डर (क़लम)

बहुधा प्रयत्न किये जा चुके हैं कि पेन्सिलों के लिये कोई भारत की लकड़ी ढूँढ़ निकाली जाय। अब तक केवल इन्डियन जूनिपर्स इस काम के लिये अच्छी लकड़ियाँ सिद्ध हुई हैं। भारत में दूसरी लकड़ियाँ भी पेन्सिल बनाने में प्रयुक्त की गई हैं। परन्तु ये पेन्सिलें अमेरिकन सीडर की बनी हुई पेन्सिलों के समान अच्छी नहीं हैं और न ये पेन्सिलें अफ़्रीकन पेन्सिल सीडर ही की तुलना कर सकती हैं। भारत में नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ पेन्सिल बनाने के लिये काम में लाई जाती हैं:—

नोट:—हाल ही में परीक्षा करने पर ज्ञात हुआ है कि 'देवदार' और 'साइप्रस' की लकड़ियाँ रसायनिक क्रिया के बाद उत्तम प्रकार की पेन्सिलें बनाने के लिये काम में लाई जा सकती हैं।

साइप्रस, ब्ल्यू पाइन (कैल), कुठान, सेमल, तुन, किडिया केलिसिना, सोलक्स टेट्रास्पर्मा, मेलिया कम्पोज़िटा, करापा ओबोवेटा, विशोफ़िया जवानिका, मेसटिक्सिआई आरबोरिया, इलयोकारपस ट्यूबरकूलेटस और हॉलीगरना आरनोटियाना, अंतिम तीन लकड़ियाँ मद्रास में पेन्सिल बनाने के लिये काम में लाई गई और इस काम के लिये उपयुक्त सिद्ध हुई हैं। करापा-ओबोवेटा को कलकत्ते की एक पेन्सिल फ़ैक्ट्री इस काम के लिये ठीक समझती है परन्तु यह कुछ कठोर लकड़ी है।

पेनहोल्डर—क़लम बनाने के लिये लकड़ी में कोई विशेषता होने की आवश्यकता नहीं सिवा इसके कि रेशे सीधे और साफ़ हों। जो लकड़ियाँ पेन्सिल बनाने के लिये ऊपर लिखी गई हैं वे पेनहोल्डर बनाने के लिये भी काम में लाई जा सकती हैं। इनके अतिरिक्त हल्दु, गार्डीनिया, गमारी, कैम, हालरहीना और राइटिया भी उपयोगी हैं। स्प्रूस और फ़र भी उत्तरी भारत में सस्ते क़लम बनाने के लिये प्रयुक्त होती हैं। पेन्सिल की लकड़ी को रसायनिक ढंग से मुलायम करने के भी कई मसाले हैं जो देवदार की लकड़ी के लिए उपयोगी साबित हुए हैं।

(२४) पिकर आर्म्स की लकड़ियाँ

भारतीय कपड़ों के कारख़ानों में पिकर आर्म्स अधिकतर विदेशी लकड़ी "हिकरी" के प्रयुक्त किये जाते हैं। परन्तु इसका कोई कारण नहीं कि इस काम के लिये हिन्दुस्तानी लकड़ियाँ न प्रयोग की जायँ। बेनटीक, मलबरी, सांदन, धामन, सुन्दरी और एक्सिलउड सब इस काम के लिये प्रयोग में लाई जा चुकी हैं और इस काम के लिये उपयुक्त सिद्ध हुई हैं। दूसरी और लकड़ियाँ जो इस काम के लिये ठीक हैं, ये हैं:—

बबूल, डूम, लारेल, बेर, वोहिनिया रेटसा, होपिया पार्विफ़्लोरा,

मेसुआ फ़ेरिया और तेंदू की सफ़ेद लकड़ी, सुन्दरी और पक्सिल उड, जो ऊपर बताई गई हैं, इस काम के लिये कुछ भारी हैं परन्तु अनुपयुक्त नहीं।

(२५) तसवीरों के चौखटों की लकड़ियाँ

तसवीरों के चौखटों के लिये लकड़ी को भली प्रकार सूखा और सीधा होना चाहिये और ऐसी न हो कि बाद में ऐंठ जाय। इसके अतिरिक्त और किसी विशेषता की आवश्यकता नहीं। फ़्रेम दो प्रकार के होते हैं। एक तो वे जिन पर पतली मोमी पालिश या वार्निश करके लकड़ी के असली रेशे और उसकी प्राकृतिक बनावट को प्रकट किया जाय। दूसरे वे जिनको रंग की तह से ढक कर लकड़ी को सुन्दर और चमकदार बनाया जाय। ये सुनहरे, हरे और कई दूसरे रंगों से तैयार किये जाते हैं। पहले प्रकार के फ़्रेम उत्तम सजावटी लकड़ियों जैसे सागोन, शीशम, राज़उड, आबनूस और बिजासाल आदि के बनाये जाते हैं। हल्दू भी अच्छी सफ़ाई के बाद काला रंग देने से आबनूस की सी हो जाती है। दूसरे प्रकार के चौखटे "सनोवरी" क़िस्म की लकड़ियों जैसे फ़र और स्प्रूस के बनाने चाहिये। इससे कठोर लकड़ियों में कुठान, गुटेल, सलाई, सेमल और मैना उपयुक्त हैं।

स्कूल के विद्यार्थियों की स्लेट के फ़्रेम बहुत सी लकड़ियों के बनाये जाते हैं—गुटेल, मैना, पाक्षिपलथिया फ़्रैग्रन्स, डाइसाग्जिलम मालाबारिकम, टरमिनेलिया चेबुला, किडिया केलसिना, एलस्टोनिया स्कोलेरिस, ऐलेन्थस की लकड़ियाँ, मेन्जीफ़ेरा इन्डिका (मैन्गो), जैन्थाग्जाइलम, स्प्रूस और फ़र इत्यादि।

एक तीसरी प्रकार के भी फ़्रेम होते हैं जिन्हें लकड़ी पर गाढ़े मसाले की तह लगा कर ठप्पा बनाते हैं। इस प्रकार फ़्रेम की लम्बी लकड़ियों पर सुन्दर बेलबूटे बन जाते हैं। इस काम के लिये अच्छी सूखी हुई लकड़ी लेनी चाहिये जिससे बाद में सूख

कर सिकुड़ने में वह मसाले की तह को न छोड़े। सेमल, कुठान, किंडिया केलिसिना, ऐलन्थस स्टरकूलिया यूरेन्स, और ऐरीथीना या कोई भी हलकी नर्म लकड़ी इस तरह के फ्रेमों में प्रयुक्त की जा सकती हैं। स्प्रूस और फ़र भी इस काम के लिये ठीक हैं। भारत में इस प्रकार के फ्रेमों के कारबार में अच्छी उन्नति हो रही है और धीरे-धीरे उनकी माँग बढ़ गई है।

(२६) प्लाई-उड बनाने की लकड़ियाँ

इस काम के लिये विभिन्न हिन्दुस्तानी लकड़ियों पर प्रयोग तथा खोज की जा चुकी है। सेमल, रोजउड, शीशम, आम, हौलक, हौलांग, तुन, पिने, व्हाइट सीडर, टीक और ज़ेन्थाग्ज़ाइम इत्यादि प्लाई-उड बनाने की बहुत अच्छी लकड़ियाँ हैं।

इनके अतिरिक्त नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ भी इस काम के लिये उपयुक्त सिद्ध हो चुकी हैं:—

१ एसरकैम्पलाई	२ एडाइना कार्डीफ़ोलिया
३ एलनस नैपालेन्सिस	४ अमूरा केनेराना
५ आर्टोकारपस हिरसूटा	६ बेटूला अलनॉइडीज़
७ बकलेन्डिया पोपुलनिया	८ कैनेरियम स्ट्रिक्टम
९ कैनेरियम यूफ़िलम	१० चुकरासिया टेबूलेरिस
११ कुलीनिया एक्सेलसा	१२ डिपटेरोकारपस एलेटस
१३ डुआबंगा सोनिरेटीऑइडीज़	१४ मिलाइना आरबोरिया
१५ लोफ़ोपिटेलम वाइटिएनम	१६ मेचीलस मेक्रान्था
१७ पालेक्यूम इलिप्टिकम	१८ फ़ीबी हन्सियाना
१९ टेरोस्पर्मम-एसीरीफ़ोलियम	२० शोरिया असामिका
२१ स्वीटीनिया महागनी	२२ स्विनटोनिया फ़्लोरिबन्डा
२३ टेकटोना ग्रेन्डिस	२४ टरमिनेलिया बेलेरिका
२५ टेट्रामेलिस न्युडिफ़्लोरा	२६ ट्रेविया न्युडिफ़्लोरा

चार बड़े हिन्दुस्तानी कारखाने प्लाई-उड बनाते हैं जिनमें से दो आसाम में हैं और चाय के लिये प्लाई-उड बक्स तय्यार करते हैं। तीसरा कारखाना कलाई में कालीकट के पास है और चौथा उत्तर प्रदेश में सीतापुर में है।

हमारे देश में अब तक प्लाई-उड के धन्धे में जो मुख्य कठिनाई पड़ती रही वह यह है कि प्लाई बनाने के लिये समुचित लकड़ियों की नियमित और लगातार सप्लाई कारखानों को नहीं होती। इसलिये लकड़ी के इस उद्योग-धन्धे में दिलचस्पी रखने वालों को चाहिये कि किसी स्थान पर प्लाई-उड का कारखाना स्थापित करने से पहले वह इस बात पर अच्छा तरह विचार कर लें कि उस स्थान पर लकड़ी की अधिकतर प्राप्ति हो सकेगी या नहीं।

प्लाई-उड के एक मध्यम श्रेणी के कारखाने को चार हज़ार टन सालाना लकड़ा की आवश्यकता होती है।

"लेमिन बोर्ड", जो एक प्रकार की मोटी प्लाई-उड होती है, इस तरह बनाई जाती है कि बाहर की ओर तो सुन्दर और अच्छी लकड़ी के बारीक पर्त (Slice) लगे होते हैं और बीच में भराव के रूप में रद्दा लकड़ी के बारीक टुकड़े भर दिये जाते हैं। इस प्रकार तय्यार की हुई लकड़ी एक बहुमूल्य मोटा तख़्ता दिखाई देती है और बहुत मज़बूत और सजावटी कामों के लिये विशेष रूप से उपयुक्त होती है। भराव के लिये साधारण हलकी प्रकार की लकड़ियाँ जैसे चीड़ पाइन, स्प्रूस, फ़र, सेमल, गोकुल, मैना और किढ़िया केलिसिना इत्यादि प्रयुक्त की जाती हैं। बाहर के पर्त सागोन, रोज़उड, अण्डमान पडाक, सीसू, चिकरासी और तुन इत्यादि उत्तम और अच्छे रंग की लकड़ियों के होने चाहिये। यह पर्त प्लाई की भाँति गोलाई में चक्कर से काटे हुए नहीं होते बल्कि तख़्तों की भाँति सीधे काटे जाते हैं जिन्हें अंग्रेज़ी में Slice कहते हैं। भारत में दो स्थानों (कलकत्ता और सीतापुर)

में ऐसे बारीक पर्त काटे जाते हैं। सीतापुर में "लेमिन बोर्ड्स" बनाने का भी पूरा प्रबन्ध है। कुछ और भारतीय कारखाने भी ऐसे हैं जहाँ ये तख़्ते हाथ के शिकंजों और फ़र्मों से दबाकर तय्यार किये जाते हैं। हाल ही में लकड़ी के इस कारबार की यथेष्ट उन्नति हुई है।

(२७) रेलगाड़ियों के लिये लकड़ियाँ

रेलगाड़ियाँ बनाने में लकड़ी मज़बूत और टिकाऊ के अतिरिक्त भली प्रकार सूखी भी होनी चाहिये और वह बहुतायत से मिलने वाली हो और कम से कम ५०० टन सालाना के हिसाब से मिल सके। इस विचार से सागोन रेल की आवश्यकता की एक उत्तम लकड़ी है परन्तु इसका अधिक मूल्य होने से रेल के विभाग ने इसके स्थान पर दूसरी लकड़ियों का प्रयोग आरम्भ कर दिया है। फिर भी रेलगाड़ी के मुख्य भाग सागोन ही के बनाये जाते हैं। दूसरी लकड़ियाँ ये हैं:—

शोरिया रोबस्टा (साल)—मालगाड़ियों की मरम्मत और फ़र्श के तख़्तों में काम आती है परन्तु साल ऐंठने वाली लकड़ी है और अधिक पसन्द नहीं की जाती।

टेरोकारपस डलबरजिआइडीज़—"सैलून" गाड़ियों के अन्दर के तख़्तों और खिड़कियों में लगाई जाती है।

एडाइना कार्डिफ़ोलिया—बैठने के स्थानों और भीतर के तख़्तों के लिये ठीक रहती है।

सीडरस देवदारा—खिड़कियों के तख़्तों और अन्दर के भागों में लगती है।

डलबर्जिया लेटीफ़ोलिया—भीतर के फ़र्नीचर और फ़र्श इत्यादि के लिये और मरम्मत के काम में आती है।

एकेसिया अरेबिका—फ़र्श के तख़्तों, बैञ्च के पायों और फ्रेम के लिये उपयुक्त है।

इनके अतिरिक्त नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ रेल की कई आवश्यकताओं को पूरा करती हैं:—

सेडरेला तुना, डिप्टेरोकारपस की लकड़ियाँ, लेजरस्ट्रोमिया की लकड़ियाँ, पाइनस लांजीफ़ोलिया, पाइनस एकसेल्सा, टेरोकारपस मार्सूपियम, टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा और ज़ाइलिया की लकड़ियाँ।

इनके अतिरिक्त नीचे दी हुई लकड़ियाँ भी रेल के काम में लाई जा सकती हैं:—

पाये इत्यादि के लिये

टेरोकारपस डलबरजिओइडीज़, टेरोकारपस मैक्रोकारपस, टेरोकारपस मारसूपियम, अलबिज़िया लेबक, लेजरस्ट्रोमिया हाइपोल्यूका, लेजरस्ट्रोमिया फ़्लास रेजिनि, डिप्टेरोकारपस पाइलोसस, ग्रेविया टिलिफ़ोलिया, एनोगाइसस एक्यूमिनेटा और शोरिया आसामिका।

फ़र्श के तख़्तों के लिये

डिप्टेरोकारपस ट्यूबरकूलेटस, डिप्टेरोकारपस पाइलोसस, होपिया ओडोरेटा, होपिया पार्विफ़्लोरा और टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा।

छत के तख़्तों के लिये

लेजरस्ट्रोमिया हाइपोल्यूका, टर्मिनेलिया प्रोसेरा, फ़ोबी हेन्सियाना, लेजरस्ट्रोमिया लेन्स्योलेटा, होपिया ओडोरेटा, होपिया पार्विफ़्लोरा, मिलाइना आरबोरिया, एडाइना कार्डीफ़ोलिया और केलोफ़िलम की लकड़ियाँ।

दूसरे तख़्तों के लिये

लेजरस्ट्रोमिया हाइपोल्यूका, पाइनस एक्सेल्सा, पाइनस लांजी-

फ़ोलिया, फ़ीबी हेन्सियाना, सीड्रस देवदारा, डिप्टेरोकारपस ट्यूबरक्यूलेटस, होपिया ओडोरेटा, होपिया पार्विफ़्लोरा, लेजरस्ट्रोमिया फ़्लास रेजिनि, टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा, शोरिया आसामिका, लेजरस्ट्रोमिया लेनसिओलाटा, टर्मिनेलिया बाइलाटा और केलोफ़िलम की लकड़ियाँ।

भीतर लगाने के तख़्तों और सजावटी कामों के लिये

मिलाइना आरबोरिया, एडाइना कार्डिफ़ोलिया, अलबिज़िया लेबेक, टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा, टेरोकारपस डलबरजिआइडीज़, टेरोकारपस मैक्रोकारपस, डलबर्जिया की लकड़ियाँ, टर्मिनेलिया बाइलाटा (सिलवर ग्रे), पैन्टेसि वर्मेनिका और चुकरासिया टेबुलेरिस।

दरवाज़ों और खिड़कियों के लिये

लेजरस्ट्रोमिया हाइपोल्यूका, एकेसिया अरेबिका, मिलाइना आरबोरिया, लेजरस्ट्रोमिदा फ़्लास रेजिनि, टेरोकारपस डलबरजिआइडीज, डलबर्जिया लेटिफ़ोलिया, डलबर्जिया सिस्सू और चुकरासिया टेबुलेरिस।

(२८) रेलवे कीज़ और ब्रेक ब्लॉक्स की लकड़ियाँ

इस काम के लिये अधिक कठोर लकड़ी की आवश्यकता होती है। बबूल, कच, अंजन, बुलेट उड, इरुल, मेसुआ, तेंदू, बेल, सुन्दरी और होपिया अच्छी लकड़ियाँ हैं।

(२६) रेलवे स्लीपरों की लकड़ियाँ

भारतीय रेलवे लाइनों पर प्रतिवर्ष लगभग ४०,००,००० स्लीपर बदले जाते हैं जिनमें से साल, देवदार, टीक, पिनकैडो,

मेसुआ, इरुल और बीजासाल के स्लीपर बिना रक्षात्मक मसाले के लगाये जाते हैं।

चीड़ पाइन, ब्ल्यूपाइन (कैल), स्प्रूस, फ़र, हौलोक, हौलांग, पिंग जामुन, जुटीली, लॉरेल और किन्डल इत्यादि के स्लीपर मसाला देकर प्रयोग में लाये जाते हैं। स्लीपरों को रक्षात्मक मसाला लगाने का चलन बढ़ता जा रहा है, विशेषरूप से दक्षिणी भारत में इसके बहुत से कारख़ाने खुल गये हैं जिनसे आशा की जाती है कि और भी बहुत अल्प प्रसिद्ध लकड़ियाँ मसाला दिये जाने के बाद स्लीपरों में प्रयुक्त की जा सकेंगी। रेलवे स्लीपर की आयु क्षेत्रों और आबहवा के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। साल और पिनकैडो के स्लीपर बहुधा १६ से १८ वर्ष तक चलते हैं। देवदार के स्लीपरों की आयु १२ से १४ वर्ष और दूसरी कठोर लकड़ियों की १० से १२ वर्ष होती है।

मसाला दिये जाने के बाद हिन्दुस्तान में स्लीपरों की आयु १२ से १८ वर्ष मानी जाती है।

(३०) राइफ़लों और बन्दूकों के कुन्दों की लकड़ियाँ

इस काम के लिये सारे संसार में वालनट (अख़रोट) सबसे अच्छी लकड़ी समझी जाती है क्योंकि यह तेज़ चलने वाली मशीनों पर पूरी सफ़ाई लाती है और एक बार अच्छी तरह सुखा लेने पर अपना रूप स्थिर रखने में प्रसिद्ध है और ऋतु-परिवर्तन का इस पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है। बहुत वर्षों तक हिन्दुस्तान में इस काम के लिये केवल विलायती वालनट ही को पसन्द किया जाता था परन्तु १९१४-१८ के महायुद्ध के समय में इस बात की बहुत आवश्यकता हुई कि विलायती वालनट के स्थान पर देसी

वालनट को काम में लाया जाय। उसी समय से काश्मीर वालनट विलायती वालनट का बदल मान ली गई है। और काश्मीर वालनट भी जब काफ़ी नहीं मिलती तो दूसरे प्रान्तों की वालनट भी स्वीकृत कर ली जाती है। वालनट के स्थान पर दूसरी हिन्दुस्तानी लकड़ियों को भी राइफलों के कुन्दों के लिये प्रयोग में लाया जा चुका है। परन्तु मैपल (एमर पिक्टम) और बर्डचेरी (प्रूनस-पेडस) के अतिरिक्त और कोई लकड़ी वालनट की तुलना नहीं कर सकती।

ऐनी, बीजासाल, हल्दू, कांजू, सागोन, कोको, हार्सचेस्टनट और पुसुर इत्यादि भी कुन्दों के लिये प्रयुक्त की जा चुकी हैं। दूसरी लकड़ियों पर अभी प्रयोग हो रहे हैं।

(३१) सड़क में लगाने के लकड़ी के गुटके

इस प्रकार की सड़कों या फ़र्श का मुख्य लाभ यह है कि शोर और धमाका बहुत कम हो जाता है। दूकानों और अस्पतालों इत्यादि के समीप जहाँ हल्ला बहुत कष्टदायी हो यदि रास्तों में लकड़ी के गुटकों का फ़र्श लगा दिया जाय तो अच्छा होता है। ऐसे कुन्दे यदि छोटे-बड़े भी हों तो कोई हानि नहीं। उनको केवल ऊपर से समतल रखने की आवश्यकता है और यह कि सिवाय कुछ एक टिकाऊ लकड़ियों के और तमाम पर हमेशा रक्षात्मक मसाला लगा लेना चाहिये। पिनकैडो इस काम की बहुत अच्छी भारतीय लकड़ी है। इसके टुकड़े बम्बई और रंगून की सड़कों पर बीस बीस वर्ष तक चले हैं। सागोन भी इस काम के लिये अच्छी है। अंजन भी इसके लिये अच्छी रहती है। ज़ाइलिया ज़ाइलोकारपा भी रक्षात्मक मसाले द्वारा बम्बई की सड़कों पर सफल रही है। इसके अतिरिक्त भी भारतीय इञ्जीनियर लकड़ी के टुकड़ों से सड़क बनाने को कुछ अधिक पसन्द नहीं करते। इस देश की

गर्म और तर आबहवा में लकड़ी के पानी से गलने, सड़ने, और दीमक से नष्ट हो जाने का भय रहता है।

(३२) शटल या बुनने की नलकियों की लकड़ियाँ

इस देश के सूत, सन और ऊन तय्यार करने वाले कारखानों और कपड़ा बुनने की मिलों में अधिकतर लकड़ी की नलकियों या शटल का प्रयोग करते हैं जिससे यह चीज़ मुख्य महत्व रखती है। ये नलकियाँ या शटल अधिकतर यूरुप और जापान से मँगाये जाते हैं या लकड़ी वहाँ से मँगाकर यहाँ तय्यार कर लिये जाते हैं। प्रयोग द्वारा ज्ञात हुआ है कि कुछ हिन्दुस्तानी लकड़ियाँ भी इस काम के लिए उपयुक्त हैं। यथा—तेंदू, साँदन आदि।

"कॉरनल उड" जो अमेरिकन लकड़ी है और इस काम के लिये विशेषरूप से अच्छी समझी जाती है अँगरेज़ी फ़र्मों द्वारा हिन्दुस्तान को भेजी जाती है, परन्तु शटल की जितनी माँग है उसके ८०-९० प्रतिशत को पूरा कर सकती है। बाक़ी सप्लाई जापान से आती है जो कुछ सस्ती होती है।

इन शटलों की वार्षिक आयात ६-७ हज़ार ग्रोस की संख्या में होती है जिनका मूल्य लगभग * ८-९ लाख रुपये होता है। शटल बनाने वाली तीन छोटी-छोटी फ़ैक्ट्रियाँ बम्बई में हैं जो अधिकतर विलायती लकड़ी का प्रयोग करती हैं। परन्तु विलायती लकड़ी के कठिनाई से मिलने के कारण वे उचित देशी लकड़ी के प्रयोग करने का विचार कर रही हैं।

कई और शहरों में मामूली और सादे प्रकार के शटल हाथ से भी बनाये जाते हैं और आवश्यकता को देखते हुए सोचा जाता है कि शटल का प्रश्न ऐसा है जिस पर विशेषरूप से ध्यान देना

* अब ७०-८० लाख रुपये सालाना के लगभग होते हैं।

चाहिये। इसके लिये फ़ॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट में प्रयोग किये जा रहे हैं। नीचे लिखी हुई लकड़ियाँ शटल के लिये ठीक समझी गई हैं।

डाइसपायरस मेलानाग्ज़िलन (एबोनी) सफ़ेद लकड़ी

बक्सस सेम्परवायरन्स (बक्स-उड)

गार्डिनिया लेटीफ़ोलिया (गार्डिनिया)

सेकोपिटेलम टोमेन्टोसम

ओज़ोनिया डलबर्जिआइडीज़ (सांदन)

एकेसिया अरेबिका (बबूल)

थेसपेसिया पोपुलनिया (भेन्डी)

लैजरस्ट्रोमिया लैनसिओलाटा (बेनटीक)

मिट्रागाइना पार्विफ़ोलिया (कैम)

डलबर्जिया लेटीफ़ोलिया (रोज़उड)

डलबर्जिया सिसू (सिसू)

होपिया ग्लेबरा (होपिया और प्रोशिया इत्यादि)

(३३) खेलकूद की चीज़ों के लिये लकड़ियाँ

विभिन्न प्रकार के खेलों की चीज़ों के लिये भिन्न-भिन्न लकड़ियों की आवश्यकता होती है—

बिलियर्ड—खेलने की छड़ों के लिये यूरुप में "एश" और "मेपल" पसन्द की जाती हैं। हिन्दुस्तान में इसके स्थान पर तेंदू, धामन, पोलिएलथिया और सेकोपिटेलम टोमेन्टोसम प्रयुक्त की जाती हैं जो बहुत अच्छी रहती हैं। इनके दस्ते एबोनी, हार्डविकिया बिनेटा और डाइसाग्ज़ीलम ग्लेन्डुलोसम के बनाये जाते हैं।

क्रिकेट खेलने के बल्ले विलो (सेलिक्स एल्बा) के बनाये जाते हैं जो कि कम मात्रा में काश्मीर से मिलती है। इस कमी को पूरा करने के लिये बहुत सी लकड़ियों को प्रयोग में लाया जा चुका है परन्तु अभी तक विलो का सफल बदल केवल चीन में

पैदा होनेवाली "सेपियम सेबीफ़ेरम" की लकड़ी सिद्ध हुई है, यद्यपि यह भी पूरे तौर पर 'विलो' के गुणों को नहीं पहुँचती। सस्ते क्रिकेट बैट देसी लकड़ी इन्डियन पॉपलर के भी बनाये जाते हैं।

मछली पकड़ने की छड़ें यूरुप में पिछले दिनों तक हिन्दुस्तान से भेजे हुए "मेल बैम्बू" (डेन्ड्रोकेलेमस स्ट्रिक्टस) से बनाई जाती थीं। यह बाँस 'कलकत्ता केन्स' के नाम से भी प्रसिद्ध है परन्तु हिन्दुस्तानियों की सुस्ती और दिलचस्पी न लेने से यह व्यापार उनके हाथ से निकल गया। क्योंकि सप्लाई कम रहती थी और माल छाँटकर अच्छा न भेजा जाता था। इस प्रकार 'कलकत्ता केन्स' का स्थान चीन के "टोनकिन केन" (पेलनकोना) ने लिया जो एक मज़बूत और अच्छे दलवाला बाँस होता है, परन्तु चीन की राजनीतिक गड़बड़ ने इस चीज़ की भी नियमित सप्लाई यूरुप को न पहुँचने दी और फिर यूरुप वाले अपनी इस आवश्यकता के लिये हिन्दुस्तान की ओर झुके हैं। यदि हिन्दुस्तान अपने इस व्यापार को स्थिर रखना चाहता है तो उचित ढंग से काम करने की आवश्यकता है। माल में अच्छे-बुरे का अन्तर करके भाव को भी उसी के अनुसार रखना चाहिये जैसा कि चीन में होता है और चीन और जापान के समान बाँस को अच्छे ढंग पर उगाने में उन्नति करनी चाहिये जिससे उत्तम प्रकार के बाँस मिल सकें।

स्वयं हिन्दुस्तान में भी सस्ती क़िस्म की मछली पकड़ने की छड़ें बाँस ही की बनाई जाती हैं जिसके लिये "रिंगल" (अरन्डिनेरिया फ़लकेटा) विशेष रूप से प्रसिद्ध है। ठोस छड़ें कैरयोटा (सागोपाम) और "हैट्रोफ्रेगमा एडिनोफ़िलम" की प्रयुक्त होती हैं। इस बात के प्रयोग हो रहे हैं कि कोई देसी लकड़ी भी ऐसी हो सकती है जो छड़ों के लिये ग्रीनहार्ट (नेक्टेन्ड्रा) के समान उपयुक्त हो जो अमेरिका में इस काम की प्रसिद्ध लकड़ी है। इस समय तक देहरादून में इसके बारे में जो प्रयोग किये गये हैं उनसे

ब्लैक चुगलम (टर्मिनेलिया मनाई) और चुई (सेगेरिया इलिप्टिका) अच्छी लकड़ियाँ पाई गई हैं। चुई यद्यपि बहुत मज़बूत व विश्वास के योग्य है फिर भी ग्रीनहार्ट की सी लचक उसमें नहीं। छड़ों के निचले और बीच के हिस्सों के लिये प्रोशिया जैक्विमोन्टियाना भी अच्छी लकड़ी है।

गॉफ खेलने की लकड़ियाँ बहुधा दक्षिणी अमेरिका की "हिकरी" (हिकोरिया) की बनाई जाती हैं। 'ऐश' की उससे घटिया समझी जाती हैं। बहुत सी हिन्दुस्तानी लकड़ियों को भी इस काम के लिये जाँचा गया है जिनमें से कोई-कोई हिकरी के समान अच्छी हैं—ब्लैक चुगलम (टर्मिनेलिया मनाई), चुई (सेगेरिया इलिप्टिका), ग्रेविया, एनोगाइसिस की लकड़ियाँ और अण्डमान पिनमा (लेजरस्ट्रोमिया हाइपोलयूका) इत्यादि इस काम की मुख्य लकड़ियाँ हैं। अगले पतले भागों के लिये पिनकैडो (ज़ाइलिया डोलेबरीफ़ॉरमिस), मेसुआ (मेसुआ फ़ेरिया), बबूल (एकेसिया अरेबिका), पुसुर (करापा मोल्यू-सेन्सिस), टेमारिन्डस इन्डिका, डलबर्जिया लेटीफ़ोलिया और क्लोराग्जिलन स्विटिनिया उपयुक्त लकड़ियाँ हैं। बबूल यूरुप में और पुसुर आस्ट्रेलिया में काफ़ी प्रचलित हो चुकी हैं।

बन्दूक़ के कुन्दों के लिये प्रचलित लकड़ी वालनट (जुगलन्स-रेजिया) है और सच तो यह है कि इस काम के लिए यही लकड़ी सबसे अच्छी है। फिर भी सस्ती और साधारण बन्दूक़ों के लिये कई प्रकार की लकड़ियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं—

डलबर्जिया (शीशम), मिलाइना आरबोरिया (गमारी), लेजरस्ट्रोमिया फ़्लास रेजिनि (जारुल), मलबरी, टेक्टोना ग्रैन्डिस (टीक), आर्टोकारपस हिरसूटा (ऐनी), अलबिज़िया लेबक (कोको) और टेरोकारपस मारसूपियम (बिजासाल) विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

हाकी-स्टिक—योरुप में "ऐश" की लकड़ी की बनाई जाती हैं। हिन्दुस्तान में इसके स्थान पर मोरस एल्बा (मलबरी) काम में लाई जाती है। यह लकड़ी हाकी-स्टिक के लिये बहुत उपयुक्त है। इसके उपरांत दूसरी श्रेणी की काश्मीर की एक लकड़ी सेल्टिस आस्ट्रेलिस भी अच्छी है।

बरफ़ पर फिसलने के खेल के लिये उपयुक्त हिन्दुस्तानी लकड़ियों की खोज कई वर्षों से की जा रही है। इस खेल में अधिकतर बिलायती "ऐश" और "हिकरी" प्रयुक्त की जाती हैं परन्तु बहुत जाँच के बाद सिद्ध हुआ है कि शीशम और पक्सिलउड इसके लिये ऐश से भी उत्तम हैं।

क्रिकेट के खेल में गोल की तीन लकड़ियों (विकेट) और उनके बीच की छोटी लकड़ियों के लिये मलबरी ही प्रयुक्त होती है। परन्तु दूसरी लकड़ियाँ जैसे धामन, सेल्टिस ऑस्ट्रेलिस और पोलिएलथिया फ्रैगरेन्स भी अच्छी हैं।

टेनिस और बैडमिन्टन के बल्लों के लिये 'ऐश' सबसे अच्छी लकड़ी समझी जाती है, परन्तु उनके दस्तों (हैन्डिल) में मेपल साईकामोर, बीच और महागनी की लकड़ी लगाते हैं। परन्तु हिन्दुस्तान में ऐश के स्थान पर मलबरी और दस्तों में बर्डचेरी प्रयुक्त होती हैं। सेल्टिस आस्ट्रेलिस, शीशम, पोलिएलथिया फ्रैगरेन्स, असागी और तुन भी दस्तों में लगाई जाती हैं।

हाल ही में लकड़ी और बाँस की खपच्चियों को मिलाकर बल्लों के फ्रेम बनाये गये हैं। यह ढंग मज़बूती के विचार से केवल लकड़ी को काम में लाने की अपेक्षा अधिक लाभदायक सिद्ध हुआ है।

(३४) तम्बुओं की टेकनें और खूँटियाँ

खेमे की टेकनें बहुधा बाँस ही की बनाई जाती हैं परन्तु कुछ बड़े खेमों में लकड़ी की टेकनें भी प्रयोग की जाती हैं जिसके

लिये एक अच्छी मज़बूत लकड़ी की आवश्यकता है जैसे साल, सागोन और धामन इत्यादि। खेमों की खूँटियों के लिये भी अधिक कठोर और मज़बूत लकड़ी की जरूरत होती है जैसे बबूल, सुन्दरी, साल, सांदन, टेमारिन्ड, वेर और कुसुम।

(३५) सिगार-पाइप के लिये लकड़ियाँ

एरिका आरबोरिया की जड़ों से बढ़िया तम्बाकू पाइप बनाये जाते हैं, क्योंकि ये झाड़ी हिन्दुस्तान में पैदा नहीं होती, इसके स्थान पर कई देसी लकड़ियों की परीक्षा की गई परन्तु वह बात नहीं पैदा हुई। बर्मा पडाक और सागोन की गठीली लकड़ी इसके लिये उपयुक्त है। बर्मा में सस्ते तम्बाकू पाइप बाँस की जड़ों से भली प्रकार बनाये जाते हैं।

(३६) खरादी कामों, कंघों और खिलौनों की लकड़ियाँ

उत्तम प्रकार के खरादी और खुदाई के काम के लिये बहुत महीन रेशोंवाली लकड़ी की ज़रूरत होती है। उत्तरी भारत और काश्मीर में इस काम के लिये 'वालनट' पसन्द की जाती है। इसी प्रकार मैसूर में खुदाई के काम के लिये सन्दल की लकड़ी बहुत प्रचलित है। शीशम और आबनूस की लकड़ियाँ सारे उत्तरी भारत में खुदाई के काम में अधिकतर प्रयोग में लाई जाती हैं।

बक्सउड भी इस काम के लिये अच्छी लकड़ी है। परन्तु यह भारत में बहुत महँगी पड़ती है। इसके उपरांत निम्नलिखित लकड़ियाँ साधारण खुदाई व खरादी की आवश्यकताओं, और कंघियों और खिलौनो के लिये उपयुक्त हैं:—

हल्दू, ऐनी, जैक, सिनेमोमम, आबनूस, पिने, कैम, आलिव, पैरोशिया, रेड सेन्डर्स, गमारी, कुठान, राइटिया, बिहमेरिया और

गार्डिनिया की लकड़ियाँ, गाइरोकारपस जैकुनाई, बोहिनिया मालाबारिका और एरिथ्राइना की लकड़ियाँ मैसूर में खिलौने बनाने के लिये प्रयोग की जाती हैं। अंत में बताई हुई दो लकड़ियाँ दिखावटी फलों, बेरों, फूल-पत्तियों और जानवरों की मूर्तियाँ बनाने के लिये अच्छी हैं।

हिन्दुस्तान में कंघियाँ (जैसी सिख लोग बरतते हैं) बक्स-उड, हल्दू, एबोनी और सन्दल की लकड़ी से बनाते हैं। इससे सस्ती कंघियाँ बेल, केरीसा, क्रेटिविया रिलीजिओसा, गार्डिनिया, गमारी, राइटिया, होलरहिना एन्टीडाइसेन्ट्रिका, मिट्रागाइना, प्रेमना, लेटीफ़ोलिया और गाइरोकारपस जैकुनाई से बनाई जाती हैं।

(३७) छतरियों की डन्डियाँ और छड़ियाँ

भारत की जलवायु में छाता बहुत ही आवश्यक वस्तु है जिसके लिये लकड़ी की डन्डियाँ और हैन्डलों की अधिक आवश्यकता होती है। कलकत्ता और कालीकट दोनों शहर छातों के कारबार के मुख्य केन्द्र हैं। छातों में बहुधा पतले बाँस की डन्डियाँ लगाई जाती हैं जो पकड़ने के स्थान पर गरम करके मोड़ दी जाती हैं और इस प्रकार हैन्डल लगाने की ज़रूरत नहीं होती। अधिक मज़बूती और हैन्डल की ठीक दशा स्थिर रखने के लिये पहले बाँस के बीच में लोहे का एक तार प्राकृतिक छेद द्वारा डाल देते हैं। फिर हैन्डल को मोड़ देते हैं। इस काम के लिये डेन्ड्रोकेलेमस स्ट्रिक्टस की डन्डियाँ अच्छी रहती हैं। ज़ियूडो स्टेकियम पोलिमारफम जो आसाम की उपज है और ओक्साटेननथिरा मोनोस्टिगमा जो बम्बई में होता है और अरुन्डीनेरिया जॉनसारेनसिस और अरुन्डीनेरिया फ़ालकोनेरी, जो उत्तर प्रदेश की उपज हैं इस प्रकार की डन्डियों के लिये अच्छे और उपयुक्त बाँस समझे जाते हैं। कलकत्ते में

इस काम के लिये जो बाँस बहुधा प्रयुक्त किया जाता है उसे "वज़ाली" कहते हैं। यह चटगाँव से आता है और कदाचित् ज़ियूडोस्टेकियम पोलिमारफ़म है।

इसी प्रकार कुछ पेड़ों की लम्बी और सीधी टहनियों की लकड़ियों से भी छातों की डन्डियाँ बनाते हैं और इनको भी आग या भाप द्वारा सिरे से हैन्डल के रूप में मोड़ लिया जाता है या डंडी पर अलग बनाया हुआ हैन्डल चढ़ाते हैं जो बहुधा लकड़ी ही का होता है और कभी मसाले का भी बहुत सुन्दर ठप्पों में निकाला हुआ होता है। इस प्रकार की डन्डियाँ पेश, कोटोनीस्टर, ओलिया फ़ेरुजिनिया, डाइसपायरस, प्रूनस पद्म, रेन्डिया डूमिटोरम, क्वेरकस डिलेटाटा, स्टेफ़िलिया इमोडी और मलबरी की टहनियों से प्राप्त होती हैं। ये लकड़ियाँ हैन्डल बनाने के लिये सरलतापूर्वक मुड़ने वाली और छातों के अतिरिक्त छड़ियों के लिये भी अच्छी होती हैं।

और दूसरी लकड़ियाँ, जिनकी छड़ियाँ बनाई जा सकती हैं, ये हैं:—

क्रेटिगस क्रेनूलेटा, जेनथाग्ज़ाइलम एलाटम, फ़ेरोनिया की लकड़ियाँ, केरिओप्टेरिस वैलीशियाना, ज़िज़ीफ़स जुजूबा, टेरोस्पर्मम एसेरीफोलियम, डलवर्जिया सिसू और सेल्टिस आस्ट्रेलिस इत्यादि। अधिक सुन्दर लकड़ियाँ आबनूस, सेन्टेलम एलबम और ओलिया फ़ेरूजिनिया की बनाई जाती हैं। पाम बोरैसस फ़्लेवेलीफ़र और कोकस न्यूसीफ़िरा के बाहर के भाग की कठोर लकड़ी से भी अच्छी छड़ियाँ बनाई जाती हैं। बेंत की छड़ियों के लिये सबसे अच्छी क़िस्म, केलेमस वीमीनेलिस (रतनबेंत) है। केलेमस लेटिफ़ोलियस और केलेमस एकेन्थोस्पेथस भी छड़ियों के लिये अच्छा बेंत होता है।

परिशिष्ट

(सागोन की तुलना में दूसरी लकड़ियों की शक्ति की तालिका जिसमें सागोन की शक्ति १०० मानी गई है)

लकड़ी का नाम	वज़न	शहतीरी शक्ति	झुकाव और सहनशक्ति	खम्भे की शक्ति	चोट सहन करने की शक्ति	डीलडौल ठीक बनाये रखने की योग्यता	फटने को रोकने की शक्ति	कठोरपन
बर्मा और मालाबार टीक (सागोन)	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००
एबीज़ पिन्ड्रो (फ़र)	७५	७०	८५	८०	७५	६५	८०	६५
एकेसिया अरेबिका (बबूल)	१२०	१२०	९५	१०५	१७०	७०	१८०	१८५
एडाइना कार्डीफ़ोलिया (हल्दू)	१००	८०	८०	८०	९०	८०	११०	११०
अलविज़िया लेबक (कोको)	९५	८५	१००	९०	८५	८०	१२५	१००
अलविज़िया ओडोरेटिसिमा (काला सिरस)	१०५	११५	१२०	१२५	१४०	९०	१८०	१७५
अलविज़िया प्रोसेरा (सफ़ेद सिरस)	९५	८५	८०	८५	१४०	७५	१३०	१०५
अलर्टिंजिया एक्सेल्सा (जुटीली)	११५	१००	१०५	११०	९५	६०	१४०	१५०
एनीसौपटेरा ग्लैबरा (कांगमू)	८५	७०	७५	७०	८५	६५	९०	७०

एनोगाइसस एक्यूमिनाटा (यान)	१३०	१२०	१२०	११५	१५०	६०	१५५	१७५
एनोगाइसस लेटीफ्रोलिया (एकसिलउड)	१३५	१००	६५	८५	१६५	६५	१३५	१६५
एन्थोसिफ्रेलस कदम्बा (कदम)	७०	६५	७५	६५	८०	७५	८५	६०
आर्टोकारपस चपलाशा (चपलाश)	७५	८०	७५	८०	७५	८५	१००	६०
आर्टोकारपस हिरसूटा (ऐनी)	६०	६०	६०	६५	६०	६५	६०	६५
आर्टोकारपस इन्टेगरीफ्रोलिया (जैक)	८५	७५	७५	७५	७५	८५	१२०	११०
बिशोफ्रिया जवानिका (बिशपउड)	११०	७०	८०	७०	६५	३५	१००	६५
बाम्बेक्स इनसिगनी (सेमल)	५५	४५	५०	५०	५०	६०	४५	३५
बाम्बेक्स मालाबारीकम (सेमल)	५५	४५	४५	४५	५५	६०	५५	३५
बासवेलिया सिराटा (सलाई)	८०	५५	६०	५५	६५	६०	८५	६०
कैलोफ्रिलम की लकड़ियाँ (पून)	६५	८५	६०	८५	६०	६५	१०५	६५
केनेरियम यूफ्रिलम (ह्वाइट धूप)	६०	५०	७०	५५	५५	७०	७०	४०
केनेरियम स्ट्रिक्टम (ह्वाइट धूप)	६५	८५	१००	८५	६५	६५	१००	८५
बर्मा और मालाबार टीक (सागोन)	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००
करापा मौल्यूसेन्सिस (पुसुर)	११५	६५	६५	१००	६५	८०	१००	१३०

लकड़ी का नाम	वज़न	शहतीरी शक्ति	झुकाव और सहन-शक्ति	खम्भे की शक्ति	चोट सहन करने की शक्ति	डीलडौल ठीक बनाये रखने की योग्यता	फटने को रोकने की शक्ति	कठोरपन
केस्टानोसिस हिस्ट्रिक्स (इन्डियन चैस्टनट)	९०	७५	९०	७५	८५	५५	९०	७५
सेडरेला सिराटा (तुन)	८०	७५	८५	८५	८५	७५	११५	८०
सेडरेला तुना (तुन)	७०	५५	६५	६०	६०	६५	१००	६५
सीडरस देवदारा (देवदार)	८०	८०	८०	८५	६०	८५	९०	७०
चुकरासिया टेबुलेरिस (चिकरासी)	९५	७५	८०	७०	९०	७५	१२०	११०
सिनेमोमम की लकड़ियाँ (सिनेमन)	९५	८०	१००	८५	८५	७०	८५	७०
क्युप्रेसस टोरूलोसा (साइप्रेस)	७५	७०	८०	७५	६०	८५	६५	६०
साइनोमेट्रा पोलियान्ड्रा (पिंग)	१३०	११५	११५	११५	१५५	५५	१४०	१७५
डलबर्जिया लेटीफ्रोलिया (इन्डियन रोजउड)	१२०	९५	९०	८५	१३५	८०	१३५	१६५
डलबर्जिया सिसू (सिसू)	११५	९०	८०	८०	१४०	८०	१३५	१३०
डाइकापसिस की लकड़ियाँ (पाली, ताली)	१००	९०	१०५	९५	१०५	६०	११०	१०५
डिलीनिया इन्डिका (चालटा)	९५	८०	८०	८०	८५	५५	९५	८०

डिलीनिया पेन्टागाइना (डिलीनिया)	९०	८०	७५	७०	७३	६५	११०	९०
डाइसपायरस मेलानाग्ज़ीलन (एबोनी)	१२०	७५	७५	७५	११५	६०	११०	११५
डिप्टेरोकारपस की लकड़ियाँ (गुर्जन)	११०	९५	११५	१००	१००	५०	१०५	९०
डुआबंगा सोनेरेटीऑइडीज़ (लम्पाती)	७०	६०	७०	६५	६५	७५	७५	५०
डाइसॉग्ज़ीलम मालाबारिकम (व्हाइट सेडर)	११०	८५	९५	९०	१२०	६०	११५	९५
यूजीनिया गार्डिनेरी (जामन)	१४०	९५	११०	१००	१०५	५०	१२५	५०
यूजीनिया जम्बोलाना (जामन)	११५	९०	१००	९५	१००	६०	१३०	१२०
मिलाइना आरबोरिया (गमारी)	७५	५५	६०	५५	६५	८५	९०	७०
ग्रेविया टिलिफ़ोलिया (धामन)	११५	११०	१२५	१२५	१४५	६०	१३०	१५५
हार्डविकिया विनैटा (अंजन)	१२५	७५	६०	७०	१२५	९०	१४५	१८०
हार्डविकिया पिनैटा (पिने)	९०	८०	९०	८५	९०	६५	१००	८५
हेरिटाइरा माइनर (सुन्दरी)	१५०	११०	१३०	११०	१३०	४५	१५०	१७५
होलोपटेलिया इन्टिग्रीफ़ोलिया (कांजू)	८५	६५	६५	६५	१००	८०	९५	८०
होपिया ओडोरेटा (थिंगन)	११०	१००	१००	९५	१००	७५	११०	१३०
होपिया पार्विफ़्लोरा (होपिया)	१३५	१२०	१२०	१२०	१३०	६५	१५५	२००

लकड़ी का नाम	वज़न	शहतीरी शक्ति	झुकाव और सहनशक्ति	खम्भे की शक्ति	चोट सहन करने की शक्ति	डीलडौलठीक बनाये रखने की योग्यता	फटने को रोकने की शक्ति	कठोरपन
बर्मा और मालाबार टीक (सागोन)	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००
हाइमिनोडिक्टयन एक्सेल्सम (कुठान)	७०	५०	५५	५०	५५	७५	७५	५०
जुगलन्स फेलेक्स (वालनट)	८०	७५	८०	७०	६५	७०	६५	६५
लेजरस्ट्रोमिया फ्लास रेजिनि (जारूल)	६५	८०	८५	७५	८५	६५	१००	१०५
लेजरस्ट्रोमिया लैनसिओलाटा (बेनटीक)	१००	९०	१००	९०	१०५	६५	१०५	१०५
लेजरस्ट्रोमिया पार्विफ्लोरा (लेन्डी)	१०५	९०	१००	९०	१२०	६०	१३५	११०
लैनिया ग्रैन्डिस (कींगन)	८०	५५	५०	५०	१७५	८५	८०	७०
मैंजीफ्रीरा इन्डिका (मैंगो), आम	६५	७५	८०	७५	१००	६५	१०५	९०
मेसुआ फ्रेरिया (मेसुआ)	१४०	१४५	१५०	१५०	१६०	५५	१४५	२१५
माइकीलिया चम्पाका (चम्प)	७०	७०	७५	७०	७५	६०	८५	६५
माइकीलिया एक्सलसा (मीठा-चम्प)	७५	७५	९०	८०	७५	६५	६५	६०
मिट्रागाइना पार्विफ्रोलिया (केम)	६५	७५	७०	७५	६५	६५	११०	१००

मोरस एल्बा (मलबरी)	१००	८५	८५	८०	१३५	६५	१४५	१२५
फ्रीलीनिया इलवरजिओॉइडीज़ (सांदन)	१२०	८०	७५	८०	१२०	६०	१४०	१४५
फ्रीवी हैम्सियाना (बोनसम)	८०	८०	८०	८०	८०	७५	६५	७०
पीसिया मोरिन्डा (स्प्रूस)	६५	६०	७५	७५	५५	७०	७०	५५
पाइनस एक्सल्सा (वल्यू पाइन)	७५	५५	६०	६०	५५	७५	६५	४०
पाइनस लाजिंफ़ोलिया (चीड़)	८५	७०	८५	७५	८०	६५	८०	६०
टेरोकारपसडलबरजिओॉइडीज़(अंडमनपडाक)	१०५	१००	१०५	१०५	१०[illegible]	१०५	११५	१३०
टेरोकारपस मारसूपियम (बीजासाल)	११५	१०५	६५	६५	१३५	७५	११५	१३५
शीमा वैलीशाई (चिलौनी)	१००	८०	६५	८०	६०	५०	१२५	८५
शिलीशिरा ट्राइजुगा (कुसुम)	१६०	१३५	१४०	१५०	१५५	५०	१८५	२६०
शोरिया आसामिका (मकाई)	८०	६५	८०	७५	७५	६५	११०	७५
शोरिया रोबस्टा (साल)	१३०	१२०	१२५	११५	१४५	५५	१४५	६०
स्टरक्यूलिया कम्पेन्यूलेटा (पपीता)	४५	४५	५०	४५	४०	८०	६५	२५
स्विनटोनिया फ्लोरीबन्डा (सिविट)	६५	७२	६५	८०	८०	७५	११०	७०
टेक्टोना ग्रेन्डिस (सेन्ट्रल इन्डिया टीक)	६०	८०	८०	८०	८५	१०५	१००	८५

लकड़ी का नाम	वज़न	शहतीरी शक्ति	झुकाव और सहन-शक्ति	खम्भे की शक्ति	चोट सहन करने की शक्ति	डीलडौल ठीक बनाये रखने की योग्यता	फटने को रोकने की शक्ति	कठोरपन
बर्मा और मालाबार टीक (सगोन)	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००	१००
टेक्टोना ग्रेन्डिस (मालाबार टीक)	१००	९०	९५	९५	८५	८५	११०	१०५
टर्मिनेलिया अर्जुना (अर्जुन)	११५	७५	१७०	७०	१३५	६५	१४०	१३५
टर्मिनेलिया बेलेरिका (बहेड़ा)	११५	१००	११५	१०५	११०	६५	१२०	११५
टर्मिनेलिया बायलाटा (सफ़ेद चुगलम)	१००	९७	७५	९५	[illegible]	६५	११०	१००
टर्मिनेलिया मिरिओकारपा (हौलक)	९०	७५	६५	७५	८०	८०	१०५	८०
टर्मिनेलिया पैनिक्यूलेटा (किंडल)	११५	९०	१०५	९५	१००	६०	११०	१२०
टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा (लारेल)	१३०	९५	१००	९०	१२०	६५	१२०	१५५
वेटीरिया इन्डिका (वेलापाइनी)	८५	७५	१००	८५	६५	५०	८०	६०
ज़ाइलिया ज़ाइलोकारपा (इरुल)	१२५	१००	१०५	१०५	९०	६५	१२५	१३५

नोट—ऊपर बताई हुई लकड़ियों के अतिरिक्त और जिन लकड़ियों की शक्ति के बारे में सूचना प्राप्त करनी हो तो उसके लिये आफ़ीसर इन्चार्ज टी. एम. ब्रांच फ़ारेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट देहरादून को लिखना चाहिये।

समाप्त